

श्री

श्री आचार्यकुन्दकुन्दाय नमः

यति-प्रतिक्रमण

[हिन्दी अनुवाद सहित]



हिन्दी-अनुवादक

श्री पं० पन्नालाल जी सोनी सिद्धान्तकुन्दाय

ज्यावर



श्री ब्र० नत्थोदेवी जन

डिप्टीमन, देहला के प्रदत्त इन्स्टीट्यूट

प्रकाशित



प्रकाशिका—

शान्तिमागर जैन सिद्धान्तकुन्दाय

शांतिवीर नगर, श्रीमहावीर नगर, गुजरात

प्रथम संस्करण) गोर १९५३ (१९५३)

१०००) विक्रम सं० २०१० (२०१०)

प्राप्ति-स्थान

डा० कलाशचन्द्र जन

राजा टायज, -कम्पनी

दिल्लीगत दफ्ती-६



मुद्रक- अजितकुमार शास्त्री
शान्तिसागर जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी सस्था
शान्तिवीर नगर, श्री महावीर जी

आद्य वक्तव्य

आत्माको शुद्ध बनानेके लिये जहां निर्भन्ध मुनि-चर्या परम आवश्यक है वहां उस मुनिचर्या को निर्दोष रखने केलिये प्रतिदिन 'प्रतिक्रमण' करना भी बहुत आवश्यक है। इसी कारण मुनियोंके प्रतिदिन के छह आवश्यक कर्मों में प्रतिक्रमण भी एक आवश्यक कर्म है।

उस प्रतिक्रमण के लिये सिद्ध भक्ति, चारित्र्य भक्ति आदि दश भक्तियोंका यथावसर पाठ किया जाता है। यह भक्ति-पाठ प्राकृत संस्कृत भाषामें है, अतः जो मुनिगण संस्कृत प्राकृत भाषाके अभ्यासी नहीं हैं उनको इस भक्ति पाठ का अभिप्राय समझने में कठिनाई होती है। उस कठिनाई को दूर करने के लिये यह हिन्दी अनुवाद सहित भक्तिपाठ प्रकाशित किया जा रहा है।

प्राकृत संस्कृत भाषाके गणनीय विद्वान् स्व० श्री प० पन्नालालजी सोनी ने इन प्राकृत संस्कृत भक्तियोंका हिन्दी अनुवाद किया है। आशा है पूज्य मुनिज तथा अन्य पाठक यतिप्रतिक्रमण का भाव बोध प्राप्त करने के लिये इस ग्रन्थसे लाभ उठावेंगे।

—२० सूत्रमय सङ्कितासुरि



धन्यवाद

श्री प्र० तथादेवा देहली एक सञ्चारित्रनिष्ठ महिला हैं। आप का स्व० ला० छुनामल जी की धर्मपत्नी हैं। श्री मेठ मुन्तरलाल की घाड़ी बाले आपके सुपुत्र हैं। आपने टिप्टीगज दिल्लीमें आण्डोना एक अच्छा अस्पताल स्थापित किया हुआ है, निमसे हजारों रागी लाभ उठाते हैं। इसके संचालन में आप हजारों रुपये मासिक खर्च किया करते हैं।

श्री नत्थोदेवा जी अच्छी गुरुमत्त महिला हैं, सदा गुरुवन्दना मन्वा मुनियों की आठारदान करने में तत्पर रहती हैं। इस वर्ष वीटा में पूज्य श्री १०८ आचार्य शिवसागर जी महाराज का चातुर्मास हुआ उस समय श्री नत्थोदेवा जी धर्म लाभ लेनेके लिये वीटामें पधारें और बहुत दिनों तक आचार्य महाराज का उपदेश श्रवण करती रहीं।

आपने आचार्य श्री को आठार दान किया उसके उपलक्षमें आपने हिन्दी टीका सहित प्रस्तुत ग्रन्थ यतिप्रतिक्रमण प्रकाशित करानेके लिये ११००) एक हजार एकसौ रुपये प्रदान किये हैं। इसके लिय आपका धन्यवाद है।

—प्र० लाडमल जी





यति—प्रतिक्रमण

मूल और भाषा

स्व० प० पन्नालाल जी मानी द्वारा अनुवादित
 देवनिक—रात्रिक यतिप्रतिक्रमण विधि आरम्भ
 जीवे प्रमादजनित प्रचुरा प्रदाया,
 यस्मात् प्रतिक्रमणत प्रलय प्रयाति ।
 तस्मात्तदर्थमसल मुनिवाचनार्थं,
 वक्ष्ये विचित्रभवकर्मविशोपनाथं ॥ १ ॥ॐ

अथ—वीर म प्रमाद से जनित अनक दाप पाप इत्यादि,
 अ प्रतिक्रमण करन से प्रलय का प्राप्त होत है इत्यादि—
 भवों में सचित हुए कमरूप तपों का विशुद्धि इत्यादि—
 क अवबोधनाथ प्रतिक्रमण का निमल अर्थ इत्यादि ॥ १ ॥

ॐ—यह टाकाकार वृत्त मगलाचरण है, यह म—
 पुस्तक की आदि म पाया जाता है इत्यादि—
 मगलाचरण के रूप में हा हमने मा य—

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया मायाविना लोभिना ।
 रागद्वेषमलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निमित्तम् ॥
 श्रीलोक्याधिपते जिनेन्द्र भवत श्रीपादमूलेऽधुना ।
 निन्दापूर्वमह जहामि सतत वचतिषु सर्पये ॥ २ ॥

अथ—इ तान लोक क अधिपति जिनन्द्र ! अत्यन्त पापी,
 दुरात्मा, जड बुद्धि मायावा, लोभा और राग-द्वेष से मली-
 मम मन मन ने जो दुष्कर्म उपाजन किया है उसका, निरंतर
 समाग म चलन का इच्छा रखता हुआ आज मैं आपके
 शरणमूल म अपना निन्दापूर्वक त्याग करता हू ॥ २ ॥

सन्मामि मन्वजीयाण सव्वे जीवा खमतु मे ।
 मित्तो मे मन्वभूदेसु वैर मज्झ ण वेण वि ॥ ३ ॥

अथ—मैं सब जीवों से क्षमा की याचना करता हू, सब
 जीव मुझे क्षमा प्रदान करें, मेरा सब जीवों म मैत्री भाव है,
 किता क भा साथ मेरा वैरभाव नहीं है ॥ ३ ॥

रागवध पदोस च हरिस दीणभावय ।

उत्सुगत्त भय सोग रदिमरदि च वोस्सरे ॥ ४ ॥

अथ—मैं राग द्वेष हय, दीनिभाव, उत्सुकता भय, शोक,
 रति और अरति इन सबका त्याग करता हू ॥ ४ ॥

हा दुट्ट कय हा दुट्टचितय भासिय च हा दुट्ट ।

अ तो अ तो डज्जमि पच्छुत्तावेण वेदतो ॥ ५ ॥

अथ—हा । मैंन काय स काइ दुष्ट काय किया हो, हा ।
मैंन मन से कोइ दुष्ट चिंतन किया हो, और हा । मैंन मुझ से
कोइ दुष्ट यचन बोला हो उसका मैं पुरा मममना हुआ परचा
त्ताप पूर्वक मन हा मन जल रहा हूँ ॥ ५ ॥

दब्धे सेत्ते काल भावे य वदावराहसोहणम् ।

गिंदण गरहण जुत्तो मण वच कायेण पडिकमणम् । ६

अथ—आहार-शरीर आदि द्रव्य, वसतिका शयन आदि
मार्ग रूप क्षेत्र, पूजाएह मध्याह्न अपराह्न दिवस रात्रि पक्ष मास
मवत्सर अतीत अनागत वर्तमान आदि काल और सकल्प त्रिकल्प
रूप छोटे चित्त व्यापार से किये गये अपराधोंका, निन्दा गहा से
युक्त होकर शुद्ध मन प्रचन और काय से शासन करना प्रति
क्रमण है ॥ ६ ॥

एइ दिया, वेइदिया त इ दिया चतुरिंदिया पचिदिया,
पुढविकाइण अप्वाइया तेउकाइया वाउकाइया वणप्फ-
दिकाइया तसकाइया एदेसि उदावण परिदावण
विराहण उवघादो वदा वा कारिदो वा कीरतो वा सम-
णुमण्णिदो तस्त मिच्छा मे दुक्कड ॥ ७ ॥

अर्थ—गण्देन्द्रिय, द्वान्द्विय, त्रान्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पचेन्द्रिय,
पृथ्वीकायिक, अष्कायिक तजस्कायिक, वायुकायिक, वनस्पति
कायिक और तप्तकायिक इन सब इन्द्रिय और वायिक जीवा
का उत्तापन परितापन विराधन और उपघात मैंने स्वयं किया

हा, थीरा स करया हा एव ५२त ह्य दूसरा वा अनुमोदना
का हो उमका मरा लृत मिथ्या हा ।

बदसमिदिदियरायो लाचो आवासयमोलमण्हाण ।

सिदिसयणमदतवग ठिदिभोयणमेयभक्त च ॥

एदे खलु मूलगुणा समण।ण जिणवरेहि ५ण्णत्ता ।

एत्य पमादकदादो अइचारादो णियत्तो ह ॥८॥

श्रेयोवद्गुण होदु मज्झ ।

अथ-व्रत, समिति, इन्द्रियनिरोध, लोच, आयरयक,
अचेत (वस्त्र त्याग) स्नान त्याग, चित्तिशयन, अदत्तघन,
स्थितिभाजन, और एक भक्त य भ्रमणा-मुनिया के मूलगुण
(प्रधान-आचरण) है जो सभी चित्तों के द्वारा सब प्रथम
कहे गये हैं उनमें प्रमाणवश किये गये अतिचार (क्षप अपराध)
से निवृत्त होता हू । मेरे पुन श्रेयोपस्थापना हो ।

पचमहाव्रत-पचममिति-पचेन्द्रियरोध-लोच-पडावश्यक
क्रियाअष्टाविंशति-मूलगुणा , उत्तमक्षमामादनाज-
वशीचसत्यसयमतपस्त्यागाकिंच-यव्रह्मत्रयाण दशला-
क्षणिःको धर्म अष्टादशशीलसहस्राणि, चतुरशीतिल-
क्षगुणा , त्रयोदशविध चारित्र, द्वादशविध तपश्चेति
सकल सम्पूर्ण अहस्सिद्धाचार्योपाध्यायसवसाधुसाक्षि-
सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रत सुव्रत समासुद्ध ते मे भवतु ।

अथ-पाच महाप्रत, पाच ममिति, पाच इन्द्रियनिरोध, लोष
 दृढ आवश्यक क्रियाय इयाति अट्टाईस मूलगुण उत्तमघमा
 उत्तम भार्दय उत्तम प्राणय उत्तमशौच उत्तम सत्य उत्तम समय
 उत्तमतप उत्तम त्याग उत्तम प्राक्किचन्य और उत्तम मद्गारय
 यह दशलानणिन्धर्म अठारह हजार शाल धौरासा लाखगुण,
 तरह प्रकार चारित्र वारह प्रनार नप ये मव परिपूर्ण उत्तम
 प्रत अहंत सिद्ध आचाय उपाध्याय और साधु इन पांच का
 साक्षा म मन्व्यक्त्यपूरक दृढप्रत गुण और मेर म समाकृद् हो
 समाकृद् हो समाकृद् ॥ ।

सिद्धभक्ति मन्त्रन्धा कायोत्सर्गकी प्रतिज्ञा

अथ मयातिचारि-शुद्धयर्थे रात्रिप्रान्तमणक्रियायां
 कृतदोषनिवारणाय पूर्वाचार्यानुक्रमण सकलकर्म-
 क्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवमेत आलोचनासिद्धभ-
 क्तिव योत्सर्ग वरोभ्यहम्-

अथ दैवमित्र (रात्रि) प्रतिप्रमणक्रिया में अब दापा का
 विशुद्धि के निमित्त किया हुआ दापा के निराकरणाय सकल कर्म
 क इय के लिए, पूर्वाचार्य के अनुक्रम के अनुसार भावपूजा
 वन्दनास्तव महित आलाचनायुक्त सिद्धभक्ति मन्त्रन्धा कायोत्सर्ग
 में करता ॥ ।

(अपराह म त्रिस सन्त्रन्धा प्रतिप्रमण में दैवसिद्ध शम्भु
 का प्रयाग करें) इति प्रतिज्ञाप्य

एगो अरहताणमित्यादि सामायिकदडक पठित्वा
कायोत्सर्ग कुर्यात् ।

योस्सामीत्यादि (चतुर्विंशतिस्तव पठेत्)

एग प्रकार प्रतिज्ञापन कर एगो अरहंतार्थ इत्यादि सामायिक
दडक पठकर सत्ताइस उच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करे, परचात्
“योस्सामि” इ यादि चतुर्विंशतिस्तव पठे

फिर मुख्य भगल पठे

श्रीमते वधमानाय नमो नमितविद्विषे ।

यज्ज्ञानात्तगत भूया तलोक्य गोष्पदायते । १ ।

जिाव अनन्त ज्ञानादि अंतरंग विभूति और सगणशरण्य
बहिरंग विभूति विद्यमान है जिनान उपसर्ग करन वाले सगम
देव आदि शत्रुआका मिग अपन चरणां स मुखाया है एम
अतिम ताथकर भगवान वधमान जिनद्र था नमस्कार हा ।
जिनके ज्ञानम ताज लोक गोष्पद के समान भजकता है ॥ १ ॥

सिद्ध भक्ति

तवसिद्धे एगसिद्धे सजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।

एगणम्मि दसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमसामि । २ ।

तप स सिद्ध, नयस सिद्ध समयम स सिद्ध चारिण से सिद्ध
ज्ञानमें सिद्ध और ध्यान मसिद्ध हुएणस सब सिद्धों को मैं शिर
मुकाकर नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥

अचलिका

इच्छामि भते । सिद्धभक्तिकाश्रोसगो वश्रो तस्सा
लोचेउ , सम्मणारणसम्मदसणसम्मचरित्तजुत्ताण,
अट्टविहकम्ममुक्काण अट्ठगुणसपण्णाण, उड्ढलोय-
मत्थयम्मि पयिट्ठियाण, तवसिद्धाण, एयसिद्धाण,
सजमसिद्धाण, चरित्तमिद्धाण, अतीदाग्गागदवट्टमा-
णकालत्तायसिद्धाण, मव्वसिद्धाण, एिच्चकाल, अ चेम
पूजेमि, वदामि, एगसामि, दुक्खवव्वश्रो कम्मवव्वश्रो,
वोहिलाहो, सुगईगमण, समाहिमरण जिग्गुण मम्पत्ति
होउ मज्झ ।

हे भगवान् ! मैंने सिद्ध-भक्ति सम्बन्धा कायोत्सग किया
ससकी आलाचना करन का इच्छा करता हू । जो सम्यग्ज्ञान,
सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्र स युक्त हैं आठ प्रकार के फलों से
युक्त हैं आठ गुणों से मम्पन्न हैं उच्च लोफ के मस्तक पर प्रति
ष्ठित हैं, तप सिद्ध हैं नयसिद्ध हैं, मयम सिद्ध हैं, चारित्र सिद्ध हैं,
सम्यग्ज्ञान सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्र से सिद्ध हैं, अतीत,
अनागत और वतमान इन ताना काला में सिद्ध हूँ एस सब
सिद्धों का निरत्यकाल अवा करता हू पूना करता हू वन्दना
करता हू नमस्कार करता हू । मेरे दु खोंका क्षय हा, कर्मों
का क्षय हो, बोध रत्नत्रय का लाभ हो, सुगति म गमन हा,
समाप्ति मरण हो और विने द्र के गुणां का सम्यक् प्राप्ति हो ।

श्रालोचना

इच्छामि भते । चरित्तायारो तेरसनिहो पारवि-
 हाविदो, पचमहव्वदाणि पचममिदीमा तिगुत्तीओ
 चेदि । तत्थ पढम महव्वद पाणादिवादादो नेरमण से
 पुढाविकाइया जीवा असखेज्जासखेज्जा, आउवाइया जीवा
 असखेज्जासखेज्जा, तेउवाइया जीवा असखेज्जासखेज्जा
 वाउफाइया जीवा असखेज्जासखेज्जा वणप्फदिकाईया
 जीवा अणत्ताणता हारया वीआ जट्टरा छिण्णा
 भिण्णा, तेसि उद्दावण परिदाणण विराहण उवघादो
 कदो वा वारिदा या कीरता वा समणुमणियो तस्स
 मिच्छा मे दुक्कड ॥ १ ॥

ह भगवान् ! पाव महात्त पाव समिति ओर तीन गुणि
 इस प्रकार तेरह प्रकार का चारित्र है उसका मेरा प्रमाण वश
 परिहापन (खडन) किया हो उसका श्रालोचना-विशुद्धि
 करना चाहता हूँ । उस तेरह प्रकार के चारित्र में पहला
 महात्त प्राणो के व्यतिपात में रहित है । उसमें मेरे
 असत्यातासत्यात प्रथमा कायिक जीव असत्यातासं
 त्यात अष्ठाधिक जीव, असत्यातामत्तात तजसायिक
 जीव अस्संस्थातासत्यात दायुकायिक जीव अतन्तान्त
 धनम्पनिकायिक जीव तथा हरित (सचित्त) मान अक्षुर
 दोद भेद, उनका उत्थापन परितापन विराहण और उपघात

किया है, फराया है और फरन वाले की अनुमादना की है
 समवा मेरा दुःखित मिथ्या होय ॥ १ ॥ ७

वेददिया जीवा असखेज्जासखेज्जा कुविसरिमि
 सग्न मूल्लुय वराटय-त्रकमरिट्ठवाल सबुक्क-मिप्पि
 पुलविनाइया तेमि उदावण परिदावण विराहण उव
 घादो कदो वा कारिदा वा कोरतो वा ममणुमणिदो
 तम्म मिच्छा मे दुक्कट ॥ ७ ॥

पुत्ति कृमि (लट) शंख गुन्तर वराटक ऋत्त अरिष्ट
 धाल मवूक, माप पुत्रिफ इत्यादि असख्यातामख्यात
 सख्या प्रमाण वा द्वान्द्रिय जीव ह उनवा उतापा परितापा
 त्रिगघन और उपगत मने क्रिया वा उतापा हा और फरन
 धाल वा अनुमादना वा हा असता सग्न दुःखित मिथ्या हा ॥ १ ॥ ७

तेडदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा कुवु-देहिय-
 विट्टियगोभिण-गोजुव-मक्कण-पिपीनियाइया, तमि
 उदावण परिदावण विराहण उवघादा कदो वा कारिदा
 वा कोरतो वा ममणुमणिदो तम्म मिच्छा मे दुक्कट ३

कुन्थु "हि" विन्दु गानि गोजा, क्कमल पिपालिका
 इत्यादि असख्यातामख्यात मख्या प्रमाण वा त्त्रिय जीव हैं
 उनवा उतापन, परितापन, त्रिगघन और उपघान मने क्रिया
 ७-पुत्रा य ऋग्मगणा तायु रणक्कदि सत्तिना धाया ।

दांत खलु मोहफल फाम बहुरगा वि त तसि ॥ ११० ॥

७-सबुक्क-माहुयाहा सखा सप्पा अपादगा य तिसा ।

जाणति रम फासं जे ते वे इत्थिया ताना ॥ ११४ ॥

हो, कराया हो और करन वाले का अनुमोदना की हो उसका मेरा दुष्कृत मिथ्या हो ॥ ३ ॥ ❀

चउरिदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा दसमसयम-
क्सपयगकीड-भमर-महुसर-गोमच्छिवाइया, तेसि
उदावण परिदावण विराहण उवघादो कदो वा कारिदो
वा कीरतो वा समणु मण्णियो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ४

दश मशक, भक्खा पतंग फीडा, भौरा, मधुकर, गोम-
क्षिका इत्यादि अमर्यातामर्यात सरया प्रमाण जो चौ इन्द्रिय
ज्ञान हैं उनका उत्तापन परितापन, विराग्न और उपघात
में किया हो, कराया हो और करन वाले का अनुमोदना की
हो उसका मेरा दुष्कृत मिथ्या हो ॥ ४ ॥ ❀

पचिदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा शडाइया
पोनाइया जराइया रसाइया ससेदिमा सम्मुच्छिमा
उब्भेदिमा उववादिमा अनि चउरासीदिजोणपमुहस
दसहस्सेसु, एदसि उद्दावण परिदावण विराहण उवघादो
कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणु मण्णियो तस्स
मिच्छा मे दुक्कड ॥ ५ ॥

❀-जृगा कु भौ मवशुण पिपालिका विद्वान्धिया वाडा ।

जाणति रस फास गध तद्धिन्द्रिया जीना ॥ ११५ ॥

❂-उद्दसमसय मन्त्रिय मधुसर भमरा पतंगमादीया ।

रूपं रस च गधं फास पुण ते वि जाणति ॥ ११६ ॥

यासु, अट्ठारस मालसहस्त्रेसु चउरासोदिगुण सयसहस्त्रेसु,
 वारमण्ट मजमाण, वारसण्ह तयाण, वारसण्ह अङ्गाण
 चोदसण्ह पुब्बाण, दसण्ट मुटाण दसण्ट समणव-
 म्माण, दसण्ह वम्मजभाणाण एवण्हवभवेरगुत्ताण,
 एवण्ह एाकसायाण, सोलसण्ह रसायाण अट्ठण्ह-
 वम्माण अट्ठण्ह पययणमाउयाण, अट्ठण्ह मुद्धीण,
 सत्ताण्ह भयाण, मर्यावित्त ससायाण, छण्ह जीव-
 णिकायाण छण्ह अयासयाण, पचण्ह इदियाण
 पण्ह महव्वयाण पचण्ह समीदाण पचण्ह
 चरित्ताण चउण्ह सण्णाण, चउण्ह पच्चयाण,
 चउण्ह उवसग्गाण, मूलगुणाण, उत्तरगुणाण
 दिट्ठिय ए पुाटठ्याए पदोसियाए परदावणियाए, से
 वाहिएण वा माणिएण वा भाएण वा चाहेण वा राणेण
 वा दोसेण वा माहेण वा हस्सण वा भएण वा पदो
 सेण वा पमादण वा विम्भेण वा पिवासेण वा लज्जेण
 वा भारवेण वा एदेसि अच्चासणदाए तिण्ह दण्डाण
 तिण्ह लेस्साण तिण्ह गारवाण, दाण्ह अट्ठरद्वसकि
 लेसपरिणामाण, तिण्ह अप्पसत्थसक्किलस परिणामाण
 मिच्छणारा मिच्छादसणा । च्छात्रि ताण पिच्छत्तपाउग

असमम पाउग - गाम पाउग, गोगपाउग, प्रपाउग-
 तवगदाए, पाउगगह तदाए, इत्य म जो जोई
 (देवताया) गउगा आणमा वणियामो प्रहचारे
 अणाचारा आभोगा अगाभातो । तम्म नत । पडि-
 नकमामि, मए पडिवरा तम्म मे मम्मत्तमरण गमाहि-
 मरण, पटियमरण वीरियमरण दुवत्तवत्तओ वम्मत्तवत्तओ
 बोहिवाहो सुगईगमण समाहिमरण जिगगुग्गमम्पत्ति
 होउ मज्झ ॥ २ ॥

ह भगवान् प्रथम समिति गुप्ति आदि में प्रमाणादि वश तो
 काइ नैयमिक (रात्रिक) रूप लगे हैं उनका आलाचना विगुद्धि
 करना चाहता है ।

पाप महाप्रत है उनमें परमा महाप्रत प्राणा क अ्यपरापणसे
 रहित है दृमरा महाप्रत म्पायात्त व रहित है तासरा महाप्रत
 अत्तायात्त म रहित है चौथा महाप्रत मै तुन म रहित है पाचरा
 महाप्रत परिग्रह स रहित है तथा छट्टा अणुप्रत गति भोगा से
 विगृहित है । इथानमिति भाषा समिति ण्यगा समिति आदात्त
 निक्षेपण ममिति और उच्चार दस्रवणद्वयल सिंहात्तव विवृति
 प्रतिष्ठापन समिति य पाप समिति (मन्व्यक्प्रवृत्ति) है तथा
 मनगुप्ति वत्त गुप्ति और वायगुप्ति य तीन गुप्ति है । तथा ३-
 ज्ञान अशन चारित्र्य वाइस परापह पन्चीस भावना पन्चीस क्रिया,
 अठारह हतार शाल, चौरासा लाख गुण वारह सयम, वारह तप
 वारह अंग, चौदह पूर्व, दशमु ड, अश अमण्यम, दश धर्मध्यान, नव

ब्रह्मचर्य गुप्ति, तथा नत्र नाकपाय, सोलह कपाय, आठ कर्म आठ
 प्रवचन-मातृका आठ शुद्धि सात भय, मत्तविध ससार, छह
 जात्रनिकाय, छह आवश्यक, पाच इन्द्रिय, पाच महात्रत पाच
 सभिति, पाच चारित्र चार सज्ञा, चार प्रत्यय, चार उपसर्ग,
 मूल गुण, उत्तरगुण, तान दंड, तान लेश्या ताग गारव, दो
 आर्त् राद्र रूप सकलेश परिणाम, तान अप्रशस्त सकलेश परि
 णाम, भिष्वादेशन, भिष्वाक्षान भिष्वा चारित्र, असवमप्रायोग्य,
 कपाय प्रायोग्य, योग्य प्रायाग्य, अप्रायोग्य सवन्ता, प्रायोः
 महणता इन सब विधि प्रतिपधरूप यतियोंक आचरणोंमें दृष्टि
 क्रिया, प्रष्टिक्रिया प्रादोपिकी क्रिया और परतापनिकी क्रिया से
 तथा जो कोई दोष लगा है तथा क्रोध, मान माया, लाभ राग
 द्वेष माह, हास्य, भय, प्रत्येप, प्रमाण, प्रेम, विवास, लज्जा और
 गौरव स इग म जा अत्यासनाता (अवहला) हुई है। उनमें जो
 कोई दैवसिक (रात्रिक) अतिक्रम, व्यतिक्रम, अनिचार अनाचार
 आभोग अनाभाग दोष लगे हैं उन सबका हे भगवान् । प्रति-
 क्रमण करता हूँ—उन सब में लगे अतिक्रमणादि दोषों को
 दूर करता हूँ। इस प्रकार अतिक्रमणादि दोष मेंने दूर किये
 उनका शासन किया। उस मरे लोप शोधन करने वाले का सम्य
 ऋत्वयुक्त मरण, समाधिमरण पविट्टनमरण, दीर्यमरण हांचे
 दुःख का क्षय, कर्मा का क्षय बोधि—रत्नत्रय वा लाभ, सुगतिमें
 गमन, और चित्त के गुणा का संप्राप्ति मरे हाव । ७

उपर्युक्त दंडक में आए व्रतों का स्पष्ट विवरण

(कृपया क्रम से मिलाकर पढ़िए)

१—पाचक्षात्र मतिआदि २—तीनदशान श्रीपराभिक आदि
 ३—पाच चारित्र सामाधिक आदि ४ चुधाआदि ५—वाङ्—मना
 गुप्ति आदि ६—मम्यक्त्य मविना क्रिया का अनुष्ठान, मिथ्यात्व
 क्रिया आदि चौवाम क्रियाओं का अनुष्ठान ७—८ परमागममं
 प्रमिद्ध ९—१०—११—१२ प्रमिद्ध १३ पांच इन्द्रियमु ढ, वचनमु ढ
 हस्तमु ढ पैरमु ढ शरारमु ढ मनमु ढ इन दश का निरोधन १४
 उत्तमक्षमा आदि १५—अपायविचय, ल्पाय विचय रिपाक
 विचय, विराग विचय होक विचय—मव विचय, जीय विचय
 आशा विचय, मस्थानाविचय, श्रीर ससारविचय १६—तियचम्री
 मनुष्यस्त्री और देवस्त्री (निवागना) इन तान मन वचन और काय
 से असेवन अथवा स्त्रीसामान्य क, मन वचनकाय से और कृत
 कारित अनुभोत्ना विशेष में असेवन । १७—१८ इहें उत्पन्न
 न होने देना, उत्पन्न होने पर आलोचना करना १९
 क्रोधान्बिषा उपाचन करन पर आलोचना करना २०
 पांच समिति तान गुप्ति इन आठ का अनुष्ठान न करे तो
 आलोचन करे २१ मनशुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि, भिचाशुद्धि
 श्याशुद्धि, उत्सगशुद्धि शयनासनशुद्धि और विनयशुद्धि इन आठ
 शुद्धियों का मुनि प्रतिदिन अनुष्ठान करे न करे ता आलोचना
 करे २२ इह-परलाफ भाषादि इनका प्रतिदिन त्याग करे सूदा ३२.

वाटर एकद्वय, द्वात्रिंश, त्रात्रिंश, चतुरिन्द्रिय, पचन्द्रिय सत्री और असक्षा इन मात कारण कम और उद् प्रतिदिन पाडा आदि न प्रमाणश ता आताचना करे २८ इनकी हिंसा आदि न करे २९-प्रतिदिन इनका अनुष्ठान अवश्य करे ३० इनका निराध ३१ इन सत्र का प्रति दिन अनुष्ठान करे ३० इनका निग्रह करे ३१ कम बन्ध के कारण मिथ्या रादि प्रययोंका नित्य त्याग करे ३२ देव मनुष्य नियम और अरेतन कृन उपसग आ उपस्थित हा तो सदा करे ३३ कर सक तो आलोचना करे ३३ श्रद्धि गौरव, रस गौरव ह्याद गौरव इनका परिहार करे ३४ आर्चारीद्र संस्लेश परिणामा को आदि लकर प्रायोग्य गहपना पय त के सब आचार निषिद्धाचार हैं उनका मेवत ३५ ह्या पुरुषा क अगोपागों का अभिलाषा पूषक लेखना ३६ उहा क अगोपांगा का सानुराग स्पश करना ३७ दुष्टपन वचन और कायका व्यापार ।

३८ पर को षोडा देना ३९ स्नेह ४० विषया की प्रत्यन्त लालसा ४१ महात्त्रभिप्राय ४२ किमी एक व्यासग स श्रथवा रित के सकलेश से आगमोक्त कालसे अधिक काल तक आवश्यक कादि क्रियाआका करना अतिब्रमों मानसशुद्धिहानि ४३ विषय क व्यासगादि द्वारा आगमोक्त क्रिया कालसे हाउराल म क्रिया करना व्यतिक्रमा यो विषयाभिलाष ४४ आवश्यकदि क्रियाओं के करनेमें आलास्यादि करना तथाविचार वरणालसत्त्व ४५ प्रव

समिति आदि प्रतीकों का आचरण न करना या खडन करना, भगो
हनाचारमिह प्रतानामिति ४६ कापोतलेशया वश पूजा महत्त्व
की अभिलाषा स प्रकट रूप प्रतीकों का अनुष्ठान करना ४७ लज्जा
आदिके वश लोगों से छिपाकर अनुष्ठान करना ४८ इनका अर्थ
ऊपर आ चुका है ।



प्रतिक्रमणभक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्गकी प्रतिज्ञा

अथ मर्वातिचारत्रिशुद्धयय रात्रि (दवमिक)

प्रतिक्रमणप्रियाया वृत्तदोषनिराकरणार्थं पूर्वाचार्या-
नुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेत
श्रीप्रतिक्रमणभक्तिकायोत्सर्ग करोम्यहम्-

अब मैं सब अतिचारों की विशुद्धि के अथ प्रतिक्रमण क्रिया
में किय गये दोषों के निराकरणाय पूजाचार्यों की परिपाटी के
अनुसार सकल कर्मों के क्षय निमित्त, भावपूजा वन्दना स्तव
सहित प्रतिक्रमण भक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग करता हूँ-

शुभो अरहन्ताण इत्यादि दृढप पठित्वा कायात्सर्गं कुर्यात्
अनन्तर धारसामीत्यादि पठेत् ।

प्रथम शुभो अरहन्ताण, इत्यादि सामायिक दृढप पठकर
सत्साईस उन्मद्वाम प्रमाण कायोत्सर्ग करे परचात चतुर्विंशति -
स्तव पठे ।

निषिद्धिका दण्डक

णमो अरहनाण णमो सिद्धाण णमो आर्हाय्याण
णमा उव्वज्जायाण णमो लोण सब्बसाहूण ॥ ३ ॥

अहंता को नमस्कार हो सिद्धा को नमस्कार हो, आचार्यों
को नमस्कार हा, उपाध्यायों का नमस्कार हो और लोकवर्ती सब
साधुओं को नमस्कार हो । (इस गाथा का तान बार पढ़े)

णमो जिणाण ३, णमो(णस्सिहोए ३, णमोत्थु, दे
३, अहंत । सिद्ध । बुद्ध शारय । शिम्मल । समण
सुभण । सुसमत्थ । समजोण । समभाव । मल्ल-
घट्टाण सल्लघत्ताण । शिब्भय । शीराय । शिहोस
शिम्मोह । शिम्मम । शिस्सण । शिस्सल्ल । माण-
माय-भाम मूरण । तवप्पहावण । गुणरयण । सील-
सायर । अणत । अप्पमेय । महिदिमहावीरवड्डमाण-
बुद्धरिमिणो चेदि णमोत्थु ए णमोत्थु ए णमोत्थु ए ।

ससार का नाशिक कारण कर्मरूप शत्रुओं का जातलेने
वाले जिनके को नमस्कार हो नमस्कार हा नमस्कार हा
निषिद्धिकाओं * को नमस्कार हो न-स्कार हा नमस्कार हो । हे

* षिण सिद्धत्रियणिलया किग्गादिग्गा य रिद्धिजुदसाहू ।
शाण्ड्या मुण्डियग्गा शाण्ड्या य शाण्ड्या य ॥ १ ॥
सिद्धा य सिद्धभूमा सिद्धाण समासिधो एहो देतो ।

घाति प्रम चय कारक अहत् । हे निशोप कर्म-मूलन सिद्ध ।
 हृद्योपाय्य विवक सम्पन्न युद्ध । हं ज्ञान-दशनावरण रज से
 रहित नोरन । ह द्रव्यभाय कलर रहित निमल । ह तृणपावन
 और शत्रु मित्र तुर्य मन मम मन । हे आरा-रीद्र रहित मृमन
 हे काय फनेशानुष्ठान और परिपह सहने में सुसमथ । ह परमो
 पशम से युक्त शमयोग । ह संसार के उपशम अथवा रागद्वेष
 के परिहार के लिए द्वांश अनुप्रेता भावना रूप भाव जाने शम
 भाव । इम प्रकार के आप नो अह-तात्त्विक हैं आपका सबको
 नमस्कार हो नमस्कार हो नमस्कार हा । इम प्रकार सामान्यत
 अहत् आत्तियों का स्तुति कर पुन विशेषरूप से अतिम नाथकर
 की स्तुति करत हुए कहत हैं-ह माया मिथ्या और निदान रूप
 शल्या से पाहित जावों क उत्र श-यों क विनाशक । ह सप्तभयों
 में रहित निभय । ह राग-द्वेष से निष्क्रान्त नाराग । ह निष्क-
 लक अथवा अष्टादश पाप से रहित निर्पाप । हे अज्ञान अथवा

मन्मत्तात्त्विक उप्पण्य जेसु तहि सिन्धेत्त ॥ २ ॥

वत्त तहि य दहं तहिय जसु ता णिमाहात्था ।

जसु विशुद्धा जोगा जोगवरा जेसु मटिया सम्म ॥ ३ ॥

तागियरिमुक्कदेहा पडिंमरणट्टिदा णिमाहात्थो ।

तिविह पडिं मरणे चिट्ट ति महामुणा ममाहाण ॥ ४ ॥

पथात्था अण्णात्था णिसाहियात्था मया वत्त ॥

णि त्ति य णियमेहि जुत्ता सि त्ति य सिद्धि त्ता अहिग्गमि ।

वि ति य विन्निद्धक्खो ए त्ति य तिण सासण भत्तो ॥ ५ ॥

दशममाह और चारित्र्य मोह से निष्क्रान्त निर्मोह । हे जिसा
 विषय में ममता रहित निर्मम । हे बाह्य और अभ्यन्तर परिषद
 से रहित निमग । हे माया आदि शक्तियों विरहित निशक्त ।
 हे मान माया और मृषाके मर्दक मान माया मोष मूरख । हे
 तप प्रभावक । हे चौरासी लाख गुण रूप रत्नों के भण्डार गुण
 रत्न । हे अठारह हजार शालों के समुद्र शालसागर । हे अनन्त
 केवल ज्ञान दर्शन आदि से युक्त अनन्त । हे इन्द्रिय ज्ञान से
 अपरिच्छेद्य अप्रमेय । हे महति महावारःॐवर्धमान । हे यथावत्
 परिज्ञात अशेषाथ स्वरूप केवलज्ञानादि नबलान्धि सपन्न । बुद्ध
 चिन् । आपको त्रिवार नमस्कार हा ।

मम मगल अरहता य सिद्धा य बुद्धा य जिणा य केव-
 लिणो ओहिणाणिणो मणपज्जवणाणिणो चउदस—
 पुब्बगामिणो सदसमिदिसमिद्धा य तवो य वारहविहो
 तपस्सा गुणा य गुणवन्तो य महरिसी तित्थ तित्थ-

ॐ—महतिमहारीर और वर्द्धमान ये दोनों नाम अतिम
 तीर्थंकर के हैं । क्योंकि गर्भावतरादि के समय इन्द्रों ने भगवान
 की बर्दा भारी अनयसंभया पूजा था था इसलिए उनके बंधु
 जनों ने बधमान यह नाम रखा और ध्यान में स्थिर भगवान
 की रुद्रने ध्यान से विचलित करने के लिए भारी उपसग किया
 था फिर भी भगवान उपसग से विचलित नहीं हुए इसलिए रुद्र
 ने उनका नाम महति महावार रक्खा ।

करा य, पवयण पवयणी य, शाण णाणी य, दसण-
 दसणी य सजमो सजदा य, विणीओ विणदा य,
 वभचेरवासो वभचारी य, गुचीओ चेव गुत्तिमतो य,
 मुत्तिओ चेव मुत्तिमन्तो य, समिदीओ चेव समिदिमतो
 य, सुसमयपरसमयविदू, खत्तिवखवगा य, सत्तिवतो य
 खीणमोहा य खीणवतो य बोहियवुद्धा वुद्धिमतो य,
 चेइयस्सखा य चेइयाणि ।

अर्हन्त, सिद्ध, जिन, केवली, अवधिज्ञाना, मन पयय ज्ञानी
 चौह पूव और द्वाणशांग के ज्ञाता, कालिक उत्कालिक आदि
 भेदों से विभक्त अगवाह्य श्रुतसमूह से समृद्ध, बारह तप और
 तपके धारक तपस्वा, चौरासा लाख गुण और उन गुणों से
 युक्त मुनि, कोष्ठबुद्धि धीन बुद्धि आदि उत्कृष्ट श्रद्धियों से सपन्न
 महर्षि तीर्था आगम और तदाधारमघ, और तीर्थस्वरदेव तथा
 गणधरदेव, पूवापर दोषों से रहित प्रवचन और प्रकृत वचनों से
 युक्त मुनि, मत्यादि पाच प्रकार के ज्ञान और नस ज्ञानसे युक्त
 ज्ञाना, औपशमिकादि तीनों दर्शन और उन दर्शनों से युक्त दर्शनी,
 द्वादश संयम और सयम से युक्त मयत, ज्ञान दर्शन चारित्र और
 उपचार लक्षण चतुर्विध विनय और विनय से युक्त विनीत ब्रह्म-
 चयाश्रम और ब्रह्मचारी, गुप्तिया और गुप्तिमान बाह्य और
 अभ्यन्तर परिग्रह से मुक्त मुक्तिया और तद्दान आत्मा, समि-
 तिवां और समितियों के धारक स्वसमय और पर समयचेत्ता,

चान्तिक्षपक (श्रेण्याम्बुद मुनि) क्षाणमाह (क्षीणकपाय गुण स्थानवर्ती मुनि) बोधित बुद्ध (जो परके उपदेश से सत्ता शरार विषया आदि से विरक्त हुए हैं) और बुद्धिप्रभृति ऋद्धिया के धारक तथा चैत्यवृक्ष और चैत्य ये मय मेरे पापमला का गालन और मुख के रने वाले हों ।

उड्ढमहतिरियलोए सिद्धावदणाणि एमसामि,
 सिद्धाणिमीहियाओ अट्ठावयपव्वए सम्मेदे उज्जते चपाए
 पावाए मज्झिमाए हत्थिवालयसहाए जाओ अण्णाओ
 काओनि णिसीहियाओ जीवलोयम्मि, इसिपव्वभारत-
 तग्गयाण सिद्धाण बुद्धाण कम्मचक्कमुक्काण एोर-
 याण णिम्मलाण, गुरुआइरिय-उवज्झायाण, पव्वत्ति
 त्थेरकुलयरण, चउवण्णो य समयसघो य भरहरावणसु
 दससु पचमु महाविदेहेसु । जे लोए सति साहवो सजदा
 तवमो एदे मम मङ्गल पवित्ता, एदह मगल करेमि भावत्तं
 विमुद्धो सिरसं अहिवदिऊण सिद्धे वाऊण अजलि
 मत्थयम्मि, तिबिह, तियरणमुद्धो ॥ ९ ॥

मैं उध्वलोक, अधोलोक और त्रिगुल्लोकवर्ती सब सिद्धा यतनो को नमस्कार करता हूँ । कैलाशपर्वत, सम्मेदशिक्षर, उज्जयिन्तपर्वत, चंपापुर, पावापुर, मध्यमपावा, हस्तिवालक मठपर इन पर जो सिद्धनिषिद्धियाए (निर्वाण क्षत्र) हैं उन सबको नमस्कार करता हूँ ।

इनके अलावा अन्य ढाड़ढाप श्रीर दा समुदा में मानशिला के उपरिभाग में अथस्थित नम मिद्ध युद्ध कर्मरत्नगुण, गिरज, निमल गुण आचाय, उपाध्याय, प्रवर्त्तिक, ग्यधिर श्रीर गणधर इनकी जो फाड़ भी अन्य विविद्धकाय हैं उन सबका नम स्मार करता हूँ । तथापार भरत पाप पराबत श्रीर पांग विदेह म श्रुति, यति मुनि श्रीर अतगार गह जो पानुषण्य भ्रमण र्मष है श्रीर लोक म मानुषाचार परंत पर्यन्त क्षेत्रों जो माधु मयत तपस्या हैं ये मरे पितृ परिण मगत स्वरूप हवें । जिसका कि द्वय यन्त्रा प्रतिभ्रमण श्रीर ग्राध्याय जो तातो फियाळा के अगुष्ठान म मत्त, यवन काय य ताता करण शुद्ध हुए हैं भाव से विशुद्ध हथा अज्ञानि मस्तक पर रत्न करके गिर में मिठों को बन्दना पर में नम सबकी म्मुति करना हूँ ।

(इति निषिगिता दण्डका)

पडिक्कमामि भत । राइयस्य (देवमियम्स)
 अइचारम्म अणाचारम्म मणदुच्चरियम्म उच्चिदुच्च-
 रियम्म कायदुच्चरियस्य णाणाइत्तारम्म दनाणइ-
 चारम्म तवाइचारम्म वीग्याइचारम्म चारित्ताडचा-
 रम्म पचण्ह महच्चयाण पचण्ह समिदोण तिण्ह
 गुत्तीण छण्ह आयामयाण छण्ह जीमगिवायाण विरा-
 हणाण पील कदो वा कारिदो र वीरतो वा समण-

* मण्डो तस्स मिच्छा मे दुक्कड । १ ।

हे भगवन् ! दैवसिक (र मित्र) प्रती में लगे अतिचार और अनाचार का प्रतिक्रमण-निराकरण करता हूँ। मनकी कुचष्टा, वचन की कुचष्टा और काय की कुचष्टा का प्रतिक्रमण-त्याग करता हूँ। ज्ञान के अतिचार, दर्शन के अतिचार, तपक अतिचार, वीर्य के अतिचार और चारित्र्य के अतिचार का निराकरण पर ज्ञानादिक को निर्मल करता हूँ। पांच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुणित, छह आवश्यक और छह निकाय के जीवों की विराधना क होने पर जो मैंने पीडा धी है, अन्य सं कराइ है, स्वयं करते हुए अन्य की अनुमोदना की है उस पीडा सम्बन्ध दुष्ट मेरे मिथ्या होवे ॥१॥

पडिक्कमामि भन्ते । अइगमणे णिग्गमणे ठाणे गमणे चक्रमणे उव्वत्तणे आउट्टणे पसारणे आमसे परिमासे कुइदे कक्कराइदे चलिदे णिसण्णे समये उव्वट्टणे परिउट्टणे एदियाण वेइदियाण तेइदियाण चउरदियाण पचिदियाण जीवाण सघट्टणाए उहावणाए परिदावणाए विराहणाए एत्थ मे जो कोई देवसिओ (राइयो), अदिक्कमो वदिक्कमो अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कड । २ ।

१ भदन्त ! अतिगमन, निगमन, स्थान, गमन, चक्रमण, उद्वत्तन, परिवत्तन, आकुचन, प्रसारण, आमर्श, परिमर्श

कैसे चलते हुए विराघना का ? उसे घनाते हैं-ऊ वा मुख उठाकर चलते हुए, नाचा मुख मुनाकर चलते हुए, चारों दिशाओं का अवलोकन निसमें हो जाय इस प्रकार चलते हुए, चारों विरिशाओं का अवलोकन निसमें हो जाय इस प्रकार चलते हुए विकल त्रय प्राणों के ऊपर चलन से, गेहूँ नौ घना आदि घोड़ों पर चलन से, हरित-वनस्पतिकाय के ऊपर चलने से, उर्ध्व, पक्ष्य (बाँस), एक, मृत्तिका, मर्कटक, ततु, पृथ्वा-जल-अग्नि और वायु इन सत्त्वों पर चलने से, प्रजापतिव नीचा का हाथ पर आदि स सघट्टन करके, अर्थात्क नागा का सघट्टन करके तेजसाधिक नागा का सघट्टन करके आयुषादिक जीवोंका सघट्टन करके, वनस्पति कायिक जाया का सघट्टन करके तय प्रसकायिक जावों का सघट्टन करके उत्तापना-प्राणा का वियोग कर, परितापना कर, विराघना कर इस प्रकार अनेक प्रकार में पीछा कर जो फोड़ नी मरे तन आदिक विषयमें द्वैवसि (रात्रि) अतिचार या अनाचार हुआ है उस अतिचारासि सम्बन्धी दुष्टत (पाप-शेष) मरे िया हाव इस प्रकार प्रति व्रनण करता है ॥ ३ ॥

पडिवनमामि भन्ते । उच्चार-पम्सवण खेल-सिहाण विमडिपयट्टावरिणयाए पडट्टावतेण जो कोई पाणा व भदा वा जीवा वा सत्ता वा सघट्टिदा वा सघादिदा वा उद्दाविदा वा इत्थ मे जो कोई राईओ द्वैवसिओ अईचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कड

ह भन्त । उच्चार, प्रत्ययण, द्बन, सिताणक विट्टि इनके छेपण परत में ना शेष लगा है उसका प्रतिप्रमण परता है । इनका निक्षेपण करत हण मेंन जो कोइ भी विक्लत्रय प्राण, धनस्पतिपायिव भूत, पंचाद्रय जीव, और ऋष्या, अप्, तन, वायु मत्स्य इनको मषणण शिया है मषात शिया है अथवा मारा है अथवा मत्ताप पहुँचाया है इन सब मषट्टन आदि के परत में मर जो फाइ भा मना के विषय में न्यमिक (रात्रिक) अतिगार अथवा अन्यागार प्रादुभून हुआ है उन अतिचारादि मन्धरी दुष्टन मर मिथ्या बाव—निष्फल होय इस प्रकार शेषों का प्रतिप्रमण करता है ॥४॥

पडिनरमामि भन्ते । अणोसणाए पाणभोयणाए पणयभोयणाए वीयभोयणाए हरियभोयणाए आटा—
 वम्मण वा पच्छावम्मण वापुगावम्मण वा उद्दिट्टयडेण
 वा णिद्दिट्टियडेण वा णिर्हिट्टियडेण वा दगमसिट्टियडेण
 वा रममसिट्टियडेण वा परिमादणियाए पड्डावणयाए
 उद्धेनियाए निद्धेसियाए कीदयड मिस्से जादे ठविदे
 रइदे अणमिट्टे वलिपाहुडदे पाहुडदे घट्टिट्टे मुच्छिदे
 अइमत्ताभोयणाए इत्य मे जो कोई गोयग्गिस्म अइचारो
 अणाचारो तस्स मिक्खा म दुक्खड । ५ ।

ह भन्त । अनपणा एन अयाग्य सायच उद्गमादि शेषों से दूषित चतुत्रिव आहार क ग्रहण करने से जो दोष उत्पन्न हुआ

हैं उसका प्रतिक्रमण करता हूँ पान भोजन X, पयण भोजन --, भोजन, हस्ति भोजन, पद् जाय निकाय का विराधना स इत्य
अथ कर्म भोजन परचात् कम, पुराकर्म, उद्विष्ट, निर्दि
कृत, एकमसृष्टकृत, रसससृष्ट परिसातनिका, प्रतिष्ठापनिय
उद्देशिका, निर्देशिका, प्रातकृत, मिश्र जात, स्थापित, रवि
अनिष्ट, बलिप्राभृत, प्राभृत, घटित मूर्च्छित, परिमाण
अजिक इन दोषों से मात्राधिक भोजन युक्त आहार इस
प्रकार अनेपणा में जो कोई गोरी सम्बन्धी अतिचार अथ
अनाचार हुआ है तत्सम्बन्धी दुष्टकृत मरा मिथ्या होवे ॥५॥

पांडवकामाभि भन्ते । सुमण्डिदियाए विराहण
इत्थिविप्परियासियाए दिट्ठिविप्परियासियाए मण्डि
प्परियासियाए वचिविप्परियासियाए कायविप्परिया-
सियाए भोयण विप्परियासियाए उच्चावयाए सुमण-

ॐ—योग्य निरवय चार प्रकार के आहार के ग्रहण को
एपणा कहते हैं । इस एपणा के अभावको अनेपणा अर्थात्
उद्गमादिदोषों से दूषित आहार ग्रहण को अनेपणा कहते हैं ।

X—प्राणों के अनुमहार्थ जो पिया जाय उसे पान कहते हैं
उस स्निग्ध रूक्ष आदि पान के भोजन से अथवा पान और
भोजन से ।

—पूतन युक्त काजिक मयितादि भोजन के करन से अथवा
शुष्य (पौष्टिक) आहार ।

दसणविप्परियासियाए पुव्वरए पुव्वनेल्लिए णाणाचि-
तासु विसोतियासु इत्थ मे जो कोई देवसिओ राईओ
अइचारो अणाचारो तम्म मिच्छा मे दुक्कड । ६ ।

हे भदन्त ! स्वप्नमें जो विराधना याना विपरीत परिणति
हुइ उममें जो दोष लगे हैं उनका परिशोधन करता हू । यह
विराधना जैसा होता है वैसी दिक्षात हैं पूव्वरत और पूव्ववाडित
नाना चिन्ताओं में स्त्री विषयासिका, दृष्टि विषयामिका, मन
विषयामिका, वचन विषयासिका, पायविषयामिका, भासन
विषयामिका उन्च्यावजात और स्वप्न दर्शन विषयामिका इम
प्रकार स्वप्नमें विपरीत परिणतिरूप विराधना होता है उममें
मेरे जा कोई दैवसिक (रात्रिक) अतिचार और अनाचार हुआ
है, तत्सम्बन्धा दुष्कृत मरा भिध्या हावे ॥६॥ ×

पडिक्कमामि भत्ते । इत्थीकहाए भत्तजहाए
रायकहाए चोरकहाए परपासडकहाए देसकहाए भास-
कहाए अवहाए विकहाए णिटुल्लकहाए परपेमुण्णक-
हाए ऋदप्पियाए कुक्कुच्चियाए डवरियाए मोक्खरि-
याए अप्पपससणादाए परपरिवादणादाए परदुगच्छ

× स्वप्न से ही द्रव्य विसम उपहन (नष्ट) हो जाती है उस
स्व नेद्रिय की विराधना रूप विपरीत परिणति को होने पर जो
दोष संभव हुआ है उसका प्रतिक्रमण-परिशोधन करता हूँ ।

णादाए परपीडाकराए सावज्जाणुमीपणियाअे इत्थ
मे जो काई देवसिअो राईअो अइचारो अणाचारो तस्त
मिच्छा मे दुक्कड ॥७॥

हे भदन्त । निम्न कथाया म लग दार्पा का प्रतिक्रमण करता
हू । स्त्रीकथा, अथकथा, भक्तकथा राजकथा, चोरकथा, वीरकथा
परपालकथा भाषाकथा अथवा विकथा निष्ठुरकथा परपैशून्य
कथा वन्पिका कौतुहलिका डबरिका, आत्मप्रशसनता परपरि-
धानता, परजुगुप्सन्ता परपाडावरा और मायद्यानुमादिका इन
उक्त प्रकार कथाओं म मर जो काई देवसिक (रात्रिक) अतिचार
अनाचार हुआ है उस अतिचाराणि सब धी दुष्टमेरे मिथ्या
होवे ॥ ७ ॥

ह भगवन् । इन कथाओं क परन में जो मेरे प्रतावरण में
अतिचाराणि दोष उपार्जित हुए हैं उनका प्रतिक्रमण करता हूँ मैं
उहे दूर कर अपा चारित्र को उबल करता हूँ ।

शिश्यों क वन्दन नयन, नाभि, नितय आदि अ गोंका
कथावर्णन रूप कथा स्त्रीरथा अथवा उपार्जन रक्षण आदि
अन रूप कथा अर्थरथा, भोवन का यज्ञन रूप कथा भक्तकथा
राज्य अथवा राजा का कथा राजकथा वीर का कथा चोरकथा

पंडितकमामि भ त । अट्टुजभाण रुदुदुभाणो दहनीय-
सण्णाअे परनीयसण्णाअे आहारमण्णाअे नयसण्णाअे
मेहुसण्णाअे परिग्गहमण्णाअे वाह रवाअे माणस-

हलाग्ने म'यासल्लाग्ने लोहमन्लाग्ने पेम्नसल्लाग्ने पिवा
ससल्लाग्ने गियाणमल्लाग्ने मिच्छादसणसल्लाग्ने कोह
कसाग्ने माणकसाग्ने मायाकसाग्ने लोहकसाये विण्ह
लेस्सपरिणामे खोललेस्मपरिणामे काउलेस्सपरि
णामे आरम्भपरिणामे परिग्गहपरिणामे पडिसयाहि
लासपरिणामे मिच्छादसणपरिणामे असजमपरिणामे
पावजागपरिणामे कायमुहाहिलासपरिणामे सद्देसु
रूवेसु ग'धेसु रसेसु फासेसु काइयाहिवरणियाग्ने पदो
सियाग्ने पारिदावणियाग्ने प'णाइवाइयासु इत्य म
जो कोई देवसिग्गो राईग्गो अइचारो अणाचागे तस्स
मिच्छा मे दुक्कड ॥८॥

हे भन्त इन आत्त ध्यान आदि क करने में जा दोष हुए हैं
एनरा प्रतिक्रमण निराकरण करता हूँ आत्त'ध्यान रौद्रध्यान,
इह्लोकसम्हा, परलोकसम्हा, आहारसम्हा, भयसम्हा मैथुनसम्हा
परिग्रहसम्हा क्रोधशल्य, मानशल्य, मायाशल्य, लोभशल्य प्रेम
शल्य विपासाशल्य, निदानशल्य, मिथ्याश्नशल्य, क्रोधरूपाय
मानरूपाय मायारूपाय, कृष्णलस्यापरिणाम, नाल्लेस्यापरिणाम
कापोतलस्यापरिणाम आरम्भपरिणाम, परिग्रहपरिणाम प्रतिश्रया
भिलाप परिणाम मिथ्याश्नपरिणाम अमयपरिणाम, कषाय
परिणाम, पापयोगपरिणाम, कायमुखाभिलाप परिणाम, शब्द
रूप, गन्ध, स्पर्श, कायिकाधिकरखिना'प्रदायिकी पारिद्रायणिकी

प्राणतिपातिका इन आत्त ध्यानका आदि लकर प्राणानिपाति क्रियापयन्त में मेरे जा कोइ दैवमिक (रात्रिक) अतिचार अर चार हुआ है उस सम्यग्धा दुष्कृत मरे मिथ्या होव ॥ हे भदन्त काय त्रिया कायसे होनेवाली मावण त्रिया काय त्रिया अधिक क्रिया-कर्मोंक आगमनक आधार जीव और अजीवमें होन वा क्रिया प्राणोपिका काधक आवेशमें हुइ प्रादोपिक क्रिया परिता निका दूसरों को दुख उत्पन्न करने वाली परतापनिका त्रि प्राणतिपातिका इन्द्रिय मन वचन आयु उच्छ्वास निश्वास प्राणा का त्रियोग करन वालोप्राणतिपातिका क्रिया ।

पडिक्कमामि भन्ते ! एकके भावे अणाचारे, वेसु^१ रायदोसेसु, तीसु दडेसु, तीसु गुत्तीसु, तीसु गारवेसु, चउसु वसाऐसु, चउसु सण्णासु, पचसु महव्वअंसेसु, पचसु समिदीसु, छसु जीवणिकाअंसेसु छसु आवासअंसेसु, सत्तसु भअंसेसु, अट्ठसु मअंसेसु एवसु वमन्नेरगुत्तीसु, दसविहेसु समणधम्मसेसु अंयारसविहेसु उवासय पडमासु वारहविहेसु भिक्खुपडिन्नासु, तेरसविहेसु किरियाट्ठाणेसु चउदस विहसु भूदगामसु, पण्णारसविहेसु पमायठाणेसु, सोलसविहेसु पवयणेसु, सत्तारसवि हेसु असजमेसु, अट्ठारसविहेसु अमपराअंसेसु उणवोसाअंसेसु एणहज्जाणेसु, वीसाअंसेसु असमाहिट्ठाणेसु, अश्वीमाअंसेसु

सवलेसु, वावीसात्रे परीसहेसु, तैवीमात्रे मुह्यडङ्का-
 णेसु, चउवीसात्रे प्ररहतेसु, पणवीसात्रे भावणासु,
 पण्णीसाए किरियाट्टाणेसु, छव्वीसाए पुढवीसु, सत्ता-
 णीमाए अणगारगुणेसु, अठ्ठावीसाए आथारकप्पेसु,
 एउणतीसाए पावमुत्तपसगेसु, तीसाए मोहणाठारोसु,
 एक्कीसाए कम्मविवाएमु वत्तीमाए जिणोवएमेसु
 तेत्तीसाए अच्चासणदाए, सखेवेण जीवाण अच्चासण-
 दाए अजीवाण अच्चामणदाए, णाणस्म अच्चासण-
 दाए, दमणस्स अच्चामणदाए, चरित्तस्स अच्चासण-
 दाए, वीरियस्स अच्चासणदाए, त सव्व पुव्व दुच्चरिय
 गरहामि, आगामेसीएसु पच्चुपण्ण इत्थ त पडिक्कमामि
 अणागय पच्चक्खामि, अणरहिय गरहामि, अण्णिदिय
 ण्णिदामि, अणालोचिय आलोचेमि, आराहणमवमुट्ठे मि
 निराहण पडिक्कमामि इत्थ मे जो कोई (देवसियो)
 राईओ अइचागे अणाचागे तस्म मिच्छा मे दुक्कड ९

हे भगवन् एष अनाचार परिणाम नो रागद्वेषपरिणाम, तीन
 गुप्ति, तीनड तान गारय चारकथाय, चारसत्ता पांच महात्रत
 पाच समिति, द्रह जात्रनिनाय द्रह आवज्यरुसात मय आठम
 नव ब्रह्मचयगुप्ति, दशप्रकार अमणमर्म्म ग्यारहप्रकार उपासक

प्रतिमा बारह प्रकार भिक्षु प्रतिमा तेरह प्रकार क्रियास्थान चौदह प्रकार भूतग्राम पंद्रह प्रमास्थान सोलहप्रकार प्रवचन सत्ररह प्रकार असयम अठारह प्रकार, असपराय उन्नीस प्रकार, नाथी ध्यान बीस असमाधिस्थान इक्कीस सयलक्रिया सार्दस पराएह तेइस सूत्रकृताध्ययन चौबीस अर्हत पञ्चास भावना पञ्चास क्रियास्थान छव्वास पृथिवी सत्ताइस अनगारगुण, अट्टाइस आचारकल्प उन्तास पापसूत्र प्रसंग, तीस मोहनायस्थान, इकत्तास कर्म विपाक, बत्तीस जिनोपदेश, तेतास आसादना सक्षेपसे जावों की अत्यासादना अजीवों की अत्यासादना ज्ञान का अत्यासादना दशा की अत्यासादना वीर्य की अत्यासादना इन सब में जो कुछ मन वचन और काय से भूत काल में दुष्ट चेष्टा हुई अर्थात् जो पालने योग्य हैं उनका पालन नहीं किया जो पालने योग्य नहीं थे उनका पालन किया उस सब दुरचरित्र का पर साक्षात् सहा में दुष्ट काय किया इत्यादि परचात्ताप पूवक गहाँ करता हूँ, प्रत्युत्पन्न दुरचरित्र के प्रतिक्रमण द्वारा विरागण करता हूँ भावों दुरचरित्र का त्याग करता हूँ अविषेक से मैंने जो पहले दुरचरित्र की गहा नहीं की अब उसका गहा करता हूँ जिसका आत्मसाक्षात् से निन्दा नहीं की रुम्का निन्दा करता हूँ जिसका पहले आलोचना नहा की उसका अब आलोचना करता हूँ आराधना का (रत्नत्रय का) अनुष्ठान करता हूँ रत्नत्रय का विराधना का प्रतिक्रमण करता हूँ इनमें जो कोई दक्षिण (रात्रि) अतिचार अनाचार हुआ है उसी अतिचार आदि सम्बन्धी दुष्कृत मरे सिध्या ही इस प्रकार अनुष्ठान योग्य अथो य उक्त सब में लग दया का प्रतिक्रमण निराकरण करता हूँ ॥६॥

इच्छामि भते । इम रिग्मथ पवयण अणुत्तर
 केवलिय पडिपुण्ण एणाइय सामाइय ससुद्ध सल्लघट्टाण
 सल्लघत्ताण सिद्धिमग्ग सेडिमग्ग एतिमग्ग मुत्तिमग्ग
 पमुत्तिमग्ग मोक्खमग्ग पमोक्खमग्ग एणज्जाणमग्ग
 एण्वाणमग्ग सब्बदुक्खपरिहाणिमग्ग सुचरियपरिणि-
 व्वाणमग्ग अवित्तह अविस्सतिपवयण उत्ताम त सदहामि
 त पत्तियामि त रोचेमि त फासेमि इदोत्तर अण्ण
 एत्थि ए भूद ए भविस्सदि एणणेण वा दसणेण
 वा चरित्तेण वा सुत्तेण वा इदो जीवा सिज्झति बुज्झति
 मुच्चन्ति परिणिव्वायति सब्बदुक्खाणमत करेन्ति
 पांडियाणाति समणोमि सजदोमि उवरदोमि उवस-
 न्तोमि उवहिणियडिमाणमायमोसमिच्छाणाण-मिच्छ-
 दसणमिच्छचरित्त च पडिविरदोमि, सम्मणाण सम्म-
 दसणसम्मचरित्त च रोचेमि ज जिणवरेहि पण्णत्ता,
 इत्थ मे जो कोई (देवसिभो) राईयो अइचारो अणा-
 चारो तस्म मिच्छा मे दुक्कड ॥ १० ॥

हे भगवान् ! इस निर्ग्रन्थ लिंग की चाहना करता हूँ । यह
 वाद्य और अभ्यन्तर परिग्रह से रहित मोक्ष की प्राप्ति का
 कारण निर्ग्रन्थ लिंग आगम में माक्षन्ता भाग है इस रूप से
 प्रतिपादन किया गया है, अनुत्तर इ अर्थात् इस निर्ग्रन्थ लिंग

स भिन्न दूसरा और कोई उत्कृष्ट मोक्ष का मार्ग नहीं है, केवली सम्बन्धो है, परिपूर्ण है, नैकाधिक है, सामायिक रूप है, संशुद्ध है शल्य घट्टक जीवों के शल्य या घातक है सिद्धि का भाग है, श्रेणीका मार्ग है, शांति का मार्ग है, मुक्ति का मार्ग है, प्रकृत मुक्ति का भाग है, मोक्ष का भाग है, प्रकृष्ट मोक्ष का भाग है, नियति का भाग है, निर्वाण का भाग है, सब दुःखाक परिहानि का भाग है, निरतिचार शोभन चारित्र्य के धारकों के परिनिर्वाण का भाग है, अद्वितीय है प्रवचन स्वरूप है, उत्तम है इस प्रकार का निर्मथ्य लिंग उसका मोक्षार्थी आश्रय ग्रहण करते हैं अर्थात् जैसे स्वाकार करते हैं में उसका श्रद्धान करता है, प्रतीति करता है, रुचि करता है स्पर्श करता है, इस निर्मथ्य लिंग से उत्कृष्ट लिंग न वर्तमान काल में है न अतीत काल में या और न भविष्यत काल में होगा। ज्ञान, दान और चारित्र्य य इसी लिंग में समभवत है इसलिए इससे उत्कृष्ट और कोई अन्य लिंग नहीं है, उत्कृष्ट सर्वज्ञ प्रणीत। आगम द्वारा प्रतिपादित है इस लिंग भी यह निर्मथ्य लिंग उत्कृष्ट है। इस निर्मथ्यलिंग से मोक्षार्थी जाव अपनी आत्मा का स्वरूप प्राप्त कर और श्रद्धियों को प्राप्त करते है, जीवादि बन्धुओं का यथाथ स्वरूप जानते हैं, सब फर्मों से विमुक्त होते हैं, अन्तत सुखा या कृत होते हैं, शारीरिक, मानसिक और आगन्तुक दुःखों का विनाश करते हैं सब दुःख का अन्त मय तरह से विशेष रूप से जानते हैं इसे ग्रहण कर में श्रमण-भुनि होता है, संयत होता है, विषयों से व्याकृत होता है, राग और द्वेष से उपशांत रहित होता है, उपधि विकृति मात्र माया मृषा मिथ्या

ज्ञान मिथ्यादर्शन और मिथ्याचारित्र, प्रति विरक्त होता हूँ, निनेन्द्र द्वारा प्रज्ञप्त सम्यग्ज्ञान सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्र में रुचि करता हूँ इसमें जो कोई दैवसिक (रात्रिक) अतिचार अनाचार मेरे लगा है उस अतिचार अनाचार सम्बन्धी टुप्पुठ मेरे मिथ्या होवे ॥ १० ॥

पडिक्कमामि भन्ते । सवस्स सव्वकालियाए इरिया समिदीए भाससमिदीए ऐसणासमिदीए आदाणनिक्खे-वणसमिदीए उच्चारपस्सवणखेलसिहाणवियडिपइट्ठा-वणिमामिदीए मणगुत्तीए वचिगुत्तीए कायगुत्ताए पाणादिवादादो वेरमण ए मुसावादादो वेरमणाए, अदिण्णदाणादो वेरमणाए, मेहुणादो वेरमणाए, परि-ग्गहादो वेरमणाए, राईभोयणादो वेरमणाए, सब्ब-विराहणाए, सब्बधम्मअइक्कमणदाए सब्बमिच्छाचरि-याए इत्थ मे जो कोई (देवसिओ) राईओ अडचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ॥ ११ ॥

हे भगवन् ! दैवसिक (रात्रिक) अतिचार की सार्वकालिक त्रिशुद्धि के निमित्त प्रतिजमण करता हूँ । उहाँ सार्वकालिक ज्ञान को बताते हैं । ईया समिति, भाषा समिति पण्णा समिति आदान-निक्षेपण समिति, उच्चार—प्रस्रण—खेल—सिहाणव विकृति प्रतिष्ठापन समिति, मनोगुप्ति वचनगुप्ति, कायगुप्ति, प्राणों के व्यतिपात से विरमण, सृपावादसे विरमण, अब्जा

दात मे विरमण, मैथुन मे विरमण, परिग्रह न विरमण, रात्रि भोजन मे विरमण, सब एफन्द्रियादि जीवा कं विराधना, यथा काल आवश्यककरणादि सब धर्मा का अतिब्रमणता सब मिथ्या चार इनम मरे जो काइ दैवसिक (रात्रिफ) अतिचार अनाचार लगा ई उस सम्बन्धा मेरा दुःकृत मिथ्या होये इम प्रकार प्रति ब्रमण करता हूँ ॥ ११ ॥

इच्छामि भन्ते । वीरभक्तिकाउस्त्रगो जो मे देव-सिन्धो (राईओ) अइचारो अणाचारो आभोगो अणा-भोगो वाइओ वाइओ माणसिओ दुच्चित्तियो दुवभा-मियो दुष्परिणामियो दुस्सभिरणियो । एणो दसणे चरित्तो मुत्तो सामाइणे, पचण्ह महवयाण पचण्ह समि-दीण, तिण्ह गुत्तीण, उण्ह जीवणिकायाण, छण्ह आवासयाण विराहणाणे अट्टविहम्मस वम्मम्स णिग्घा-दणाणे अण्णहा उस्सासिएण वा णिस्सासिएण वा उम्मसिएण वा णिम्मसिएण वा सासिएण वा त्तिणिएण वा जम्भाइएण वा मुहुमेहि अ गचलाचलेहि दिट्ठिचलाचलेहि, ऐदेहि सट्ठेहि असमाहिपत्तोहि आय-रेहि जाव अरहताण भयवताण पज्जुवास करेमि ताव काय पाचवम्म दुच्चरिय वोस्सरामि ।

हे भगवन ! धीरमहि सम्बन्धी कायोत्सर्ग करना शाकटा हू
 उसमें मेरे जो कोई दैविक (रात्रिक) अतिचार अनचार आभोग
 अनाभोग दुश्चरित्र लक्षण कायिक दुमांपित स्वरूप वाचिक,
 दुरितित-दुष्परिणामिक स्वभाव मानसिक और दुश्चरित्र
 श्लेष ह्य तथा ज्ञान में, दर्शन में चारित्र में सूत्रमें, सामाजिक
 म, पाप महाघ्न पापममिति तानगुप्ति छह जावनिनाय और
 छह आचर्यक इनकी विगधना में, आठ प्रकार कम की निर्धा
 तिना में जो दोष लगे हैं अन्य प्रकार से भी दोष लग हैं उन सबके
 बिनाशाय पायोत्सर्ग करता हूँ । उसी अन्य प्रकार अन्य दोषों
 दिवाने हैं-उच्छ्वास निश्याम, उमेप निर्मेप, स्वाम, धीक,
 जभाड, मूदम अग चलाचल, दृष्टि चलाचल इन मय अयप्रकार
 असमाधिप्राप्त व्यापारों से जो पाप लगे हैं उनके बिनागार्य
 जब तक उन दश से और मयदेशमे कम घातियों का घात करने
 वाले भगवान परपरमप्रा का एकाग्र त्रिशुद्ध मनम पयु पामन
 करता हू तब तक पाप शर्मोपात्तक दुश्चरित्र कायिक व्युत्पन्न
 करता हूँ ।

यदसमिदिदियरोधो त्रोचो आवासयमचे नमणहाग ।

गिदिमयणमदतवगण ठिदिभोयणभेयभत्तं च ॥ १ ॥

एदे खलु मूनगुगाण ममणाग जिणवर्णेहि पणत्ता ।

ए ह्य पमादादादो अइचारादो गियत्तो ॥ २ ॥

छेदोवठ्ठावण होहु मज्जक ।

घ्नन समिति, इन्द्रिय निराय, आय, आचर्यक, अचेनकत्व
 स्नान त्याग सतिशयन, अन्नघ्नन, स्थिति भोचन, कीर्ण एक

भेत्तये श्रमणों के। जिन द्रु द्वारा कहे गये मूलशुख ३ में इनमें प्रमाद वगैरे अतिचारा से निवृत्त होता हूँ। मेरे पुन उद्योग स्थापना होवे ॥

अथ सदातिचारविशुद्धयथ रात्रिक (दैवासिक) प्रतिक्रमणक्रियाया पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेत निष्ठितकरणवीरभाक्तिकायोः त्सर्गं करोम्यह ।

अब मैं सब अताचारों की विशुद्धि के निमित्त दैवासिक (रात्रिक) प्रतिक्रमणक्रिया में पूर्वाचार्य के अनुक्रम से सम्पूर्ण कर्मों के क्षयार्थं भावपूजा-वन्दनास्तव-समेत निष्ठितकरण वीर भक्तिसम्बन्धा कायोत्सर्ग करता हूँ

इति प्रति ज्ञाप्य

१*

(जैसा प्रतिज्ञापन करके)

दिवसे १०८ रात्रि प्रति क्रमण ५४ उच्छ्वासपुण्यो अरहताण इत्यादि दण्डक पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात् । पश्चात् थोस्सामीत्यादि चतुर्विंशतिस्तव पठेत्

दिनमें १०८ और रातमें ५४ उच्छ्वासा में एसा अरहताण इत्यादि सामायिक दण्डक पठ कर कायोत्सर्ग करे पश्चात् थोस्सामीत्यादि चतुर्विंशति स्तव पठे । फिर उद्धिसित निष्ठितकरण वीर भाक्त पठे ।

वीर भक्ति ।

य सवाणि चराचराणि त्रिधिग्द् द्रव्याणि तेषा गुणान्
पयायानपि भूतभावभवत सवान् सदा सवदा ।
जानीते युगपत् प्रतिक्रमन्त सवज्ञ इत्युच्यते,

सवज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ।१।

जो सम्पूर्ण चर अचर द्रव्या को उनके सहाभागी गुणों को
और क्रमभागी भूत, भावी तथा वतमान मन्त्र पर्यायों को भा सत्ता
सर्वकाल अशेष विशेषों को लिये हुए युगपत्काल क्रमसे रहित एक
साथ प्रतिक्षण जानत हैं उस लिए उह सबज्ञ कहत हैं उन सबन
महान गुणोत्कृष्ट, अतिम तीर्थकर वीर जिनेश्वर को नमस्कार हो
वीर सर्वसुरासुरेन्द्रमाहितो वीर बुधा सश्रिता,

वीरेणाभिहत स्वकर्मनिचयो वीराय भक्त्या नमः
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुल वीरस्य वीर तपो,

वीरे श्रीद्युतिकालकोतिधृतयो हे वीर । भद्र त्वयि

वीर जिनेश्वर सब सुरेद्रों और असुरेद्रों द्वारा पूजित हैं ।
वीर जिनेश्वर को गणधरादि बुधजन सत्तार समुद्र स पार होन
के लिए आश्रय करते हैं, वीर जिनेश्वरने अपने और पर के कर्मों
के समूह को विनष्ट किया है । वीर भगवान को भक्ति स सिर
मुका कर नमस्कार करता हूँ वीर । जिनेसे भव सागर से तारने
वाला यह अतुल तीर्थ प्रवृत्त हुआ है । वीर जिनेश्वर का वाह्य
और अभ्यन्तर तप भागी दुष्कर था जो औरों में नहीं पाया
जाता था वीर जिने में वाह्याभ्य तर लक्ष्मी, शरीर की ज्योति,
क्रान्ति कीर्ति, धृति ये सब गुण विद्यमान हैं । इस लिए हे वीर !
आप मे कल्याण है ॥ २ ॥

ये वीरपादो प्रणमति नित्य,

ध्यानस्थिता समययोगयुक्ता ।

ते द्योतशोभा हि भवति लोके,

समारदुग विषम तरति । ३ ।

ध्यान में एकाग्रता को प्राप्त हुए, मयम से उपलक्षित योग से युक्त होते हुए जो भय पुरुष वीर भगवान के चरणों को नित्य प्रणाम करते हैं वे लोक में शोक से विमुक्त होते हैं और विषम समार रूपी अटवी के पार पहुँच जाते हैं ॥ ३ ॥

व्रतममुदयमूल समयमस्कधवधो,

यमनियमपयोभिर्वाधित शीलशाख ।

समितिकलिकभारो गुप्तिगुप्तप्रवालो,

गुणकृमुममुगधि सत्तपश्चित्रपत्र । ४ ।

शिवसुखफलदायी यो दयाछायमयोद्ध ,

शुभजनपथिकाना खेदनीदे समथ ।

दुरितरविजताप प्रापयन्नतभाव,

स भवविभवहोयनोऽस्तु चारित्रवृक्ष ५

निसर्वा घटोंका समुदाय मूल-जड़ है समयमस्कधवध है जो यम नियम रूप जल से वृद्धिगत है अठारह हजार साल जिसकी शाखाएँ हैं, जिसमें समितिया रूप बलिनाथ भार हैं गुप्तिर्वा प्रवाल (पल्लव) हैं, चौरासी लाख गुण रूप पुष्पा की मुगन्धि

है सम्यक्त्त विचित्र पर हैं जो मोक्ष रूपा फलका देनेवाला है, या रूप छाया में प्रशस्त है भव्यजन रूप पथिकों के सत्ताप को दूर करने में समर्थ है ऐसा पाप रूप सुयके सत्ताप का अन्त नारा करन वाला यह चारित्र रूप वृत्त हमारे समार में जो गन्वादि नाना भव है उनके विनाश के लिए होवे ॥ ५-४ ॥

चारित्र सर्वजिनैश्चरित प्रोक्त च सर्वशिष्येभ्य ।
प्रणमामि पचभेद पचमचारित्रलाभाय ॥ ६ ॥

सब तीर्थकरा न स्वय चारित्र का अनुष्ठान किया है और सब शिष्यों के लिए जैसा है वैसा स्पष्ट कहा है । अतः सब धर्मों के क्षय के साधक पचम यथाश्यात चारित्र का प्राप्ति के लिए सामान्यिकाणि पात्र भेदों में समर्पित चारित्र का मैं प्रणाम करता हूँ

धम मवसुखाकरो हितवगो धर्मं बुधाश्चिचवते,
धर्मोणव समाप्यते गिरसुख धर्माय तन्मै नम
धर्मान्नास्त्यपर मुहृद्भ्रभृता धमस्य मूल दया,
धर्मो चित्तमह दधे प्रतिदिन हे धम । मा पालय ७

धम रूप चरित्र स्वय और अपरग मन्त्र जी सब सुखा का आन्तर अथान् उपति स्थान है मय पावा के हितका करनेवाला है चारित्र रूप इस धमका सभी विवेकशाल नाथपर आत्मचित्त करते हैं । धम न ही मानु मुख का प्राप्ति होती है । उस धम के लिए नमस्कार ही प्रम के मिया और कोई मसारा जीवोंका उपकारक भिन्न नहा है । धमका मूल—कारण क्या है । इसप्रकार के धर्म में म प्रतिदिन चित्त लगाता है । हे धम तू मरा पालन कर ॥ ७ ॥

धम्मो मगलमुद्दिट्ठु अहिंसा सयमो तवो ।

देवा वि तम्म पणमति जस्स धम्मो सयां भग्गो ८

यह चारित्र रूप धर्म उत्कृष्ट मगल है अर्थात् मल का गाल
वाला आर सुत का दनवाला है धर्म ही नही अहिंसा सयम
और तप भा परमो वृष्ट मगल है क्योंकि जिसका मन धर्म में ही
तर्लान है उस का देव भी नमस्कार करत हैं ॥ ८ ॥

अचलिका

इच्छामि भते । पटिवकमणादिचारमालोचेत्.

सम्मणायसम्मदसण-सम्मचारित्ता-तव-वारियाचा-

रेसु जमणियम-सजमसीलमूलुत्तरगुणोमु सव्वमईचार

सावज्जोग पडिविरदोमि अससज्जवोगअभवमायठाणाणि

अप्पसत्थजोगसण्णाणिदियकसायगारवकिरियासु मण-

वयणकामकरणादुप्पणिहाणाणि परिचिंतियाणि विण्ह-

णीतकाजलस्सायो विवहापलिकु चिएण उम्मगहस्स-

रदिअरदिसोयभयदुग्घपेयणविज्झमजभाइयाणि

अट्ठरुदुदसक्किलेसपरिणा ाणि परिणामदाणि अणि-

हुदवरचरणमणवयणकायकरणेण अक्खित्तवहुतपरा-

यणेण अपडिपुण्णेण वा सरक्खरानयपरिमघायप-

डिवत्तिएण वा अच्छ'नारिद मिच्छा मेलिद आमेतिद वा

मेनिर्द वा अण्णहादिण्ण अण्णहाडिण्णद्वावाणएसु
परिहीणदाण वदा वा व रिदा वा कोरतो वा समणु-
मणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कट ।

अवगिण

हे भगवान प्रतिप्रमण सम्यग्धी अतिचारों की आलोचना
करना चाहता हूँ सम्यग्ज्ञान सम्यग्ज्ञान सम्यक्चाग्रि तप
और वाय इन पाँच आचारों में यम नियम, समय, शील
मूलगुण और उत्तर गुणों में यम अतिचार और साधन योग
हुआ है उसमें विरत होता हूँ ।

असत्यय लानाध्यवसायवान् अप्रशस्तेयाग महा इन्द्रिय
कषाय गारुत्र क्रियाश्रमि मन वचन काय म वा दुष्प्रणिधान पार
चितित क्रिय कृष्णनाल कषान लया क्रिया उभय हास्य रतिधरति
शोक भय जुगुप्सा विनू भ जगाड आत रीन् सकलश परिणाम
परिणमित क्रिये अनिभूत धर करण मन वचन कायका प्रवृत्ति
करन से इन्द्रिया के विषयों में अति प्रवृत्तिकरने म अपरिपूयता
मे शर व्यनन पद और परि मघात क घालन में जा अयथा
प्रवृत्ति की मिथ्या मलित आम लत क्रिया अन्यथा दिया, अ-यथा
स्वाकार क्रिया, आवश्यकों में हानता समय का, दूसरों से कराई,
क्रिय द्रुण की अनुमोचना का उसमें हुआ दुष्टत मेरा मिथ्या हो ।

वदममिदिदियरोधो लोचो आवाणयमचेलमण्हाण ।

खदिसयणमदतवण ठिदिभोयणभेयभत्ता च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा समणण जणवरेहि पण्णत्ता ।

एत्थ पमादकदादो अइच्चारदो गियत्तो ह ॥२॥
छेदोवट्टावण होउ मज्झ ।

पांच महाव्रत पांच समिति, पांच इंद्रियरोध, लोच, द्वि
आवश्यक, अचेलकत्व (नग्नता) स्नान त्याग, क्षितिशक
अदन्त धावन, खडे होकर आहार लेना दिनम ही एक वार
आहार लेना । ये अट्टाईस मूल गुण भ्रमणा के जिनेन्द्र भगवा
न कहें हैं, इनमें प्रमात् से लगे हुए दोष मिथ्या हो । छेदो त्थ
पना मेरे हो ।

चतुर्विंशतितीर्थकर-भक्ति

अथ सर्वातिचारविशुद्धयर्थं रात्रिक (दैवसिक)
प्रतिग्रमणत्रियायां कृतदोषनिराकरणार्थं पूर्वाचार्यानु
क्रमेण सवलर्भक्षयाथ भावपूजावदनास्तवसमेत चतु
विंशतितीर्थकरभाक्तकामोत्सर्गं करोम्यहम् ।

इति प्रतिज्ञाय

अथ मैं मय अताचारों का विशुद्धि के अर्थ दैवसिक प्रतिग्र
मण त्रिया में कृत दोषा के निराकरण के लिए पूर्वाचार्या के
अनुक्रम से सवल कर्मा के लयनिमित्त भावपूजा व दनास्तर सहि
चतुर्विंशति तीर्थकर भक्ति सम्बन्ध का उत्सर्ग करता हूँ

इस प्रकार प्रतिज्ञापन कर

एगमो अरहताण इत्यादि (दहक पाठित्वा कायोत्सर्गं
वुर्यात्) (थोस्सामोत्यादि चतुर्विंशतिस्तव पठेत्)

एगमो अरहताण इत्यादि सामायिक दहक पदकर सत्ताइस
एच्छवास प्रमाण कायोत्सर्ग करे परचात थोस्सामात्यादि चतुर्विं
शतिस्तव पढे ।

अनन्तर निम्न भक्ति पढे

चउवीस तित्थयरे उसहाइवीरपच्छिभे वदे ।

सद्वे सगणगणहरे मिद्धे सिरसा एमसामि ॥ १ ॥

मैं वृषभाध का आदि लक्षर वीर पयत्त चतुर्विंशति तीर्थ
करा की वन्दना करता हूँ । तथा अपि यति मुनि और धनागार
इन चारगणों सहित सब गणधरों का और सिद्धों को मस्तक
सुका कर नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥

ये लोकेऽष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयाणवान्तगता,

ये सम्यग्भयजालहृतुमयनाश्चन्द्राकतेजोधिका ।

ये साध्विन्द्रसुराप्सरोगणशतर्गीतप्रणुत्याचिता-

स्तान् देवान् वृषभादिवीरचरमान् भवत्या नमस्याम्यहम्

जो लोक म एक हजार आठ लक्षणा क धारण करा
वाले हैं, ज्ञेय (पन्नाथ) रूपी समुद्र क पारगत हैं जा
भवजाल के कारण मिथ्यात्वादि का सम्यक् मथन करने
वाले हैं, चन्द्रमा और सुर्य के तेजमे भा अधिक तेजवाले इ

जो साधुर्था इन्द्रा देवों और अप्सराओं के समूहों के सैफों द्वारा उन्चारण का गइ स्तुति से और उनके वचन रूप कुमुभों से पूजित हैं उन वृषभादि वीरान्त तीर्थ परों की भक्ति में नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥

नाभेय देवपूज्य जिनवरमजित सवलोकप्रदीप,
सवज्ञ सभवारय मुनिगणवृषभ नदन देवदेव ।

कमारिध्न मुवुद्धि वरकमलनिभ पद्मपुष्पाभिगध
क्षान्त दात मुपाश्च सवलशशिनिभ चन्द्रनामानमीडे । ३ ।

देवों द्वारा पूज्य दशजिन गणधर आदि से उत्कृष्ट त्रैलोक्य का प्रकाशक भद्रश श्रीनाभिबुलकर के अपत्य वृषभनाथ को, उक्त विशेषणों से विशिष्ट अनित नाथ का मुनिगण में श्रेष्ठ सभवनाथ को देवा के दत्र अभिनन्दन नितया कमशात्र आ का विनाशक सुमतिप्रभुओं पद्म पुष्प के समान सुगन्धित और उर कमल के समान प्रभाजाल पद्मप्रभ को, परमापशात निर्जितेन्द्रिय मुपाश्च जिनका और पूण चन्द्रमा के समान (मफे यण) चन्द्रप्रभ स्वामा का मैं पूजता हूँ ॥ २ ॥

विख्यात पुष्पदन्त भवभयमघन शीतल लोकनाथ,
श्रेयास शीलकोश प्रवरनरगुरु वासुपूज्य सुपूज्य ।
मुक्त दातेन्द्रियाश्व त्रिमलमृषिपति सिंहसैन्य मुनीन्द्र
धर्म मद्धमकेतु शमदमनितय स्तोमि शान्ति णरण्यम् ४

ताम भुजा में विख्यात भगवत्पुष्पदन्त का, संसार के भय के मथन करने वाले ताम लोक के अधिपति शान्तल नाथ की,

शोला क स्वामी धेयान गाय का प्रवर गर जा गणपर चक्र-
बर्ती आदि उनक गुरु सुपूज्य धामुपूज्य का घाति शत्रुओं स मुक्त
और इंद्रियों रूप श्रमों को बश स करन घान श्रुपिपति प्रिमल
प्रनु की श्री सिंहमन नृपति क णपय अनत्नाथ नायँर की, समी
घान घम के चिन्ह धमनाथ की और शम और नम (इं द्रयन्त्र)
के निलय सत्र मगारी जार्जा क शरण स्वरूप शांतिनाथ की में
स्तुति दग्ता हू ॥ ४ ॥

कुयु मिद्वालयस्य श्रमगर्पानमर त्यक्तभागपुत्रत्र,
मन्त्रि विद्यातगात्र एचरगणानुत्त सुव्रत मीम्यराशिम्
देवेन्द्रान्यं नमीश हरिकुलतिलक नेमिचद्र भवात्
पाश्र्वं नामे द्रवद्य शरक्षमहमितो वधमान च भवत्या ५

मिद्वालय स अग्रस्थित और गणवगात्रि श्रुपि में क स्वामी कु शु
नाथ क, भागवत घाणा कममु त्थ स मिमुक्त अर निरका,
विष्णुवात गाय तथा त्रियागम द्वारा नमस्त्वन मन्त्रिनाथ की,
सौंदर्यराशि सुव्रतनाथ की न्या द्वारा पूज्य नमिनाथ का, हरि
कुव क निलय और भवनाशर अग्निर्नामि की, नाग
कुमारा और इ नों द्वारा वरनाथ पाश्वनाथ का तथा
अतिम नायँर वधमान निनया में भक्ति पूर्वक शरक्ष मन्त्र
करता हूँ ॥ ५ ॥

अचलिश—

१३

इच्छामि भत चउवो मतिश्चरभन्ति ताउ म्मगो

कथो तस्सालोचेउ पञ्चमहावल्नाणमण्णण अट्ठम-

हापाडिहेरसहियाण चउतीसातिसयविसेससजुत्ताण
 वत्तीसदविदमणिमउडमत्थयमहिदाण बलदेव वासुदेव-
 चक्रहररिमिमुखिजइअणगारोवगूढाण थुइसहस्सण्ण
 याण उमहाइवर्णपच्छिममगलमहापुरिसाण णिच्च
 कालअचेमि पूजेमि वदामि णमसामि दुवखक्खअं
 कम्मक्खअं वीहिलाहो सुगइगमण समाहिमरण जिण
 गुणसपत्ती होउ मज्झ ॥

हे भगवन् ! चतुर्विंशतिताथवर सम्बन्धा वायोत्सर्ग मैं
 किया, उसका आलोचना करता चाहता हूँ। जो पांच महाकल्या
 णों से सम्पन्न हैं, आठ महाप्रतिहार्या से सहित हैं, चौतास अति
 शय विशेषों से समुत्त हैं देवन्द्रा के मणियों से जटित मुकुट स
 शोभित मस्तकों से पूजित हैं, बलदेव, वासुदेव, चक्रवर्ती, श्रृष्टि,
 यति, मुनि और अगारों से अवगूढ (वेष्टित) हैं, लाखों स्तु
 तिया क निलय हैं उन शृपभादि वागन्त मागलिक महापुरुषों की
 नित्य काल अर्चा करता हूँ पूजा करता हू धन्यता करता हूँ
 और नमस्कार करता हूँ। मेरे दु खों का क्षय हो कर्मों का क्षय
 हो रत्नत्रय का लाभ हो, सुगति म गमन हा समाधि से भरण
 हो और निन्द्र के कथलात्ति गुणों की मप्रति हा । २४

ॐ १-उक्त सय विशेषण एक दो को छोडकर सभी तीर्थकरों
 में पाये जाते हैं।

अथ सर्वातिचारविशुद्धयर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रति-
 क्रमणत्रियाया श्रीसिद्धभक्तिप्रतिक्रमणभक्ति-निष्ठित
 करणवीरभक्ति-चतुर्विंशतितीर्थकरभक्ती कृत्वा तद्धी-
 नादिकदोषवेषुद्धयय आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभ-
 क्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्

अब मैं सब अतिचारों की विशुद्धि के लिए दैवसिक प्रति-
 क्रमणत्रिया में श्री सिद्धभक्ति, प्रतिक्रमणभक्ति, निष्ठितकरणवीर
 भक्ति और चतुर्विंशति तीर्थकर भक्ति करके उनके हीनादिदोषों
 का विशुद्धि के लिए आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति सम्बन्धी
 कायोत्सर्ग करता हूँ-

इति विज्ञाप्य

एगमो अरहताण इत्यादि दडक पठित्वा कायोत्सर्गं
 कुर्यात् । थोस्सामोत्यादि स्तव पठेत्

एगमो अरहताण इत्यादि सामायिक दडक पढकर कायोत्सर्ग
 करे, परचात थोस्सामि इत्यादि चतुर्विंशति-स्तव पढे

समाधिभक्ति

अधेष्टप्राथना-प्रथम करण चरण द्रव्य नम ।

- अथ इष्ट प्राथना-प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग
 और इत्यादि नमो हो नमस्कार हो ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुति सगति मवदार्ये ,
-सद्गुप्ताना गुणगणकथा दापवादे च मौनम ।

सवस्याणि प्रियर्हाहवनी भावना चान्मत्तज्ज्वे,
मम्पद्यन्ता मम भवभवे मावदेतेऽपवग ॥१॥

मेरे शास्त्रों का अभ्यास हा जिन द्र व चरणोंको नमस्कार हो, आय (सुचरित) पुरुषा की मया सगति हा मदाचार परा यण पुरुषा क गुणगण का कथा हा पर क लोपा क कहने में मौन हो, सबक लिंग हिन मित वचन हो और अपने आत्मस्वरूप में भावना हो, मर मोक्ष का प्राप्ति पर्यंत य सब जन्म जन्म में प्राप्ति हो ॥ १ ॥

तव पादौ मम हृदये मम हृदये तव पदद्वये लीन
तिष्ठतु जिनेन्द्र । तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्ति ।

हे जिन द्र ! तब तक मुझ निर्वाण का प्राप्ति हो तब तक
आपके चरण मर मय में रह और मेरा हृदय आपके चरणों
लीन रहे ॥ २ ॥

अक्षरपरपयत्थहीण मत्ताहोण च जो मए भणिय
त तमहु गणगदेव । य मज्झवि दुक्कयाखय कुणउ ॥३॥

हे ज्ञान रूप स्वतः ! अक्षर पद और अक्षर मे तथा मात्रा से
हीन मैंने जो कहा हो तो उसको आप नमा करें और मेरे दुःखों
का क्षय करें ॥ ३ ॥

श्रालोचना—

.., इन्द्रामि नन्ते । समाहिभक्तिवाउभसगो कश्चो
तस्मालोचिउ, रयण्तायम्बपरमप्यज्भाणनवसणममा-
हिभत्तिए गिञ्चकान अचमि पूजेमि वदामि गुम्-
सामि दुवन्वन्वयो कम्मवत्तयो वोहिनाहा सुगइमण
समाहिमरण । जग्गुण्णमपत्ति हाउ मज्ज ।

ए भगवन् । मैंन समाहिभक्ति सम्बन्धा जायोत्सगविधा ।
वसका अद्य मैं श्रालोचना करना पाहता हू । रत्तात्रय स्वरूप
आर परमात्मा का ध्याना लक्षण समाधि का सत्र काल अर्चना
धरता हू पूजन करता हू वन्दना करता हू और नमस्कार करता
हू । मैंर तुला का ज्य हा करारा ज्य हा वाधि का लाभ
हो, मुगतिम गमा हा और भिनद्रव गुणोंका सम्यग् प्राप्ति हा ।

इति दशसिद्ध (रात्रिक) प्रतिक्रमण समाप्त

पाक्षिकादिप्रतिक्रमण-विधि

(शिष्यसधर्माण पाक्षिकादिप्रतिक्रम लध्वीभि
सिद्धश्रुताचाय भाक्ताभराचार्य वन्देरन् ।)

इम प्रतिक्रमण क प्रारम्भ म शिष्य मुनि और माधमीमुनि
मिल कर सिद्ध, मुत्त और आचार्य को गद्य भक्ति पन्थर आचार्य
का वन्दना करें । यह इम प्रकार करें-

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनाय, प्रतिष्ठापनसिद्धभक्ति
कायोत्सग करोम्यहम्—

हे भगवन् ! नमस्कार हो, आचार्य वन्दना में प्रारम्भिक
प्रतिष्ठापन सिद्ध भक्ति सम्बन्धी कायोत्सग करता हूँ—

[ऐसा प्रतिष्ठा कर ६ जाप्य दवे]

सम्मत्तणाराणदसणवीरियसुहुम तहेव अवगहण ।
अगुल्लहुमव्वावाह अट्ठगुणा हाति सिद्धाण ॥ १ ॥

सिद्धों के सम्यक्त्व, ज्ञान, दशन, धाय, सूदमत्व, अवगा-
हन, अगुल्लधु और अव्यावाधये आठ गुण होते हैं ॥ १ ॥

तवसिद्धे रायसिद्धे सजमसिद्धे चरित्तिसिद्धे य । एणाणम्मि
दसणम्मि य सिद्धे सिग्सा णमसामि ॥ २ ॥

तपसिद्ध नयसिद्ध मयमसिद्ध चरित्रमिद्ध, ज्ञानमें सिद्ध और
दशन में सिद्ध इन सब सिद्धा धो मन्तफ मुदावर नमस्कार
करता हूँ ॥ २ ॥

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनाया प्रतिष्ठापनश्रुतभक्ति-
कायोत्सगं करोम्यहम्—

हे भगवन् ! नमस्कार हो, आचार्यवन्दना में प्रतिष्ठापन
श्रुतभक्ति सम्बन्धी कायोत्सग करता हूँ—

[ऐसा प्रतिष्ठा कर ६ जाप्य दवे]

वीटीशत द्वादश चव वाटचा लक्षाण्यशीतिस्स्य-
धिकानि चव । पचाशद्वट्ठी च सहस्रसरयमेतच्छु चत पच

पद नमामि ॥ १ ॥ अरहतमातोपत्य गण्डुदेवेहि
ग गीय सम्म । पणमामि भक्तिजुता मुदण्णामहावहि
मिरमा २

एक मी बारह ब्राह्म, गरामी लाख अट्टावन हजार और पाच
पद प्रमाण इम भूत जान को मैं उतरवार करता हूँ ॥१॥

अतन्त देव द्वारा अयक्यम कथित और गणुपर देव द्वारा प्रथ
स्वम प्रथित अनुमान कर ममाधि को भक्तिम गुण हुआ मिर
मुता पर प्रणाम करता हूँ ॥॥

नमोऽस्तु आचार्यवदनाया प्रनिष्ठावनाचाय
भक्ति वायात्मगै करोम्यह ।

ह भगवन ! नामकार हा मैं आचार्यवदनामें प्रनिष्ठापन
आचार्य-भक्ति सम्बन्ध का फायो लग करता हूँ—

एमी प्रनिष्ठा पर ह जाय्य देव
श्रुतजनधिपारगेन्य अपरमनयिषावनापट्टमनिम्य ।
गुचरितानवोनिधिम्बो नमा गुरुम्बो गुणगुरुम्ब ॥१॥

जा भुतममुष्ट क पागामा हैं भवन और परमत क विना
वन में उरुमति हैं, सुरमित और तप क खनान हैं और गुणों
में महार हैं एमे गुरुर्मा का उमकार हा ॥ १ ॥

द्यतीग गुणममगे ववविहाचार्यरणसदमिते ।

मिम्माणुगहवुसले धम्भाडरिये मदा उन्दे ॥२॥

जा द्यतीग गुण मे प्रण हैं, पाच प्रकार क आचार के
पालन और पनान जान हैं, शिष्यों का अनुमत करन में वृत्त

हैं उस वर्माचायां का मैं मग वन्दना करता हूँ ॥ २ ॥

गुरुभक्तिसंजमेण य तरति ससारसागर धार ।

द्विष्णुति अट्ठवम्म जन्मणमरण ण पार्वान ॥ ३ ॥

गुरुभक्त करण स।शय्य धार ससार सागर स।तर जात है
आठ पर्मा वा छेद देन हैं और जन्म-मरण को प्राप्त नही
होत है ॥ ३ ॥

ये नित्य त्रतमत्रहोमनिरता ध्यानाग्निहोमाकुरा

पट्कमाभिरतास्तपोधनधना साधु-या गापव ।

शीलप्रावरणा गुणप्रहरणादचद्रावतेजोऽविवा

मोक्षद्वारमपाटनभटा प्रीणतु मा सावध ॥ ४ ॥

जा प्रति दिन श्रत मत्र और होम में-रित हैं, ध्यान रूप
अग्नि में स्तन करत बाल हैं आश्रयकापि पट्ट क्रियाओं में लां
हैं तपा रूप धन हा नि-क वन हैं जो साधुआ वा क्रियाओं क
साधन करन वाले हैं अठारह हजार शील ही जिनके पास
ओदन का वस्त्र है चौरासा लाख गुण हैं जिनके पास शस्त्र
है, चन्द्र और सूर्य के तन स भी जिनका तेज अधिक है,
मानद्वार के कपाट क पाटा-उद्घाटन करण में ना बड भट हैं
बाद्धा हैं, ऐसे साधु मेरी रक्षा कर ॥ ४ ॥

गुरव पातु तो नित्य ज्ञानदशननायका ।

चारित्राणवगम्भीरा मोक्षमार्गोपदेशका ॥ ५ ॥

समान गम्भार ह प्रौर भाषा । व उपदेश देनेवाल कम गु-
आपाय हमारा नित्य रक्ष करे ॥ ५ ॥

(तत एत वनातमम्भारपूजक "समता सवभूतेषु
पाठित्वा गणा शिष्यसधमगणयुक्त "सिद्धानुदूतधम इत्या-
दिषा गुर्वो सिद्धमिति साधोतथा, यत द्रान त्यागार्था य-
भक्ति वृत्तलोकनासहिता अहङ्कारकथाप्रकृत्या । मैसा म-
शिष्याणा सधमणा य माधारणा क्रिया ।)

इमक अनंतर एत दयता नमम्भार पूजक मग्ग, म-
इत्यादि श्लाक पत्रर शिष्यमुनि प्रौर सावर्भोर्मा म-
सिद्धानुदूतधम इत्यादि अचलिना महित प्रहसिद्ध नित्य-
वृहत् आलाचना महित यनन्द्रान् इत्यादि चाग्रिम इ-
द्वारक व आग द- । यह यह मूरि शिष्य प्रौर म-
सामाय क्रिया ह । वह इस प्रकार है-
नम श्री यद्यमानाय निधू तरतिलामन ।

सालाभाना त्रिलोकाना यद्विद्या दपणादने
निना अपना आ । स पाप-कल यह-
ई पस आयषमान अतिम नयिकर था नमम्भार
कि ज्ञान अलाय सुन्ति ताना सावो था
रण करता है ।

समता सवभूतेषु सयमे शुभभावना ।
आतरौद्रपर्वागत्यागरतादि मामायिष्ट ॥ ५ ॥

सध प्राणिया म समताभाय गु-
भायना हाना प्रौर आत्त गौ-
होना सामायिक माना गया है ॥ ५ ॥

सर्वाचारविगुद्वयं
त्रियाया पूवाचारानुक्रमेण

बदनास्तवसमेत सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहं ।

सम अतिचार्या (शापा) का त्रिगुद्विक अथ पाश्चिठ प्रति-
क्रमणम पूर्वाचार्या के अनुक्रमसे सकल कर्मा क क्षय के लिए
भाव पूजा, बदना और स्तव समेत सिद्ध भक्ति सम्बन्धा कायो-
त्सर्ग में करता हूँ—वसी प्रतिज्ञा कर

(शुभो अरहताण इत्यादिदृढक पठि वा फायात्सर्गं) कृत्वा
थोस्तमि इत्यादिक् त्रिभाय सिद्धानुद्धूतकम इत्यादि सिद्धभक्ति
सांचलिका पठन्

शुभो अरहताण इत्यादि सामायिक दृढक पढकर फायोत्सर्ग
करे फिर 'थोस्तमि' इत्यादि स्तव पढ कर अचलिका युक्त
मिद्धानुद्धनकर्म इत्यादि निम्न लिखन मिद्धभक्ति पढें—

मिद्ध भक्ति

मिद्धानुद्धूतकमप्रकृतिममुदया माधितात्मस्वभावान्

वदे सिद्धिप्रसिद्धयै तदनुपमगुण प्रप्रहावृष्टितुष्ट ॥

सिद्धि स्वात्मोपलब्धि प्रगुण गुणगणोच्छादि दोषापहारा
योग्योपादानयुक्त्या दृपद इह तयया हेमभापोपलब्धि'

उन उपमा रहित अनन्तगुण रूपा सिद्धभक्ति रक्षी के
आकर्षण से सन्तुष्ट हुआ मैं जिहान ज्ञानाररण प्राप्ति आठ
कर्मा के समुदाय का नष्ट कर लिया है और अज्ञानानादि लक्षण
अवने स्वप्न का साधा कर लिया है उा मग कम-मल से
अस्पष्ट सिद्धा का अपना आत्मा दृश्यरूप का प्राप्ति के लिए
बदना करता हूँ । आज के अनन्त नानानि स्वरूप का उपलब्धि
का नाम सिद्धि है वह प्रष्ट अनन्त ज्ञानानि गुणा के समुदाय
का उच्छेद कर देनेवाले ज्ञानाररण आदि तपों व निरास से

प्राप्त होता है। जिस तरह कि योग्य धमनी आदि कारणों की याचना में लोकमें पापाण से किट्ट कालिभा आदि मल के जुदा हो जान से स्वर्णके सद्भाव का प्राप्ति होती है। १।

नाभाव सिद्धिरिष्टा न निजगुणहतिस्तत्तपोभिन युक्ते-
रस्त्यात्मानादिबद्ध स्वकृतजफलभुक् तत्क्षया-मोक्ष-

भागी।

ज्ञाता द्रष्टा स्वेदहप्रमितिरुपसमाहारविस्तारधर्मा
ध्रौव्योत्पत्तिव्ययात्मा स्वगुणयुत इतो नायथा
माध्यसिद्धि ॥

न तो आत्मा का अभाव सिद्धि इष्ट है और नहि आत्मा के ज्ञान-मुक्त आदि गुणों का विनाश हा जाना सिद्धि इष्ट है। क्यों कि ये मोना हा वानें तपश्चरण स घटित नहीं हाती हैं। वोन गमा प्रेक्षापूजकारी नो आत्मा क अभाव और गुणा के विनाश के लिए व्रत तपश्चरण का अनुष्ठान करगा क्यों कि व्रत तपश्चरण आदि का अनुष्ठान ना आत्मा की दुर्गति से रक्षा करन के लिए और उमर गुणों का उ कपण करन क लिए किया जाता है। आत्मा है। वह अनादिवात म कमा से बंधा हुआ है और वहा अपन द्वाग दिय गय कर्मों का फल भाता है तथा वहा उन कर्मों क क्षय मे माक्षका भागा हाता है। वह आत्मा ज्ञाता है दृष्टा है, न जड मरु है और न चैतन्यमात्र स्वरूप जाला है। अपन द्वाग उपात्त दह के बगयर है न कि विश्वव्यापी। प्रदीप फ, तरह आत्म प्रदशा का सकोच और विस्तार धन जाला है तथा ध्रौव्य आदि और व्यय रूप है।

और अपने ज्ञानाणि गुणा रा युक्त हैं। इस प्रकार से अर्थात्
अथवा स्वगुणा मन्त्र क अभाव प्रकार से स्वरूप का उत्पत्ति-
रूप साध्य का सिद्धि कहा है । ५ ।

स त्वत्तवाह्यटेतुप्रभवविभ्रतमदृशानज्ञातचर्या-
सपद्धेनिप्रधातक्षतदुरिततया व्यञ्जिताचित्यसारं ॥
वैवल्यज्ञानदृष्टिप्रवरमुखमहावीर्यसम्यक्त्वलविध -
ज्योतिर्वातायनादिस्विरपरमगुणैरद्भुतैर्भासिमात् ॥

ज्ञानगोहादिन क क्षयापशमादिक आभ्यन्त
कारणा स और गुरुपदश पुस्तनादि बाह्यकारणा से निम्न
सम्पत्तेशान सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र रूपी सम्पत्ति उत्पन्न
होती है। यह सम्पत्ति कर्मा नाशकरन के लिए अद्वितीय
गद्य है। उस शस्त्र क प्रकार स घाति कम रूप दुरितता नष्ट
होता है उस दुरितता के नष्ट हो जाने से अत्रित्य माहात्म्य युक्त
केवल ज्ञान केवल ज्ञान प्रदरमुख, महावीर्य सम्यक्त्व आदि
अन्यजनासमवा लक्षिण्या तथा भासटल चमर, छत्र जय आदि
द्वयोपान धम प्रदत्त होत हैं। उनसे वह आत्मा प्रकाशमान हाता
हुआ स्वयभू बन जाता है। ३ ।

जानपश्यसमस्ता सममनुपरत मम्प्रतृप्तवितरन ।
धुव ध्वात नितान विचितमनुपमप्राणयत्नीशभाव
कुर्त्तसवप्रजानामपरमभिभवन् ज्योतिरात्मानमात्मा
आत्मयवात्मनासी क्षणमुपजनयत्स्वयभू प्रवृत्तः ।

समस्त लोक और अलोक, जो युगपत् प्रविष्टान् जानते, हुआ और स्वता हुआ, मन्थर वृत्ति को प्राप्त हुआ, अनन्तकाल को अपनी आत्मामें न्याप्त करना हुआ निमित्त मोहा धरमको निरवशेष धरता करता हुआ अमृत क समान हितकारक विद्य यचनो मे समाको वृत्त करता हुआ सर जायों का प्रभु करता हुआ, शरीर का कति क द्वारा या फलमान रूप ज्यतिके द्वारा इश्वरादिकके ज्ञान का और सूच्यद्रमादि क नेत्र का अभि-प करता हुआ वह आत्मा अपन ही द्वारा अपने में ही अपन स्वरूप को प्रविष्टान् निभग्न करता हुआ स्वयभू होता है । ५ ।

द्विदन्नेपान्नेपानि गलदलवली स्तरनतस्वभाव ।

मूक्षमत्वाग्या वगाहागुरलघुनगुरौ क्षायिक शोभमान

अयैश्चान्प्रव्यपोहप्र वणनिपत्रमप्राणिलठिप्रभाव ।

रुध्वं व्रज्यस्वभावात्स नयमुपगतो धाम्नि मत्तिष्ठनेऽग्रे

इसके अनन्तर वह स्वयभू आत्मा घाति कमा मे भिन्न निग डके ममान घलिष्ट अशिश्ट अघाति कर्मा का ध्यान करता हुआ अन त स्वभाव वाले ज्ञान ज्ञान आदि गुणों से मूक्षमत्व, अव गाहन अगुहलसुत्व आदि क्षायिक गुणों से आर उत्तरोत्तर कर्म प्रवृत्ति विशया के व्यामोह (१११) से और विशुद्ध हुआ आत्मा रूप विषय का प्राप्ति से निवृत्त माहात्म्य प्राप्त हुआ है उसे चौरामी क्षाप गणा तवर्ता अन्य गुणों से सुराभित हाता हुआ, उध्व गमन स्वभाव के कारण एक ही समय में ऊपर पहुँच कर अम स्थानमें स्थित हो जाता है । ५ ।

अन्याकाराप्तिहेतुन च भवति परो येन तेनाल्पहोन ।
 प्रागात्मोपात्तदेहप्रतिवृत्तिरुच्चिराकार एव ह्यमूर्तः ।
 क्षुत्तृष्णाश्वासकासज्वरमरणजरानिष्टयोगप्रमाह

व्यापत्याद्युग्रदुःखप्रभवभवहते कोऽस्य सौर्यस्य माता ६

जिससे कि वहां पर पहुँच कर वह आत्मा सबव्याप्य यह वह कणिका प्रमाण अन्य आकार की प्राप्ति का कारण श्री फोड़ नहीं है इसलिए पहले अपने के द्वारा प्राप्त किये गये देह आकार के समान कुछ कम दैदीन्यमान आकार का धारण होता है। क्षुधा तृषा, श्वास कास, ज्वर, मरण, जर अनिष्टमयोग, प्रमोह, नानातरह की आपत्तियाँ आदि ताग्र दुःखजिमसे उत्पन्न होते हैं ऐसे मसार के नाश हो जाने न इन्द्रसिद्धात्मा के इस सौम्य का प्रमाता इयत्ता का अवधारक कौन हो अथात् फोड़ नहा हो सकता। ६।

आत्मोपादानसिद्ध स्वयमतिशयवद्वीतबोध विशाल ।

वृद्धिह्लासव्यपत्त विषयविरहित नि प्रतिद्वन्द्वभावम् ॥

अयद्रव्यानपक्ष निरपममित शास्वत सकाल ।

उत्कृष्टान तसार परममुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ॥

सिद्धात्मा के सुख का उपादान कारण उनका आत्मा ही है जिससे वह उत्पन्न हाता है और किसी से वह उत्पन्न नहीं होता है। यह स्वयं परम अनिशय का प्राप्त है, सब बाधाओं से रहित होता है। आत्मा के सब असर्यात गदशोमें व्याप्त होने से विशाल [विस्तीर्ण] होता है। वृद्धि और ह्लास से रहित होता

है, सासारिक सुख की तरह इन्द्रियों के विषयों से उत्पन्न नहीं होता है। उस सुख का प्रतिद्वन्दी दुःख वहा नहीं है इस लिए वह प्रतिद्वन्दी स रहित होता है। वह अन्य साता वेदनीय कम द्रव्य की और पुष्प माला, वनिता चन्दनानि अन्य द्रव्य का अपेक्षा नहीं रखता है। उपमा रहित होता है। अप्रमित होता है अतण्य कभा विनाश को प्राप्त न होकर सर्वकाल रहता है। जिसका माहात्म्य परम प्रकप को प्राप्त है। ऐसा परम सुख उस अप्रधाम में स्थित सिद्ध परमात्मा के हाता है। नाथ क्षुत्तड्विनाशाद्विविधरसयुतैरनपानैरशुच्या ।

नास्पृष्टगन्धमाल्यैर्न हि मृदुशयनैर्ग्लानिनिद्राद्यभावात्
 श्रातङ्कातैरभावे तदुपशमनसद्भेषजानर्थतावद् ।
 दीपानथकयवद्वा व्यपगततिमिरे दृश्यमाने समन्ते ॥८॥

सिद्ध परमात्मा के लुधा, तृपाका अभाव है न्तु इसके नाना रसों से, युक्त अन्न और पान से अपवित्र पदार्थों से स्पर्श न होने से गन्ध, माला आदि सुगन्धित पदार्थों से निद्रा, ज्वर आदि का उनके अभाव होता है इन्द्रियों से शय्यासे कोई प्रयोजन नहीं होता है। जिस तरह इन्द्रियों का हरण करने वाली व्याधि से जनित पाडा के अन्वयन अथवा शमन करने वाला औषधि से अथवा अन्न के अन्वयन में सब सम्पूर्ण पदार्थ दृष्टिगोचर हों रहे हो तब इन्द्रियों से प्रयोजन नहीं होता है ॥८॥

साद्वत्सम्पत्समेता विविधनयतः प्रमद्वान्दृष्टि-

चपासिद्धा समन्तत्प्रवित्ततयज्ञमो विदग्देवाधिदेवा ।
भूता भव्या भवन्त मरुल नगति ये स्तूयमाना विशिष्ट-
स्ता सर्वा नीभ्यनतानिजिगमिपुरं त स्वल्प त्रिस-ध्रम्

य सिद्ध अन्त ज्ञानादि गुण रूप सपत्न से युक्त हैं, नाना-
प्रकारक नौमादि न्य पत्नशान्ति तप मायायिकायिक सयम,
भत्यानि ज्ञान शोपशमिकादि न्यशन तरु प्रफार धारिग म कृतक
त्यता वो प्राप्त हुए हैं । यन् धार त्रिनका यश पैना हआ है । सब
देवाक अत्रिंथ हैं । जा त्त फाल म हा गथ ह, घनमान फाल
महा रहे ह ओर आगा ी फाल में होग । मफा जगत म
जो भव्यवना द्वारा स्तूयमान हैं उन सब अन्त विद्याको लनपै
स्वरूप को शीघ्र प्राप्त करने की इच्छा रखता हआ में तीनों
संध्याआ म गस्कार करता ॥

अ चलिना

इच्छामि नते सिद्धमिति काउभसगो कथा तस्मा-
लोचेउ मम्मणाणसम्मरसणसम्मचारित्तजुताग अटठ-
विहरम्मविप्पमुज्जयाण अट्टगुणसण्णण उड्डलीयमत्थ-
यम्मि पइट्ठिपाण तग सिद्धाण एवमिद्धाण मज्जम
सिद्धाण चरित्तमिद्धाण गताताणागदवट्टमाण फालत्तय
सिद्धाण सव्वसिद्धाण मया गिच्चराल जवेमि पूजेमि
बदामि गमस्तामि दुक्खवखमो कम्मवत्तमो रोहिदाहो
सुगइमण समाहिमरण जिणगुण सपत्ति होउ मज्ज

इसका अर्थ पहले दैवसिद्ध प्रतिक्रमण में पृष्ठ ७ पर कहा जा चुका है।

चारित्र्य भक्ति -

येने द्रान्भुवनत्रयस्य विलसत्केयूरहारागदान्,
भास्वन्मौलिमणिप्रभाप्रविसरोत्तुगीत्तमाङ्गाततान् ।
स्वेपा पादपयोर्हेषु मृनयश्चक्रु प्रकाम सदा
वदे पञ्चतय तमद्य निगदन्नाचारमभ्यञ्चितम् ।

चिनके केयूर हार, अद्भुत घड़े सुन्दर हैं, दैदीप्यमान मुकुटों में
जडित मणियों का प्रभा के विस्तार से चिनका मस्तक उन्नत है
ऐसे तीन भुवन के स्वामी इन्द्रों को जिस आचार के अनुष्ठान
से मुनि अपन चरण-कमला में अतिशय रूपसे सदा नतमस्तक
कर लेते हैं उस ज्ञानाचाराणि पचावयव पूज्य आचार को
कहता हुआ मैं 'श्रुतज्ञान के अनन्तर' नमस्कार करता हूँ ।

अर्थव्यजनतद्द्वयाधिकलताकालापधाप्रथया,
स्वाचार्याद्यनपन्हवो बहुमतिश्चेत्यष्टधा व्याहृतम् ।
श्रीमज्जातिकुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽजसा,
ज्ञानाचारमह त्रिधा प्रणिपताम्युद्धूतये नमणाम् ।२।

आ युक्त जाति और कुल ४ शोतक श्रुत या घम नीर्थ के
कर्ता भगवान् ने परमार्थ से अर्थ (१) व्यजन (२) और
अभय से [३] परिपूर्ण, सध्यादिक से विविक्त पूर्वाणहादि
काल (४) उपधा (नियम विशेष) (५) त्रिनय (६) पंचा-

चार क उपदेश या प्रणेत्या अपने आचार्यका अनिह्वन (७)
 और द्रव्यभाव स्वरूप बहुमान इस प्रकार आठ प्रकार का
 ज्ञानाचार ब्रह्मा है उस ज्ञानाचार को मैं अपने मन, वचन और
 काय से नम-भक्त का प्रचालन करनके लिए नमस्कार करता हूँ
 शकादृष्टि-विमोहकाक्षणविधिव्यावृत्तिमद्भ्रता,
 वात्सल्य विचिकित्सनादुपरति, धर्मोपवृ ह्नि या ।
 शक्त्या शासनदीपन हितपयाद् भ्रष्टस्य सस्थापन,
 वन्द दशनगोचर सुचरित मूर्ध्ना नमनादरात् । ३ ।

शका, दृष्टिमोह, और वाक्ता की व्यावृत्ति में उत्परता अर्थात्
 तूनि शक्ति, अमूढदृष्टित्व निष्कांतित, वात्सल्य, निजुगुप्ता,
 निर्विचिकित्सत्व, उत्तमज्ञमादि दशलाक्षणिक धर्म की उपवृ ह्नि
 क्रिया, शक्ति क अनुसार धर्म का प्रभावना, और हितपथ अर्थात्
 रत्नपयमाग स परिभ्रष्ट को पुन उसा में स्थिर करना यह दशन
 विषयक दशनाचार ह् गणधरादि द्वारा आचरित दशनाचार को
 मैं आदर पूर्वक सिर भुकाता हुआ नमस्कार करता हूँ । ३ ।

एकांते शगनापवेशाकृति सतापन तानवम्,

सहयावृत्तिनिव धनामनशन बिष्वाणमर्द्धोदरम् ।

त्याग चेद्विद्यदालिनो भदयत् स्वादो रसस्यानिशम्,

पोढा बाह्यमह स्तुवे शिवगतिगाप्त्यभ्युपाय तप । ४ ।

स्त्री, पशु पद म विवर्जित एकान स्थान में सोना और
 बैठना अथात् विविक्तशय आसन तप, शरीर को सताप देना

अथात काय बलेरा तप, वृत्तिका हेतुमूत संन्या अर्थात् वृत्ति-
परिमग्न्यान तप, धनशासनप अद्वैतर भाषा अर्थात् अवभौदर्य
तप, इन्द्रिय रूपी हस्ता का उमत्त बरनवाभ स्याद्दु और वृष्य
रसां का त्याग अर्थात् रसवगित्वाग तप, इम प्रकार भासगति क
उपाय छह प्रकार क माह्य तप आचार की में मुनि करता हैं ॥

स्वाध्याय शुभमरणश्च्युतग्रत सप्रत्यवस्थापाम्,
ध्यान ध्यापृतिरामयाविनि गुरी वृद्धे च बाले यती ।
वापोत्मजासत्त्रिया विायइत्यव तप पट्विध,
वदेऽभ्यतरमत्तरगबलयद्विद्वेषिविध्वसनम् । ५ ।

स्वाध्याय, शुभकर्म में अयुत ध्यक्रिया की पुन सभी में
स्थापन करना अर्थात् प्रायश्चित्त, ध्यान, रागी गुरु, जरार्पादित
शरीरयुक्त वृद्ध और बाल यति में यथावृत्त, वापोत्मर्जनसत्
क्रिया और विनय इस प्रकार अतरग और बलिष्ठ क्राधादिशा-
त्र ओं क विध्वंसक छह प्रकार क आभ्यन्तर तप आचार की
बन्दना करता हैं । ५ ।

सम्यग्ज्ञानविलोचनस्य दधत श्रद्धामह-गते,
वीर्याविनिगूहनेन तपसि स्त्रम्य प्रयत्नाद्यते ।
या वृत्तिन्तरगीव नीरविपरा लघ्वी भवोदचतो,
वीर्याचारमह तमूजितगुण वदे सतामचितम् । ६ ।

यथावस्थित वस्तुमोही ज्ञान रूप नत्र बाल, अहन्त के मन में
भद्धान रखन बाल सम्यग्ज्ञान और सम्यग्दर्शन क धारक मुनि

अपने धीर्य को न छिपाकर जो अत्यन्त आदरके साथ धारह प्रवार के तप में प्रवृत्ति है, उनकी वह प्रवृत्ति जैसे छिद्र रहित हल्की नात्र समुद्र के पार कर देती है उस तरह निर्दोष ससार समुद्र के पार को प्राप्त कर देने वाला तरणी है एम वार्याचार को में घन्दना करता है । जो पि वायाचार एभोंक समुल्लस करले में और दुःखर तप के करने में गणधर देवादिद्वारा पूज्य उन्नित गुण है । ६।

तिष्ठ सत्संगुप्तयस्तनुमनोभापानिमित्तोदया,

पचेयादिसमाश्रया समितय पचव्रतानीत्यपि ।

चारित्र्योपहित ययोदशतय पूर्व न दृष्ट परं-

राचार परमेष्ठिनो जिनपतेर्वीर नमामो वयम् ॥

काय, मन, और वचन कनिमित्त स उपपन्न तीन प्रशस्त गुप्तिया, इर्ष्या आदि पांच समितिया और अहिंसादि पांच घत ये सब मिल कर चारित्र्य है । इस चारित्र्य से युक्त तेरह प्रवार का चारित्र्यारार हाता है जा परमेष्ठी निनपति अन्तिम तार्थ कर वीरभगवान् ने पूव अ वनाय करों द्वारा नहीं कहा गया है । पूव तार्थ करों ने सर्वमावर्थापरित लक्षण एरु हा चारित्र्य कहा है । क्यों कि उनके समय के शिष्य न ऋजुमति थे और न जडमति । किन्तु वधमान तीथ कर क समय के शिष्य जडमति और आदिनाय क समय के शिष्य ऋजुमति थे उन ऋजुमति और जडमति शिष्योंके दिनार्थ आदि प्रभुने और वीर प्रभुने चारित्र्य को तेरह भेदों में विभक्त कर प्रतिपादन किया और तीथ करा ने तेरह

भेद न कर उसे सर्वसावद्य विरति रूप हा प्रतिपादन किया ।
इस तरह वीर भगवान के द्वारा उपविष्ट तेरह प्रकार के चारित्र
को हम नमस्कार करते हैं । ७ ।

आचार ग्रहपचभेदमुदित तीथ पर मगल,
निग्रन्थानपि सच्चरित्रमहतो ब्रह्म समग्रान्यतीन् ।
आत्माधीनमुखोऽयामनुपमा लक्ष्मीमविध्वंसिनी-
मिच्छेत्केवलदशनावगमनप्रज्यप्रकाशोज्ज्वलाम

जिमही आत्माधान सुख से उत्पत्ति है, जो उपमा रहित है,
कभी नाश न होनेवाला है, केवल दशन और केवल ज्ञान के
प्रचुर प्रकाश में उजल है एसा मोक्ष लक्ष्मी का इच्छा करता
हुआ में उत्कृष्ट मगलरूप जिससे भायजन भगोदधि से तिरते है
ऐसे तीथरूप ज्ञानान् पाच भे । में सहित कहे गये आचार को
और सचारित्र से महान् समस्त निग्रन्थ यतिया का वर्णना
करता हू ॥ ८ ॥

अज्ञानाद्यदवीरुत नियमिनोऽनतिष्यह चान्यथा ।
तस्मिन्नजितमस्यति पतिनव चैनो निराकुबति ॥
दृत्ते सप्ततयी निधि सुतपसामृद्धि नयत्यद्भुतम् ।
तन्मिथ्या गुरु दुष्यत भवतु मे स्व निदितो निदित ॥

मैंने अज्ञानवश शास्त्रोक्त नियमों के विरुद्ध मुनियों की
प्रवृत्ति कराई है या मैंने स्वयं विरुद्ध प्रवृत्ति की है उस अन्यथा
प्रवृत्ति के फल बराने में जो पाप उपार्जित हुआ है वह चारित्र
के सद्भाव में नष्ट हो जाता है और अभिनय पाप भी नष्ट हो

जाता है तथा चारित्र्य क होन पर मुनि उत्तम तप सम्बन्धी आश्चर्य कारक बुद्धि आदि सात प्रकार का श्रद्धिया या प्राप्त होता है। ऐसे इस उत्तम चारित्र्य के अनुष्ठान करन में चा मन प्रमाद्वश गुरु निन्दित पाप उपासन किथा ह वह भर अपनी आत्म निन्दा करने वाले के मिथ्या हावे ॥ ६ ॥

ससार व्यसनाहति प्रचलिता नित्योदयप्रार्थिन ।

प्रत्यासन्न विमुक्तय सुमतय शातनस प्राणिन

मीक्षस्यैव कृत विशालभुल मोपानमुच्चैस्तराम,

आरोहन्तु चरित्र मुत्तममिद जैनेन्द्रमोजस्विन । १०

जा ससार मन्वन्धी दु खों म पाडित हैं, जो प्रतिदिन मोक्ष लक्ष्मा की प्राथना करन में, निन्दी मुक्ति निन्दा है, बुद्धि समी चीन है, निन्दा पाप शान्त हा गया है ऐसे तेनवा प्राणा मोक्ष क लिए किय गये विशाल अनुपम मापान (जान) क समान जिनन्दात् इस उत्तम चारित्र्य को धारण करे ।

अचलिका

इच्छामि भते ! चारित्तभक्तिगात्रोस्सगो कयो
तस्स आलोचेठ मम्मणाणजोयस्म मम्मत्ताहिद्वियस्स
सव्वपहाणस्स णिव्वाणमग्गास्स कम्मणिज्जरफलस्य
खमाहारस्स पचमहव्वयसपण्णस्स तिगुत्तिगुत्तस्स पच-
समिदिजुत्तस्स णाणज्झाण साहणस्स समया इय पवे-

अयस्स सम्मचारित्तस्स सया अचिन्ति, पूरेण, दन्देण
 एमसामि, दुखवखओ कम्मवत्तओ, बोद्धिणां, सु-
 गमण, समाहिमरण जिणानुणसपनि होउ च्छं।

ह भगवन् । मैं चारित्र्यमन्त्रि मन्दर करिणां वि-
 उसके दोषों की आलोचना करना चाहता हूँ। मैं
 मे युक्त है, सम्यक्त्व से अविष्टित है सब महाप्रज्ञों के साथ
 है, निर्वाण का मार्ग है, कर्मा का निवृत्त है। मैं
 का आधार है, पाच महाप्रज्ञों से युक्त है। मैं
 मरचित है, पाच समितियों से युक्त है, मैं
 साधन है, और समता क समात प्रज्ञा है। मैं
 की मैं नित्यकाल अर्था करता हूँ, पूरा महाप्रज्ञा
 हूँ और नमस्कार करता हूँ। मैं महाप्रज्ञा से
 ज्ञय होवे, बोधिका लाभ होवे, मुक्ति होवे। मैं
 मरण होवे और त्रिनेत्र के गुणों से युक्त हूँ।

बृहत् आलोचना

श्री गौतम स्वामी मुनिों द्वारा प्रणीत
 मादि द्वारा प्रतिदिन उपासित ईश्वरों के
 विशुद्धि के लिए ॥ १० गणना के द्वारा
 दिवसात हुए कहते हैं—

इच्छामि भते । प्रहृष्टो ह्यस्यैव इ

दिवसाण अट्ठण्ह राईण इच्छामि भते ।

शाणायारो दसणायारो वीरियायारो तवायारो चरि-
त्तायारो चेदि ।

इ भगवन् । ज्ञानाचार, दर्शनाचार, तप आचार, वीर्या
चार और चारित्राचार इस प्रकार पाँच प्रकार के आचार हैं ।
अष्टमियम्मि पाठ की अपेक्षा आष्टमिक म अष्टमियं पाठ की अपेक्षा
आठ दिन और आठरात्रि के भीतर जो ज्ञानादिप म अतिचार
लगा है उसका आलोचना करने की इच्छा करता हूँ-

इच्छामि भन्त । पवित्रयम्मि आलाचेउ पण्णर-
सण्ह दिवसाण पण्णरसण्ह राईण अब्भतराओ पव
विहो आयारो शाणायारो दसणायारो चरित्तायारो
तवायारो वीरियायारो चेदि ।

इ भगवन् । पाक्षिप में या दिन गणनाका अपना पन्द्रह
दिन और पन्द्रह रात्रि के भीतर ज्ञानाचार, दर्शनाचार, तप
आचार, वीर्याचार और चारित्राचार इस प्रकार पांच प्रकार
के आचार म अतिचार लगा है उसका आलोचना करना
चाहता हूँ ।

इच्छामि भन्ते । चउमासयम्मि आलाचेउ,
चउण्ह मासाण अट्ठण्ह पवखाण वीसुत्तरसयदिवसाण
वीसुत्तरसयराइण अब्भतराओ पचविहो आयारो शाणा-
यारो दसणायारो चरित्तायारो तवायारो वीरियायारो
चेदि ।

हे भगवन् ! चार महानों में या आठ पक्ष पञ्चमी वाम दिन और एन सौ वीम रात के भीतर ज्ञानाचार, दशनाचार, तप आचार वीर्याचार और चारित्राचार इस प्रकार पाच प्रकार के आचार में अतिचार लगा है उसकी आलोचना करना चाहता हूँ

इच्छामि भते ! मवच्छरियम्मि आलोचेउ वार-सण्ह मासाण चउवोसण्ह पवखाण तिण्ह छावट्ठिस-यदिवसाण, तिण्ह छावट्ठिसयराईण अब्भतरादो पच-विहो आयारो णाणायारो दसणायारो चरित्तायारो तवायारो वीरियायारो चेदि ।

हे भगवन् ! वप भर म या वारह मास चौवोस पक्ष, तीन सौ छ्यामठ दिन और तीन सौ छ्यामठ रात के भीतर ज्ञानाचार, दशनाचार, तप आचार वीर्याचार और चारित्राचार म इस प्रकार पाच प्रकार के आचार म अतिचार लगा है उसकी आलोचना करना चाहता हूँ । ❀

तत्थ णाणायारो काले त्रिणये उमहाणे बहुमाणे तहन अण्हणणे विजण तत्थ तदुभय चेदि णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदो से अब्भतरहीण वा सरहीण वा पट्ठीण वा विजणहीण वा अत्थहीण वा

❀ इस प्रकार धार्ष्टमिक, पाक्षिक चातुर्मासिक और साम्प्रत्सरिक प्रतिव्रमण के समय आलोचना करे ।

गथहोण वा थाएसु वा थुईसु वा अत्यवसाणेषु वा
 अणयोगेषु वा अणियोगदारेसु वा अकाले सञ्जाओ
 षदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णिदो काले
 वा परिहाविदो अच्चाकारिद मिच्छामेलिद आमेलिद
 वा मेलिद अणणहादिण्ण अणणहा पडिच्छिद आवासएसु
 परिहीणदाए तस्म मिच्छा मे दुक्कड ॥ १ ॥

इस पाच प्रकार वे आचार म पहला ज्ञानाचार है उसके
 मतितान श्रुतज्ञान, अरुधि ज्ञान, मग पययज्ञान और कंबल
 ज्ञान इम प्रकार पाच भेद होत हण भी यहा पर श्रुतज्ञान का ही
 प्रहण है । क्योंकि उसीका कालादि आठ प्रकार से आचरण संभव
 है । श्रुतज्ञानाचार आठ प्रकार का है । मग या प्रहण उल्लापात
 आदि अकाला को छाडकर मासर्गिक प्राणेषिक काला म शास्त्र
 का पठन पाठन, श्रवण-श्रावण, चिन्तन परिवर्तन, व्याख्यान
 आदि करना कालाचार है (१) पर्यंकाणि सुप्पामना से बैठकर
 पायिक वाचिक और मानसिक शुद्ध परिणामा से पठन-पाठन
 आदि करना विनयागार है (२) अवमह (नियम) विशेष
 पूर्वक पठन-पाठनादि करना उपधानाचार है (३) गन्ध पुष्प
 आदि द्रव्य पूजा और सिद्ध श्रुत और गुरु नक्ति रूप भाव पूजा
 पूर्वक पठन-पाठन आदि करना बहुमानाचार है (४) जिस
 गुरु से पढा है उस गुरु का नाम न छिपाकर उसका नाम कहना
 या जिस शास्त्रको पढकर ज्ञाना हुआ है उसे न छिपाकर उसा

शास्त्र का नाम बताना अनिर्हनाचार है (५) वर्ण पद, वाक्य का शुद्धि पूरक शास्त्रों का पठन-पाठनादि करना व्यननाचार है (६) अथ के अनुसूल पठन-पाठन आदि करना अधाचार है (७) तथा शब्द और अर्थ का शुद्धि पूरक पठन-पाठन दि करना उभयाचार है (८) काल विनय उपवान, बहमान, अनिन्हव, व्यनन शुद्ध, अथशुद्ध और उभयशुद्ध इस प्रकार आठ प्रकार का ज्ञानाचार है उसका अनेक तार्थिकर दवा के गुणा का व्याख्यान करने वाले स्तवनों में एक तीर्थंकर के गुणावा व्याख्यान करने वाला स्तुतियों में चारित्र और पुराण इन प्रथारथानों में प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग इन चार अनुयोगोंमें कृति धेना आदि चोवास अनुयोग द्वारों में स्वरहन, सुप्रतिनिद्धत पद महान, कफाराणि व्यनन हीन, अर्थहन मान्य अधिदाराणि गहित अथ हात पठन पाठन आदि करके परिहापन किया, सव्या महान ज्ञानापाताणि अस्त्राध्याय काल में आगम का स्वाध्याय किया, पराया और स्वय करत हृष्ट की अनुमोत्या का आगम विहित गामर्गिकाणि काल में स्वाध्याय नहीं किया, विना विचारे अथवा अरुण चत्वा उन्मारण किया, विसाधो क्तिता अधिद्यमान के साथ मिलाया शास्त्र के अन्य अवयव को किसी अन्य अवयव के साथ जोडा उच्चध्वनि युक्त पाठ का नाचध्वनि वाले पाठ के साथ और नाचध्वनि युक्त पाठ को उच्चध्वनि वाले पाठके साथ जोड कर पढा, अन्यथा कहा, अन्यथा महण किया छह आचर्यकां में उनक कालानुसार अनुष्ठान कर परिहीनता करके ज्ञानाचार का परिहापन किया

उस ज्ञानाचार परिहापन सम्बन्धी मरे दुष्टत में विफलता हो या
ज्ञानाचार परिहापन सम्बन्धी मेरा दुष्टत मिथ्या-निष्फल हो ।

दसणायारो अट्टविहो एिस्सकिय एियकस्सिय
एिन्विदिगिच्छा अमूढदिट्ठी य उवगूहणठिदिक्करण
वच्छल्ल पहावणा चेदि । अट्टविहो परिहाविदो सकाए
कराए विदिगिच्छाए अण्णदिट्ठी पससणदाए परपाखड
पससणदाए अणायदणसेवणादाए अवच्छलदाए अप्प-
हावणादाए तस्स मिच्छा मे दुक्कड । २ ।

दशनाचार नि शक्ति नि काहित, निविचिकित्सत्व
अमूढदृष्टि, उपगृहण, स्थितिकरण, वास्तव्य और प्रभायना इ
प्रकार आठ प्रकार का है । जिनोक्त तत्त्व म यह इस प्रकार है या
अन्य प्रकार है मेमा शका न करना निश्रुतिनाचार है । उस
लोकम धन-धान्य, हिरण्य-सुवर्ण आदि धर्मय का और परलोक
में बलदेव वासुदेव, चक्रवर्ती राजे, महाराजे आदि पना की
तथा एकान्तवाद स दूषित परमता की आवाजा न करना
निष्प्राप्तिनाचार है । मुनिया क अग, मल आदि म ग्लानि न
करना निर्विचिकित्माचार है । लोफिक आचार वैदिक आचार,
और अन्य कुभतामें तना अथ मिथ्यादथा में माह न
करना अमूढदृष्टिनाचार है । किसी कारण स सम्य-
गृष्टिया म उत्पन्न हुए दोषों का प्रच्छादन करना या प्रवट न
करना उपगृहणाचार है । सम्यग्शन, ज्ञान और धारिन्न स

बलवत्त हृण न्यक्तिया को फिर मे उनमें स्थिर करना स्थिती-
करणाचार है। साधर्मीनने भ गोवत्सवत् स्नह परना वात्स-
ल्याचार है और विशिष्ट स्नपा, पृना, गान तप आदि के द्वारा
तथा विद्या-मंत्रों द्वारा निनशासन का माहात्म्य प्रकट करना
प्रभावनाचार है। इस प्रकार ऋष्ट त्रिध दशनाचारना निनोक्त
सर्व प्रतिपात्ति रूप स हैं या नहा पर्मा आराज्ञा मे इस व्रत,
तप, धर्म आदि के माहात्म्यस मुझे अमुक फल प्राप्त हो ऐसी
आगामा भागा दा वांछासे, स्वभावत अशुचि योग रत्नत्रय
से पवित्र मुनियों के काय में जुगुप्सा (लानि) से, मिथ्यामनों
की प्रशंसा मे परपापटियों की प्रशंसा मे दह अनायतनों की
मेगा मे साधर्मीन में प्रीति करने मे और स्तपनादि द्वारा
त्रिन शासन का माहात्म्य प्रकट न कर क वा परिहापन (लण्डा)
किया है, उस दशनाचार क पारहापन मन्बन्धा मरे दुष्कृत
मिथ्या-विफलता हावे या मेगा दुष्टन मिथ्या- विफल होवे ॥

तवायारो वारसविहो अब्भतरो छ्विहो वाहिरो
छ्विहो चेदि तत्थ वाहिरो अणसण अणमोदग्गि वित्ति-
परिसखा समपरिच्चाओ सरीर परिच्चाओ विवित्त
सयणासण चेदि । तत्थ अब्भतरो पायच्छिन्ने विणओ
वेज्जावच्च सज्जाओ भाण विउसगो चेदि । अब्भ-
तर वाहिर वारसविह तपो कम्म ए कद णिसण्णेश
पडिवक्कन तस्म मिच्छा मे दुक्कड । ३ ।

तप आचार चारह प्रकार का है द्दह वाह्य तपाचार औ द्दह अभ्यन्तरतपाचार । उनमें से बाह्य तपाचार क अनश (उपवास), अन्नमौन्य (अर्घांतर या अधभुक्ति आदि) श्रुति परिसरजन, घृतदुग्ध आदि रसों का त्याग, शरार परित्याग आतापनादि द्वारा कायक्लेश, और विविक्त शय्यासन भेद हैं तथा आभ्यन्तर तपाचार क प्रायश्चित्त, जितय, वैश्वृत्य, श्राध्याय, ध्यान और व्युत्सर्ग द्दह भेद हैं उक्त चार प्रकार का तप कर्म परिषद आदिना से पीडित होकर मैं न किया किन्तु परीषद आदि से पीडित होकर छाड़ दिया । उ चारह प्रकार के तपाचार के परिहापन सम्बन्धा मेरे दुष्कृत विफल । हावे वा मेरा दुष्कृत विफल होन ॥ ३ ॥

वीरियायारी पचत्रिहो परिहाविदो वरवीरिय परि-
क्वमेण जहुत्तमाणेण बलेण वीरिएण परिवकमेण णिगू
हिय तवो कम्म ए वद णिसण्णेण पडिक्कत तस्स
मिच्छा मे दुक्कट । ४ ।

पाच प्रकार क वीर्याचार का परिहापन क्रिया । तपश्चरण करने में सामर्थ्य प्रकट करना वीर्याचार है । सामर्थ्य को द्विपा लेना परिहापन है । परनायपरिहम, यथोत्तमान, बल, धार्य और परक्रम य पाच वाय के भेद हैं । नाय क पराक्रम (उत्साह) का नाम वाय पराक्रम है उत्कृष्ट वाय का पराक्रम कहते हैं । इस वरवाय पराक्रम से अनशनादि तप करना चाहिए । आगम ममान (परिमाण) से तप करना कहा गया है उसा मान से

तप करना यथोक्तमान धाय वहलाता है । आगम म सिष्य-
ग्राम का विधि या चन्द्रायण ग्रहों की विधि तिसमान स पही
गइ है अथवा कायात्सग करन का विधि कहा नी वार वहाँ
इच्छास वार पच नमस्कार मंत्र का जाप दा रूप कहा गई है
वहाँ उसी मान स उमा रूप तप करना चाहिये । आहार।दि
अथ शारीरिक चल और श्वाभाविक आगम सामध्य अर्थान्
आत्म शक्ति के अनुसार तप करना चाहिये । आगम म प्रउ
पालन वा जो उत्कृष्ट क्रम कहा गया है जैम मूल गुणा वा अनु-
ष्ठान करन बाल का उत्तरगुणों का अनुष्ठान करना चाहिये न
कि विपरीत इसका नाम पराक्रम धाय है । वक्ष पाष प्रवार क
र्ष, याचार का प्रकट करन बाल मुनि के द्वारा जब तप किया
जाता है तब पात्र प्रकार का योयाचार अनुष्ठित होता है और
जब परापह आदि स पीडित हाकर उस प्रकार क तप का अनु-
ष्ठान नहीं किया जाता है किन्तु परिपह आदि से पीडित हाकर
तपक्रम त्याग दिया जाता है तब तप करने में धाय क हात हुण
भा वह धाय निगूहिन अधातू अप्रकृति हा (द्विप) जाता है ।
इस प्रकार पात्र प्रकार का धायार परिहापित (राडिन) होता
है । इसलिये नस धाय परिहापन सम्बन्धा मेर दुष्टत में विष-
लता होव या वह धाय परिहापन सम्बन्धा मेर दुष्टत विफल
होवे ॥ ४ ॥

चरित्तायागे तेरसविहो परिहाविदो पत्रमहवयाणि
पच समिटीयो तिगुचीप्रो चेदि । तस्य पदम महव्यद

पाणादिवान्नादो वेरमण से पुढविकाइया जीवा अस-
खेज्जा सखेज्जा आउकाइया जीवा असखेज्जा सगेज्जा
वाउकाइया जीवा असखेज्जा सखेज्जा वण्फदिकाइया
जीवा अणताणता हरिया वीया अ कुर, छिण्णा भिण्णा
तस्स उहाअण परिदावण उवघादो कदो वा कारिदो वा
कीरतो वा समणु मण्णदो तस्म मिच्छा मे दुक्कड ।

पाच महाव्रत, पांच सभिति और तीन गुणित इस प्रकार
मिलकर तरह प्रकार चारित्राचार होता है वह शुद्ध से सद्धित
हूआ । तेरह प्रकार चारित्राचार में पहला प्राणातिपातसे त्रिरमण
नामका महाव्रत है । प्राण दश है-पाच इंद्रिया, तान बल, शरामो
चंद्रवास और आयु इस प्रकार दश । इन प्राणों के धारक एके-
न्द्रियादि के भेद से पाच प्रकार के जीव हैं । उनमें से प्रथम एके-
न्द्रिय जीवों का प्ररूपण करने हुए कहते हैं—

असखातासख्यात पृथिवाकायिक जीव असखातासख्यात
जल कायिक जीव, असख्यातामख्यात अन्तिकायिक नाथ, अस-
ख्यातासख्यात वायुकायिक जीव और छंदे भेदे गये अतः तानंत
हरित, बाज और अकुर नामक वनस्पतिकायिक जीव । उस पाच
प्रकार के एन्द्रिय जीवों का उत्तापन, परित्तापन, त्रिराघन और
चपपात मने स्वयं किया हो, अन्यके द्वारा कराया हा और अन्य
शय करता हुआ अच्छा माना हो उस पृथिवीकायिकादि एके-
न्द्रिय जीवों के उत्तापना सम्बन्धी मेरा दुष्कृत मिथ्या हो ।

जाव असरयातासरयात हें । वे ई-कुन्धु, देहिक विन्धु गोभि
गाजी, मावाड (खटमल) पिपीलिका इत्यादि और भी तीन
इन्द्रिय जीवों का उत्तापन, परितापन, विराधन और उपघात
मेंने स्वय किया हो अन्य से पराया हो, स्वय करते हुए को अनु
मोदना की हो । उस तीन इन्द्रिय जीवों के उत्तापनादिक स उपा
पित मरा दुष्ट मिथ्या हो ।

चतुरदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा दसमसय
माखय पयग कीड भमर महयगि गोमाच्छयाइया एदति
उदावण पारदावण विराहण उवघादो कदो वा कारिदो
वा कीरतो वा समणुमण्णदो तस्स मिच्छा मे दुवरुड

अब चौइन्द्रिय जीवों क भेद दिखा कर उनके उपघातादि
से व्यावृत्ति लिखात हुए रहते हैं । चौइन्द्रिय जाव असख्याता-
सख्यात होते हैं । वे हैं-दशक (हास) मशक (मच्छर), मक्का
पतंग कट, भमर (भौरा), मधुमच्छिका गोमच्छिका इत्यादि और
भी उनका उत्तापन, परितापन विराधन और उपघात मेंने स्वय
दिया हा, अन्य स कराया हा और स्वय करते हुए अन्य स
अनुमोदना का हा । उस चौइन्द्रिय जावा क उत्तापनादि स उपा
पित किया हुआ दुष्ट मेरे मिथ्या हो ।

पचिदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा अण्डाइया
पोताइया जराइया रमाइया संसेदिमा सम्मुच्छिमा

उब्भेदया उ (वादिमा अवि चउरासोदि जीणि पमुह
सदसहस्सेसु एदेसि उदायण परिदावण तिराहण उव-
घादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णिदो
तस्स मिच्छा मे दुक्कड ॥ १ ॥

अब पचेन्द्रिय जीवों का प्ररूपण कर उनके उत्तापनादिक से विरति का प्ररूपण करत हुए कहते हैं । पचेन्द्रिय जाय अमख्या तासख्यात होते हैं व हाते में अडापिक, पोतायिक, जरायिक, रसायिक, सत्वदिम, सम्मून्दिम उद्धेदिम उपपादिम इत्यादि और पी चोरासा लाख यानियों में प्रमुख पचेन्द्रिय जाय । उन अडायिकादि पचेन्द्रिय जीवों का उत्तापन, परितापन तिराधन और उपघात मैंने स्वय किया हा कराया हो स्वय करते हुए की अनुमादना का हा वह पचेन्द्रिय जीवों के उत्तापनादिक सबन्धों मेरा दृष्कृत मिध्या हो ॥ १ ॥

आहावरे दुब्बे महव्वदे मुसावादादो वेरमण मे
कोडेण वा भासेण वा माएण वा लोहेण वा राएण वा
दोसेण वा मोहण वा हस्सेण वा भएण वा पमादेण वा
पेम्मेण वा पिवामेण वा लज्जेण वा गारवेण वा अणा-
दरेण वा केण वि कारणेण जादेण वा सब्बो मुसावा-
दो भासिओ भासाविओ भासिज्जती वि समणुम-
णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ॥ २ ॥

यदि मुझे पहले महाव्रत में प्राणों के व्यतिपात से विरक्त होना चाहिए तो दूसरे महाव्रत में क्या करना चाहिये यह बताते हैं—अथ अन्य दूसरे महाव्रत में मृषावाद से विरमण होना चाहिए वह मृषावाद क्रोधस, मानसे मायामे, लोभसे, राग स, द्वेष से, मोहसे हास्य स, भय से, प्रमाद से, प्रेम (स्नेह) स, पिपासा विषय मेवत की घृद्धि स, लज्जास, गारय (महस्वाकाङ्क्षा) से और भी किसी कारण से सब अल्प अमत्य स्वयं गेला हो, दूसरे स बुताया हो तथा स्वय बालते हुए अन्य को अनुमोदना का हो तो उस मृषाचारादि भाषण सम्बन्धवा मरा दुष्कृत मिथ्या हो ॥ ॥

आहाररे त्वरे महव्रदे अदिएणदाणादो वेरमर्ण से गामे ना शयरे ना खेडे वा कव्वडे वा मडरे वा मडले वा पट्टणे वा दोणमुहे वा घोसे वा आत्ममे वा सहाए वा सवाहे वा सण्णवेसे वा तिण ना कट्ट वा वियडि वा मणि वा एवमाइय अदणण गिण्हय गेएहाविय गेण्हज्जत समणु-मणिदो तस्म मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ३ ॥

अनतर द्वितीय महाव्रत से भिन्न तृतीय महाव्रत में उस वस्तु के स्वामी या अन्य किसी ने द्वारा बिना दी हुई वस्तु के आदान (ग्रहण) से विरक्त होना चाहिए। उम ग्राम में, नगर में, खेत में, म डकवट में मंडप म, म डल में पट्टन में, द्रोणमुख में घोषमें, आश्रम में, सभा मे, सवाह म, सत्रिवेश में, इन स्थानों में कहीं

भा वृण, काष्ठ, विकृत (गोमयादि) और मणि इत्यादि अल्प मूल्य वाली या बहुमूल्य वाली बिना नी हुई यस्तु मैं स्वयं ग्रहण की हो दूसरे से ग्रहण कराइ हा, और स्वयं ग्रहण करते हुए का अनुमोदना की हो ता उस अदत्तादान सम्बन्धी मेरा दुष्कृत मिथ्या हो ॥ २ ॥

आहाररे चउत्थे महव्वटे मेहुणादो वेरमण से देविएसु वा माणुमिएसु वा तेरिच्छिएसु वा अचेयणिएसु वा मणुणामणुणोसु रूपेसु मणुणामणुणोसु सद्देसु मणुणामणुणोसु गन्धेसु मणुणामणुणोसु रमेसु मणुणामणुणोसु फामेसु चक्खदिय परिणामे सोट्टिदिय परिणामे घाण्हिदिय परिणामे जिच्चिमदिय परिणामे फासिंदिय परिणामे खोडदिय परिणामे अगुत्तेण अगुत्तिदिएण खण्विह वभचरिय ण रक्खिय ण रक्खापिय ण रक्खिज्जतो रि समणुमण्हितो तम्मि मिच्छा मे दुक्कड ॥ ४ ॥

अनन्तर तीसरे महाव्रत से जुड़े चौथे महाव्रत में मैथुन से विरक्त होना चाहिए । उसका यह अतिचार है—देवियों के, मानुषियों के तिर्यंचणियों के और अचेतन वृत्रिम स्त्रियों का प्रतिकृतिया के मनाह-अमनाह रूप में मनोह-अमनोहशब्द में मनोह अमनोह गंध में मनोह अमनोह रसम और मनोह-अमनोह रस में जो कि क्रमशः चक्षुइन्द्रिय, कणाइन्द्रिय, नासिका इन्द्रिय

निष्ठा इन्द्रिय और स्पर्शा इन्द्रिय के विषय और हैं जा तथा
 नोइन्द्रिय मनक अनियत विषय हैं उनमें मन वचा वाय वा
 सवरण न कर और अपनी इन्द्रियों को यश में रा रा पर जा में
 नव प्रकार क प्रकाश की स्वयं रक्षा नहीं की, न दूसरे में दगाई
 और न स्वयं रक्षा करत हुए की अनुमोचना वा उस न्यविध
 ब्रह्मचर्य क आरक्षण सब की मेरा दुष्टत कि जा हा ॥ ४ ॥

आहार परे पचमे मह्यदे परिगाहादा वेगमण मो वि
 परिग्गहो दुविहो अचमन्तरो राहिषा चडि । तत्र
 अचमन्तरो परिग्गहो शाणापरणीय दसणापरणीय वेयणीय
 मोहणीय आउग्ग राम गोद अतराय चेडि अट्टपिहो ।
 तत्र वाहिगे परिग्गहो उपकरण मण्ड फलढ पीठ कमडलु
 सथार मेज्ज उवसेज्ज भन पाणादि भण्ण अरोपेदिहो
 एदेण परिग्गहेण अट्टपिह रुम्मरय वड्ढ वड्ढाविय वड्ढ-
 ज्जत वि समणुमण्णदो तस्म मिच्छा मे दुक्कड ॥ ५ ॥

अनन्तर चतुर्थ महाव्रत से भिन्न पचम महाव्रत में परिग्रह
 से विरमण करना चाहिये । वह (परिग्रह) भी दो प्रकार का
 है आभ्यन्तर और बाह्य । उसमें से आभ्यन्तर परिग्रह ज्ञानावरण
 ज्ञानावरण, वेदनीय मोहनाय, प्रायु, नाम, गोत्र, और अन्तराय
 इस प्रकार आठ प्रकार का है । दूसरा बाह्य परिग्रह उपकरण
 ज्ञानोपकरण (पुस्तकानि और सयमोपकरण पिन्दितादि) नाह
 अथात् औषध तेल आदिके पात्र, फलक पाषाण से रहित सोने

गति की षड, पीठ (बठन का विस्तर) फमडनु सन्तग (कष्ट
 एणादिसम) शय्या (वसतिष्ठा) उपशय्या (पट्टरमला त्रेव कृषिग
 प्राप्ति) भक्त, पान (श्रीदनादि) दुग्धतक्राप्ति इत्यादि मन्त्र
 प्रनेक प्रकार का है। इस उक्त प्रकार के वायाभ्यन्तर परिष्कार
 ने प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशादि भेदा में विनष्ट
 प्रकार कम रज मने स्वयं बाया अन्य में षडवाया और मन्त्र
 शोधते हुए अन्य की अनुमोचना की उस वायाभ्यन्तर
 से उपार्जित मरा दुष्टत मिश्रण हो ।

आशान्ते छट्टे अणुव्रते रामोयणान्ते
 अमण पाण सादिय रमान्य चेदि चउच्चिदो
 तित्तो वा कटुयो वा कमाडलो वा अमिलो वा
 लरणी वा दुच्चित्तियो दुग्धामियो
 दुस्ममिणीयो रत्तीए श्रुता सुजावियो
 ममणुमणितो तस्म मिच्छा मे दुक्कट ॥ ६ ॥

पाच अणुव्रतो मे जुदा छट्टे अणुव्रत मन्त्रों में विनष्ट
 है। प्राणातिपातात्कि का तरह इसमें दुर्गन्ध में विनष्ट का
 अभाव है। इसलिए इसे अणुव्रत कहा है। इस मन्त्र
 भोजन विरमण व्रत म रात में हा मन्त्र का त्याग जाता है
 तिन म नहीं होता। तिन में मन्त्र भोजन में प्रकृति
 ममय है इसलिए अणुव्रत है व मन्त्रे भोजन विरमण

प्रत भात दाल आदि असन दुग्ध तक जलादि पान, मादकादि स्वाद्य, रुच्युत्पादक सुपारी इलायची जात्रिना आदि स्वाद्य, इस प्रकार चार प्रकार हैं । उक्त चार प्रकार का आहार तिरुत कटुक, कपाय, आमिल, मधुर और लवण रूप होता है । वह खान पान योग्य न होते हुए भी खान पीने योग्य चित्तन किया गया, अयोग्य भा आहार खावें पेशा कहा गया । अयोग्य भी आहार को खाने के लिए कायसे स्वाकारता दी गई और दु स्तनित अर्थात् स्वप्न न खाया, इस प्रकार रात्रिमें स्वय खाया, खिलाया, स्वय खाने की अनुमादना की । तत्सम्बन्धी मरा दुष्टत मिथ्या है ।

पच समिदीयां ईरियासमिदी भाषाममिदी एसणा समिदी आदान—खिखरोत्रण समिदी उच्चार पस्सवण खेल मिहाणय नियटिय पदद्धानणाममिदी चेदि । तथ इरियाममिदी पुव्वुत्तर दरिएण पन्डिम चउदिमि विदिसासु निहरमाणेण जुगत्तर दिट्ठिया दिट्ठिवा डवडव-चरियाण पमाद डामण पाण-भूद-जीव-सत्ताण उअघादो कटो वा करिटो वा कीर तो वा ममणुमणिएदो तस्म मिच्छा मे दुक्कट ।

ईयांसमिति, भाषा समिति, गणया समिति, आदान-निक्षपण समिति और उच्चार-प्रसवण-क्षेत्र-सिहाणक-विहृति प्रति-

घापनिका समिति इमप्रकार समितियां पाच हैं । उनमें से श्या समिति पूर्व, उत्तर पच्छिम और पश्चिम इन चार दिशाओं और वायव्य, दक्षिण नैऋत और आग्नेय इन चार विदिशाओं में विहार करते हुए जो चार हाथ प्रमाण सामने या भूमि देख कर चलना चाहिए किन्तु प्रमाद यश जल्दी, जल्दी ऊपर मुग्न करके इधर उधर गमन करन क नारण त्रिकलत्रिय प्राणियोंका, वनस्पति-कायिक भूताका, पचेन्द्रिय जालों का और ग्रह्यापायिकादि वायुकायिक पर्यन्त के चार सत्त्वा का उपघात मने श्वय किया हो, अथ यस कराया हो और स्वयं करत हुए की अनुमोदना का हो । उस उपघात सम्बन्धा मरा दुष्टत मिथ्या हो ॥७॥

तत्त्व भाषा समिती कर्ममा कडुया परमा खिडूरा
परसोहिणी मज्झिमा श्रद्धमाणिणी श्रणयन्ना छयन्ना
भूयाण वट्टन्ना चेदि दसनिहा भासा भामिया भामात्रिया
भासिज्जातो विममणुमण्डिणो तस्म मिन्डा मे दुक्कड ७

उनमें भाषासमिति दश प्रकार हैं उन दश प्रकारों को दिखात हैं तू मूग हैं कुछ नहा जानता इत्यादि रूप सत्ताप-जनक कक्षभाषा, तू जाति हीन है, अधर्मा (पापा) है इत्यादि रूप उद्वेग उत्पन्न करने वाली कडुकभाषा, तू अनेक दोषों में वपित है इस प्रकार मम भदों वाला पठप (कठोर) भाषा, तुम मारुगा, तरा सिर काट लूगा इस

प्रकार का निष्ठुरभाषा, तेरा तप किसी काम का नहीं वू
 प्रहनशाज है, निर्लज्ज है इस तरह का आरा का रोष उपजाने
 वाली परकीर्षिणी भाषा, मसा निष्ठुर भाषा जो हड्डियों का
 मध्य भाग भी छेद ने घर मध्यवृशा भाषा, अपनी महत्त्व रचा-
 पन करने वाला और त्मरों की निन्दा करने वाली अतिमानि
 नाभाषा, समान स्वभाव वाली में टूँधी भाष पैग घर देनेवाली
 या मित्रा में परस्पर विद्वेष करा देने वाली अनयकरी भाषा, कार्य
 शील और गुणों को जड़ मूल न विनाश कर दन वाली अध्या
 असद्रूत दाषा का उद्भावन करने वाली छेदकरी भाषा
 और प्राणियों के प्राणों का वियोग कर नन वाला बधकरी भाषा
 इस प्रकार दश प्रकार का भाषा मैंन स्वय बोली हो, दूसरे से
 बुलाइ हो और स्वय बोलत हुए दूसरे की अनुमोदना की हो उस
 दश प्रकार भाषा सम्बन्धी मरा दृष्टत मिग वा हो ॥७॥

तत्थ म्मणा समिटी ग्राहा कम्मेषु वा पच्छा कम्मेषु
 वा पुराकम्मेषु वा उद्दिट्ठयट्ठेण वा सिद्धिद्वयट्ठेण वा
 कीडयड्ठेण वा माइया स्साइया सट्ठाला सपुमिया अग्नि-
 द्दीण अग्निम उएह जीवणिकायाण्य प्रिसाट्ठण काऊण अपरि-
 मुद्ध भिक्खु अणण पाण आहाराट्ठिय आहाग्घि आहारावि
 अहारिज्जंत वि समणुमणिएणदो तस्म मित्थ्था मे दुक्कड =

उत्तम अद्गमादि रोषा से रहित निरवध आहार ग्रहण करना
 म्मणा समिति है । और वो उद्गमादि दोषा से युक्त अशुद्ध

आहार है उसे मुनियों को ग्रहण नहीं करना चाहिए आहार में
 अशुद्धता कैसे हाता है यह कहते हैं-अथ चर्म अर्थान् शब्दा आदि
 एक जायतिषाय की विराधता करके बनाय गय आहार से,
 पञ्चान्कम अध्यात् भावन करके मुनि व चल जान पर फिर भोजन
 बनाता प्राग्भ करत म, पुराकम अर्थान् मुनिने भोजन किया
 नहीं उसके पहले भोजन बनाता प्रारंभ करन स त्रिदृष्टन अर्थान्
 मुनि को ही अर्थेय पर जो भोजन बनाया तबता पार्वदा आदिषो
 उदरेय पर ना भोजन बनाया तब प्रहण परने से निर्दिष्टन
 अध्यात् आपके लिए दा बनाया गया ह एमा कहत पर आहार
 ग्रहण करने म, कान कृत तप क दा भदरैण्य द्रव्यमत्तुन और
 दूसरा भाष प्रातश्चन । मुनिर्ग षा चयामाग द्वारा आत दक्ष पर
 अपन अथवा पर के गाय, मैम वैल आदि चेतन दृष्टियोंको अथवा
 सुवण आदि अचेतन द्रव्या का बचकर भावन सामर्षा लाना
 और तसम भावन नैयार कर मुनियों को दा द्रव्य प्रातश्चन है
 तथा अपनी या पर का प्रकृति आदि विनाय या पठिका आदि
 भद्र दकर भोजन सामर्षा लाना और उसम भावन बनाकर
 मुनीश्वरों को देना भाषकालकृतनाप है क्षाना प्रथम के प्रातश्चन
 के इत्यादि तर्षा स युक्त स्यात्पिष्ट रसाल सत्यासति मे दातर
 आदि की निन्दा करते हुए अत्यन्त गृह्णिवृषक अग्नि का तरह द्वा
 जायनिषायो का विराधता परके अथान्य अन्न पान रूप आहात
 ग्रहण सथ पिया, दूसरे का कराया और सथ करते हुए दूसरे
 का अनुमोदना की, तम सम्बन्ध मरा दुष्टत सिध्या हा ॥६॥

तत्थ आदान—सिक्कपण समिटी चक्कल वा फल्लह वा पोयय वा कमएटल वा वियडिं वा मणि वा एवमाण्य उपयण्य अप्पडिलडिऊण गेएह-तेण वा ठपतेण वा पाण—भूद—जीव—सत्ताण उववादो वदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमणिएदो तस्म मिच्छा मे दुक्कड ॥ ६ ॥

एत पांच समितियों में चतुर्व आदान निक्षेपण समितिमें चक्कल, फलक, पुस्तक, कमटलु, विवृति और मणि इत्यादि उपकरण पिन्दी द्वारा प्रतिलेखन १ करके उठात हुए और धरते हुए मंत्र प्राण, भूत, जीव और सत्त्व का उपघात स्वयं किया हो, कराया हो और स्वयं करत हुएकी अनुमादना का हो तो तत्सम्बन्धी मरा दुष्कृत मित्या हो ॥ १० ॥

तत्थ उन्चार—पस्सण—सेल—सिहाण्य—त्रियटिपइ-ट्टापणिया समिटी रत्तीण वा त्रियाले वा अचक्कु त्रिमये अत्रवडिले अम्भोवयासे सणिएद्वे सत्रीए महरीए एवमाट-एणु अप्पासुगट्टाण्येणु पइड्डान तेण पाण भूद—जीव सत्ताण उववादो वदो वा कारिदो वा कीरता वा समणुमणिएदो तस्म मिच्छा मे दुक्कड ॥ १० ॥

उच्चार, प्रस्रवण, स्नेह, सिंहानक विकृति इन चार्चोक त्यागो में प्राणियोंका पाडा के परिहार में यत्न करना आवश्यक है उसमें प्रवर्तमान मैंने प्रमा दश रात में, सभ्याके समय, चक्षु से देखने में न आव ऐसे सस्फार किये हुए या न किये वा किये हुए अप्रामुक उच्च भूमि प्रदश में, सस्कार न किये हुए नीच अप्रामुक भूमिप्रदशमें अभ्रायकाश पाना वृक्ष आदिसे अप्रच्छादि अप्रामुक सुने ग्थानमें यह उपलक्षण रूप है इससे वृक्षादिक से प्रच्छादित अप्रामुक स्थान का भी ग्रहण होता है उसम स्निग्ध (गीले) प्रशमे, बीजयुक्त हरितकाय युक्त भूमिप्रदशमें इस प्रकार क अप्रामुक प्रदशोंमें उच्चार प्रस्रवण आदिका उत्सर्जन करते हुए मैंने प्राण, भूत नाव और सत्त्वों का उपधान किया हो, अयमे कराया हो और स्वय करते हुए अन्य की अनुमोदना का हा तो तत्सम्बन्धा मेगा दुकृत सिध्या हो ॥ ११ ॥

तिष्णि गुत्तीओ मण गुत्तीओ वचि गुत्तीओ काय
गुत्तीओ चेदि, तत्थ मणगुत्ती अट्टेभाणे रट्टे भाणे
इहलोय सण्णाए परलोए सण्णाए आहार सण्णाए भय
सण्णाए मेहुण सण्णाए परिग्गह सण्णाए एवमाइयासु
जा मण गुत्ती ग रक्खिआ ण रक्खाविया ण रक्खिज्ज-
तपि समणुमणिदी तस्म मिच्छा मे दुक्कड ॥ ११ ॥

मनगुक्ति, वचनगुक्ति और काय गुक्ति इस प्रकार तीन गुक्तियां हैं । मन, वचन और काय इन तीन योगों के प्रचार के

सम्यक् निग्रह करने को गुणित कहते हैं। उनमें अशुभपरिणामों का रोकना मनगुणित है। गृहस्थों जैसी उत्सूल भाषा का रोकना या मौन धारण करना वचनगुणित है। और अपन हाथ पैर आदि का यथेष्ट प्रवृत्ति रोकना कायगुणित है। इनमें से मनगुणित का आर्त्तध्यान में रौद्रध्यान में, इस लोक सम्बन्धी और परलोक सम्बन्धी आहार, भय मैतुन और परिग्रह संज्ञाओं में मैन जो सरक्षण न किया हा, अथ से सरक्षण न कराया और स्वय सरक्षण न करने की अनुमानना की हा तत्सम्बन्धा मेरा दुष्टत मिथ्या हा ॥ १२ ॥

तत्थ वचिगुत्ती इत्थि कहाए भत्त कहाए रायकहाए चोर कहाए वेर कहाए परपामल कहाए एवमाइयासु जा वचि गुत्ती ए रक्खया ए रक्खायिया ए रक्खिज्जतो समणुमण्णिणदो तस्स मिच्छा म दुक्कड ॥ १२ ॥

उनमें से वचन गुणित के विषय में कहते हैं—स्त्राकथा, अथ कथा, भक्तकथा, राजकथा चारकथा वीरकथा, परपालहकथा, इस प्रकार की कथाओं में जो मैन स्वय वचनगुणित को रक्षा नही का हो न दूसरे से न करार्इ हो और न स्वय रक्षा करत हुए का अनुमोदना की हो तत्सम्बन्धा मेरा दुष्टत मिथ्या हो ॥ १३ ॥

तत्थ कायगुत्ति चित्तवम्मेसु वा पोत्त वम्मेसु वा कट्ठवम्मेसु वा लेप्प कम्मेसु वा एवमाइयासु जा

काय गुती ए रक्खिया ए रावछाविमा ए रक्सिज्जती
व सभणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुण्ह ॥ १३ ॥

अथ ज्ञा तान गुप्तियों मे म तासरो काय गुप्ति के सम्यग्ध
मे क्खत हे चित्रादि शिष्यों क रूप आदिम अपन शय पैग का
रक्षण करना काय गुप्ति ह । चेतन स्त्रीक रूपात्तिक मे तो प्रद्वयय
के कारणम हा कायका गोपन स्वयं सिद्ध है अचेतन के विषयमें
द्विष किस मे काय का गोपन करना चाहिय यह बताते हैं--
चित्र, पीत, काष्ठ, लप सम्यग्धा शिष्यों क रूप आदि मे जो मेरे
स्वयं गुप्ति का मरक्षण नहा क्रिया, न दूसरे मे कराया
और न स्वयं रक्षण करते हुए दूसरे की अनुमादना की, तत्स-
म्बन्धी मेरा दुष्कृत मिथ्या हो ॥ १३ ॥

एवमु वम्मचेर गुत्तीसु चउसु सण्णासु चउसु पच्च-
एसु दोसु अट्टरुद्दसक्खिलेण परिणामेसु तीसु अप्पसारथ
सक्खिलेस परिणामेसु मिच्छाणाय मिच्छा दसण मिच्छा
चारित्तेसु चउसु उवसग्गसु पच्चसु चरित्तेसु छसु जीव-
णिकाएसु छसु आवासएसु सत्तसु भयेसु अट्टसु मुद्धीसु एवमु
वम्मचेर-गुत्तीसु दससु समणधम्मसु सट्ठु धम्मज्जाणेषु
देससु मुण्डसु वारसेसु सजमेसु चावीसाए परीसहेसु पण-
वीसाए भावणानु पणवीसाए किरियासु अट्टारस सील-
रुहस्सेसु चउरासीदिगुणसमसहस्सेसु मूलगुणेषु उच्चर

गुणोमु अट्टमियम्मि पन्निस्सयम्मि रचउमासियम्मि, सव-
च्छरम्मि, अइक्कमो वदियकमो अइचारो अणा-
चारो आभोगो अणाभोगो जो त पडिक्कामि मए पडि
क्कत तरस मे सम्मत्तमरण समाहिमरण पडियमरण
वीरियमरण दुक्कतवसओ वम्मवसओ वोहिलाहो सुगइ-
गमण समाहिमरण जिणगुणसम्पत्ति होउ मउक्क ।

नर प्रकार ब्रह्मचर्य गुणोंमें, चार सप्ताहोंमें कमवन्धके कारण
चार मिथ्यात्वान्ति प्रत्ययाम ७ आचारोद्देशश्लेषपरिणामोंमें भावा
मिथ्या निदान रूप तान अप्रशम परिणामों में चार उपसर्गों में
पाच मामाधिक चारित्र्यों में, छह नावनिवायोमें, छह आवश्यक
काम साठ भयोंमें आठशुद्धियोंमें नव प्रणय गुणितियों में, दश
श्रमसुधर्मा म, ११ श घमध्वानाम, १२ श मु हों म, चारह सयमोंमें
बाइस परिपहा में, पचास भावनाओं म पचीस क्रियाओं में,
अठारह हजार शालों में, चौरासी ताप गुणा में मूलगुणों में,
और उत्तर गुणोंमें इत्यादि विधि निपेय स्वरूप यत्याचारों में
आष्टमिक पाक्षिण, चातुर्मासिक और सावत्सरिक अनुष्ठानों
में अनिक्रम, व्यतिक्रम, अनिरार, अनाचार, आभाग और
अनाभोग ये जो दोष हुआ है उनका प्रतिक्रमण-निराकरण
करता है । मरे दोष दूर निय उसको मेरा सम्यक्त्वमरण, समा
पिमरण, पडितमरण, वीरियमरण, दुक्कतव, वम्मवस, वोधिलाम,
सुगतिगुण और त्रिगुणों की प्राप्ति हो ।

सिद्ध-भक्ति

(सिद्ध आचार्य 'शमो अरहताण इत्यादि पाच पदों का प्रारण कर कायोत्सर्ग करके 'धारसामि' इत्यादि पढ़कर 'तन-
पदे' अत्रलिका सहित गाथा पढ़कर फिर पूर्वाक्त विधि करके
शुद्ध काले सविद्युत' इत्यादि अञ्चनिकायुक्त योगिभक्ति पढ़कर
इच्छामि मते । चरित्ताचारो तरसविहो इत्यादि पांच पढ़कर पढ़
र, तथा वदसमिद्धिदिय' इत्यादि छेदोवट्टावण हाउ म-म'
य त त नगार पढ़कर, अपन नेपा की दूक आगे आलोचना
रे और दोपोंक अनुमार प्रायश्चित्त ग्रहण कर पचमहाग्रत'
यादि पाठ तान बार पढ़कर योग्य शिष्यादिकोंको प्रायश्चित्त
कर देवके लिए गुरुभक्ति देव । उसक बाद फिर आचार्यसहित
अध्य मुनि और साधर्मी मुनि आचार्य के आगे इसी पाठ को
पढ़कर प्रतिग्रमण भक्ति धरे । यह सब इस प्रकार)—

नमोऽस्तु सर्वातिचारविशुद्ध्यय सिद्धभक्तिकायोत्सर्ग
'रोम्पहम्—

हे भगवन् । नमस्कार हो, मैं सब अतिचारों की विशुद्धिके
के सिद्ध भक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग करता हूँ ।

('शमो अरहताण' इत्यादि पचपदायुक्ताय कायोत्सर्ग
या धोस्सामायादि भणित्वा)—

शमो अरहताणं इत्यादि पाच पदों को बोलकर कायोत्सर्ग
करे । फिर धारसामि इत्यादि पढ़कर सिद्ध भक्ति पढ़े ।

मत्तणाणदसणावीरियमुहुम तहेअ अवगहण ।

गुरुत्तहमव्यवाहं अट्टगुणाहाति सिद्धाण ॥ १ ॥

तत्सिद्धे ण्यसिद्धे सजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
 णाणम्मि दसणम्मि य सिद्धे निरसा णमसामि ।
 इच्छामि भते । सिद्धभक्तिकाउरसगो कर्त्त
 तस्सालोचेउ, सम् णाणसम्मदसणसम्मचारित्तजुत्ता
 अट्टविहम्मविप्पभुक्काण अट्टगुणसपण्णाण उट्टलो
 मत्थयम्मि पइट्टियाण तवसिद्धाण ण्यसिद्धा
 सजमसिद्धाण अतीताणागदवट्टमाणकालत्तयसिद्धा
 सव्वसिद्धाण सया गिच्च काल अ चेमि पूजेमि वदा
 गमसामि दुक्खवसओ कम्मवखओ वोहिलाहो सुग
 गमण समाट्टिमरण जिणगुणसपत्ति होउ भज्जक ।

इन दोनों गाथा सूत्रों का अर्थ प्रारम्भम कहा जा चु
 है और अन्वयलिका का अर्थ दैवसिक प्रतिक्रमण के प्रार
 म कहा जा चुका है, वहा लें ।

लघुयोग भक्ति

नमोऽस्तु सवातिचारविशुद्ध्यथमालोचनायोऽपि
 भक्तिनायोत्सर्गं करोम्यहम्—

हे भगवन् ! नमस्कार हा, मय अतिचारों का विशु
 लिप आलाचनायुक्त यागिभक्ति सम्बन्धी फायोत्सर्ग करता
 (गमो अरहताय इत्यादि पद्यपदा युक्तवाच काया
 कृत्वा धारमामानि पठि या—)

(पसा प्रतिष्ठापन करक 'धमा अरहताय आदि पद्य
 का उच्चारण कर धोरसामि इत्यादि पत्र यागि भक्ति पद

प्रावृट्काले सविद्युत्प्रपतितसलिले वृक्षमूलाधिवासा,
 हेमन्ते रात्रिमध्ये प्रतविगतभया काण्ठवत्त्यक्तदेहा ।
 ग्रीष्मे सूर्याशुतप्ता गिरिशिखरगता स्थानकूटातरस्था-
 स्तं मधुमं प्रदद्युर्मुनिगणवृषभा माक्षनि श्रेणिभूता । १ ।
 गिम्ह गिरिसिहरत्या वरिसागाने स्वस्वमूलरयणीसु ।
 सिसरे वाहिरसयणा ते साहू वदिमो णिच्च ॥ २ ॥
 गिरियदरदुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः ।

पाणिपात्रपुटाहा ।स्ते यान्ति परमा गतिम् । ३ ॥

निसमें विद्युत् का अमन्वमाहट हो रहा है और पानी मूस
 लाधार पड़ रहा है एस वषाकालमें जो वृक्षों के मूलमें निवास
 करते हैं । हेमन्त ऋतु में रात्रि के मध्यमें भयसे रक्षित हाकर
 जितने काष्ठ के समान अपना देह त्याग रक्खा है और जो
 प्राप्सऋतु में सूर्य का किरणों से तप्त परतों की शिखरों पर सूर्य
 के समुख स्थान धरते हैं, वे मोक्ष का नि श्रेणीभूत मुनिगण वृषभ
 मुझे धर्म दयें ॥ १ ॥

जो प्राप्स में पंचत क शिखर पर स्थिर होकर ध्यान धरत हैं ।
 वषा कालमें रात दिन वृक्षों के मूल में कायोत्मगसे खड़े रहते हैं
 और शिशिर ऋतु में रात्रि क समय नदिया क किनार पर सुले
 आकाश में सात हैं, उन महान् साधुआ का मैं नित्य वन्दना
 करता हू ॥ २ ॥

जो गिम्बर साधु पधतकी कन्दरा रूप दुर्गोंमें वसते हैं, पाणि
 पात्र क पुटमें अर्घान् पाणिपुट में आहार लेते हैं, वे साधु
 उत्कृष्ट मोक्षगति जानें हैं । ३ ।

इच्छामि भते । योगिभक्तिवत्तस्सगो वधो तस्सालो-
 नेउ अद्वाइज्जदीवदोसमुद्देसु पण्णारसकम्मभूमिसु आदा-

वगस्ववमूलग्रभोवासठाणमाणवीरासखेवकपासकुक्कु-
डासणचउद्धपवखखवणादिजोगजुत्ताण सव्वसाहूण
अ चेमि पूजेमि वदामि णमपामि दुवखवखओ वम्म-
वखओ वोहिलाहो सुगइगमण समाहिमरण जिणगुण-
सपत्ति होउ मज्झ ।

हे भगवन् ! योगिभक्ति स सम्बन्धित फायोत्सग मैंन विथा
अव उसका आलोचना परन का इच्छा करता हूँ ।

अट्टाई द्वाप दो समुद्र और प द्रव फर्म भूमियों म आतापन
याग, वृक्षमूत्र याग, अन्नापनाश याग स्थान, वीरासन मोन,
गुरु पार्श्व, कुक्कुटासन, चतुर्थ पक्षपयामादि यागा मे युक्त
सब साधुओंकी अर्चा करता हूँ पूजा करता हूँ, य ज्ञान करना हू
नमस्कार करता हूँ मर दुर्गा का क्षय हा, फर्माणा क्षय हो,
त्रोधि का लाभ हा, सुगति म गमन हा, समाधिमरण हो और
निन द्र वे गुणों की सम्यक् प्राप्ति हा ।



आलापना

इच्छामि भते ! चरित्तायारो तेरसविहो परिहाविदो,
पचमहव्वदाणि पचसमिदीओ तीगुत्तीओ चेदि । तत्थ
पढ्ढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमण से पुढ्ढवीकाइया
जीवा अससेज्जासखेज्जा आउकाइया जीरा अमसेज्जा-
सखेज्जा, तेउकाइया जीवा अससेज्जासखेज्जा, वाउका-
इया जीवा अससेज्जासखेज्जा वणपफुदिकाइया जीवा

अणताणता हरिया वीया अ कुरा छिण्णा भिण्णा, एदेसि उद्दावण परिदावण विराहण उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड १

वेइदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा कुक्खिक्खिम्मि सख्खुल्लय बराडय-भक्ख-रिट्ठ-गडवाल्ल-सवुक्क सिप्पि पुलविकाइया, एदेसि उद्दावण परिदावण विराहण उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ॥ २ ॥

तेइन्दिया जीवा असखेज्जा कुक्खु हेहियविच्छिय-गोभिद-गोज्जुव भक्खुण पिपीलिया, एदेसि उद्दावण परिदावण उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णिदो वा तस्स मिच्छा मे दुक्कड ॥ ३ ॥

अउरिदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा दसमसयम-वित्तयपयगकोडभमरमहुयरगोमक्खिया, एदेसि उद्दावण परिदावण विराहण उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ॥ ४ ॥

पच्चिदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा अडाइया पोदाइया रसाइया ससेदिमा सम्मुच्छिमा उवभेदिमा उववादिमा अवि अउरासीदिजोणिएपमुहसदसहस्सेसु, एदेसि उद्दावण परिदावण विराहण उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ॥ ५ ॥

वदसमिदिदियरोधो लोचो ॥ ५ ॥

खिदिसयणमदतवण ठिदिभोयणमेयभत्त च ॥ १ ॥

एदे खलु मूलगुणा समणाण जिणवरहि पण्णात्ता ।
एत्थ पमादकदादो अइचारादो णिपत्ता ह ॥ २ ॥

छेदोवट्ठावण होउ मज्झा । ३ ॥

प्रायश्चित्तशोधनरसपरित्याग त्रियते ।

पचमहाग्रत-पचसमिति पचेन्द्रियरधो-लोच-पढा-
वश्यकक्रियादयोऽष्टाविंशतिमूलगुणा, उत्तमक्षमामा
दवाजवशौचसत्यसयमतपस्यागाकिच-यन्नह्यचर्याणि द-
शलाक्षणिको धर्म, अष्टादशशीलसहस्राणि, चतुर्शी-
तिलक्षगुणा, त्रयोदशविध चारित्र्य, द्वादशविध तप-
श्चेति सकलसम्पूर्णं अहत्मिद्वाचार्योपाध्यायमर्वसाधुसा-
म्भिक सम्यक्त्वपूर्वक दृढग्रत सुग्रत समारूढ ते मे भवतु ३

आलोचनाका, व्रतसमितीन्द्रिय इत्यादि सूत्रोंका और पच
महाग्रत इत्यादि व्रतारोहण का अथ दैवसिक प्रतिक्रमणमें कहा
जा चुका है यहां देखें

निष्ठापनाचार्य भक्ति-

नमोस्तु निष्ठापनाचायभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्—

नमस्कार हो निष्ठापनाचाय भक्ति सम्बन्धा कायोत्सर्ग करता
हू । यह प्रतिज्ञापना कर ६ जात्य दत्र, फिर भक्ति पढे । भक्ति
और इच्छामि भत इत्य णिका अर्थ पूर में आचुफा है ।

श्रुतजलधिपारगेभ्य स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्य ।

सुचरिततपोनिधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्य १

छतीसगुणसमग्गे पचविहाचारकरणसदरिसे ।

सिस्ताणुग्गहकुसले धम्माइरिए सदा वदे ॥२॥

गुरुभक्तिसज्जमेण य तरति ससारसायर घोर ।

द्विण्णति अट्टकम्म जम्मणमरण ण पावेति ३
ये नित्य व्रतमश्रहामनिरता ध्यानाग्निहोत्राकुला ,

पट्कर्माभिरतास्तपीधनघना साधुत्रियासाधव ।
शोलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्च द्राकतेजाऽधिका ,

मोक्षद्वारकपाटपाटनभटा प्रीणन्तु मा साधव ।४।
गुरव पातु नो नित्यं ज्ञानदशननायका ।

चारिण्यार्णवगम्भारा मोक्षमार्गोपदेशका ॥५॥
इच्छामि भने पक्खियम्मि आलोचेउ, पचमहव्वयाणि
तत्थ पढम महव्वद पाणादिवादादो वेरमण, विदिय
महव्वद मुसावादादो वेरमण, तिदिय महव्वद अदिण्ण-
दाणादो वेरमण, चउत्थ महव्वद मेहुणादो वेरमण,
पचम महव्वद परिग्गहादो वेरमण, छट्ठ अणुव्वद
राईभोयणादो वेरमण, तिम्सु गुत्तीसु ण णोसु दसणोसु
चरित्तेसु, वावीसाए परिसहेसु पणवीसाए भावणासु
पणवीसाए किरियासु अट्टारसणीलसहस्सेसु चउरासी-
दिगुणसयसहस्सेसु वारसण्ह सजमाण वारसण्ह
अ गाण तेरसण्ह चरित्ताण चउदसण्ह पुव्वाण एयारण्ह
पढिमाण दसविहमु डाण दसविहसमणधम्माण दस-
विहधम्मज्झाणाण णवण्ह वभवेरगुत्तीण णवण्ह एोक-
सायाण सोलमण्ह कसायाण अट्टण्ह कम्माण अट्टण्ह

पञ्चयणमाउयाण सत्तण्ह भयाण सत्तविहससाराण छण्ह
 जीवणिकायाण छण्ह आवासयाण पचण्ह इादयाणं
 पचण्ह महव्वयाण पचण्ह समिदीणं पचण्ह चरित्ताण
 चउण्ह सण्णाण चउण्ह पच्चयाण चउण्ह उवसग्गाण
 मूलगुणाण उत्तरगुणाण अट्टण्ह सुद्धीण दिट्ठियाए
 पुट्ठियाए पदोसियाए से कोहेण वा माणेण वा माएण
 वा लोहेण वा रागेण वा दोसेण वा मोहण वा हस्सेण
 वा भएण वा पदोसेण वा पमादेण वा विम्भेण वा पिवा-
 सेण वा लज्जेण वा गारवेण वा एदेसि अच्चासणदाए
 तिण्ह दडाण तिण्ह लेस्साण तिण्ह गारवाण तिण्ह
 अप्पसत्थसकिलेसपरिणामाण दोण्ह अट्टट्ठसकिलेसप-
 रिणामाण मिच्छणाण-मिच्छदसण मिच्छचरित्ताण
 मिच्छत्तपाउग्ग असजम पाउग्ग कसायपाउग्गं
 जोगपाउग्ग अप्पपाउग्गसेवणदाए पाउग्गगरहणदाए
 इत्थ मे जो कोई वि पक्खियम्मि (चउमासीयम्मि
 सवच्छरियम्मि) अदिक्कमी वदिक्कमी अइचारो अणा-
 चारो आभोगो अणाभोगी तस्स भत्ते । पडिक्कमामि
 पडिक्कमतस्स मे सम्मत्तमरण समाहिमरण पडियमरण
 वीरियमरण दुक्खवत्तयो वम्मवत्तयो वोहिलाहो सुगइ-
 गमण समाहिमरण जिणगुणसपत्ति होउ मज्झ ।
 वदसमिदिदियरीघो लोचो आवासयमवेलमण्हाण ।

सिदिसयणमदतवण ठिदिभायणमेयभक्त च ॥१॥

एदे सलु मूलगुणा समगाण जिगवरेहि पणत्ता ।

एत्थ पमादवदादो अइचागदा णियत्ता ॥२॥

छेदोवट्टावण हाडु मञ्ज ।

पञ्चमहात्रनपञ्चानितिपञ्चे द्वयगेधलोत्पदा-

वश्यवत्रिवादयाऽटाविशिमूगुणा उत्तमक्षमामाद-

वाजघात्यशौचस्यमतपञ्चागानिञ्चयग्रह्यचयाणि

दशलाक्षणिको धर्म, यथादशशीलमह्याणि, चतुर-

शोतिगणगुणा त्रयादशविध चारित्र, द्वादशविध

क्षपद्वयेति सत्तनमम्पूण जहत्तिमन्नाचार्योपाध्यायनर्मना-

द्युमाक्षिष सम्या उपर्वन दृढत्रन मुत्रत ममाहृत् तं म

भवतु ॥ ३ ॥

आचोचनाका अतमगित्ता द्वय इत्यानि म्त्राया श्रीर पञ्च-
महाप्रन र्त्तानि प्रनाराएण का अ ५ वैवमिक प्रतिनमण म पहा
जा शुका द वहा दय ।



प्रतिमरण भक्ति

मजातिचारत्रिगुद्रवयं पाक्षिवप्रतिमरणाया पूर्वा-

घार्यानुक्रमेण नवलकमक्षयार्थ भावपूजावदनास्तवसमत

प्रतिमरणभक्तिनायात्सर्गं करोम्यहम् —

इत्युच्चाय 'एमा अरहताण' इत्यादि दण्डकं पठित्वा
सुरय साधव विदम्यु)

ये सब बातचाराका विशुद्धि क लिये पात्तिक प्रतिक्रमणामे
पूर्वाचार्यो के अनक्रममे सकल कर्म के लयाय भावपूना वन्दना
स्व समेत प्रतिक्रमण भक्ति सम्बन्धा कायात्सग करता ह ।

इम प्रकार उच्चारण पर 'एमा अरहताण' इत्यादि ममा-
यिक दण्डक पढ़कर -७ उच्छ्रवाम प्रमाण फायोत्सर्ग करे ।

एमा अरहताण एमा सिद्धाण एमा आइरियाण ।

एमा उवज्जायाण एमा लोए सब्बसाहूण ॥१॥

चत्तारि मगल—अरहता मगल, सिद्धा मगल,
साहू मगल, केवलपण्णात्तो धम्मो मगल । चत्तारि
लोगुत्तमा अरहता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू
लोगुत्तमा, केवलपण्णात्ता धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि
सरण पव्वज्जामि अरहते सरण पव्वज्जामि, सिद्धे
सरण पव्वज्जामि, साहू सरण पव्वज्जामि, केवलि-
पण्णात्त धम्म सग्ण पव्वज्जामि ।

अढाइज्जदोवदासमुद्देशु पण्णारसक्कम्मभूमिमु जाव
अरहताण भयवताण आदियराण तित्थयराण जिग्गाण
जिणोत्तमाण केवलियाण, सिद्धाण बुद्धाण परिणिव्वु-
दाण अतयडाण, पारयडाण धम्माइरियाण धम्मदेसणाण,
धम्मणायगारणं, धम्मवरचाउरगचक्क ३ट्टीणं देवाहिदेवाण
एणाण दसणाण चरित्ताण सदा करेमि किरियम्म ।

करेमि भते । सामायिय मव्वसावज्जोग पच्च-
क्वामि, जावज्जीव तिविहेण मण्णमा यचत्ता वाएण
ए करेमि ए कारेमि कीरत ए समणुमणामि
त्तम्स भते ! अइचार पच्चक्वामि णिदामि गरहामि
अप्पाण जाव अरहताण भयवताण पज्जुवास करेमि
ताव काल पावक्कम्म दुच्चरिय वोस्सरामि ।

(यथोक्तपरिक्मानन्तर आचार्य "शोभामि" इत्यादि
दृढं गणधरवलये च पठित्वा प्रतिक्रमणदृढकात् पठेत् । शिष्य-
समघमाणस्तु तावन्काल कायोत्सर्गेण स्थित नान्दिक्रमणदृढकात्
शृणुयु)

(यथोक्त परिक्म के अनन्तर आचार्य शोभामि इत्यादि
दृढ पदका श्री गणधर-वलये पठकर प्रतिक्रमण दृढ पठे ।
शिष्य समघर्मा उनने काल तक कायोत्सर्गे स्थित हुण प्रतिक्रमण
दृढ सुने)

योस्सामि ह जिगण्ठरे तिरथयर वेवली अणतजिणे ।

गरपवरलोयमहिण विहुयरयमले महप्पण्णे ॥१॥

लोयमुज्जोययरे धम्म तिरथदरे जिग्गे वंदे ।

अरहो नित्तिस्से चोवीम चेर वेवलिणो ॥२॥

उत्तहमजिय च वदे सभघमभिणदण च सुमद च ।

पउमप्पह सुपासं जिण च चदप्पह वंदे ॥३॥

सुविहि च पुप्फयत सीयलसेय च वासुपुज्ज च ।

विमलमणत भयवं धम्म सति च वंदामि ॥४॥

कुथु च जिणार्निद अर च मल्लि च सुब्बय च एणिम ।

वदागि रिद्धुण्णेमि तह पास वड्डमाण च । १ ।

एवामए अभिधुआ विहुयरयमल्ल । पहीणजरमरणा ।

चोवीसं पि जिणार्ग नि ययरा मे पसोयतु । ६ ।

कित्तिम वदिय महिया एदे लोकोत्तमा जिणा सिद्धा ।

आराम्मणागलाह दितु समाहिं च मे वाहिं । ७ ।

चुदेहि णिम्मलयरा आइच्चेहि अहियपयासता ,

सायरमिव गभोरा सिद्धा सिद्ध मम दिसतु ॥ ८ ॥

सामायिक दशक और चतुर्विंशति-स्तत्र दशक वा अर्थ
ग्रहणे आचुका है ।

गणधर वलय—

जिनान् जितारातिगणान् गरिष्ठान् देशावधीन् सर्वंपरा-

वधीश्च । सत्कोष्ठबीजादिपदानुसारीन्, स्तुवे गणेशा-

नपि तद्गुणाप्त्यै ॥ १ ॥ सभित्तथोगान्वितसन्मुनीन्द्रान्,

प्रत्येकसम्बोधितबुद्धार्मान् । स्वयप्रबुद्धाश्च विमुक्त-

मार्गान्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥ २ ॥ द्विषा-

मन,पययचित्प्रयुक्तान्, द्विषन्नसप्तद्वयपूर्वसक्तान् ।

अष्टाङ्गनैमित्तिकशास्त्रदक्षान् स्तुवे गणेशानपि तद्-

गुणाप्त्यै ॥ ३ ॥ त्रिकुवणाख्याद्विमहाप्रभावान्, विद्या-

घराञ्चारणप्रद्विप्राप्तान् । प्रज्ञाथितात्रित्यस्तगामिनश्च

स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥ ४ ॥ भाषीचिपान्

दृष्टिविपान्मुनीन्द्रानुग्रातिदीप्तोत्तमतप्ततप्तान् । महा-
 तिघोरप्रतप प्रसक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥५॥
 वन्द्यान् सुरैर्घोरगुणाश्च लोके पूज्यान् बुधैर्घोरपराक-
 माश्च । घोरादिससद्गुणबह्मयुक्तान् स्तुवे गणेशानपि
 तद्गुणाप्त्यै ॥ ६ ॥ आमद्विखेलद्विप्रजत्लावट्प्र-
 सवद्विप्राप्ताश्च व्यथादिहवृन् । मनावच कायवलोप-
 युक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥७॥ सत्कीर-
 रसपिमधुरामृतद्वीन् यतीन् वराक्षीणमहानमाश्च ।
 प्रवर्धमानास्त्रिजगत्प्रपूज्यान् स्तुवे गणेशानपि तद्गु-
 णाप्त्यै ॥८॥ सिद्धालयान् श्रोमहतोऽतिवीरान् श्रीवद्वं-
 मानद्विविबुद्धिदक्षान् । सर्वान् मुनीन् मुक्तिवरानृषी-
 न्द्रान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥ ९ ॥

नृसुररत्नचरमेव्या विश्वधेष्ठद्विभूषा,
 विविधगुणसमुद्रा मारमातङ्गसिंहा ।
 भवजलनिधिपोता वन्दिता मे दिशन्तु,
 मुनिगणसकला श्रीमिद्विदा सदृशीन् ॥ १० ॥

प्रतिक्रमणदण्डक —

गमो अरहताण गमो सिद्धाण एते अरहताण गमो सिद्धाण
 गमो उवज्झायाम् गमो ताए अरहताण गमो सिद्धाण

अरहंतों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो, आचार्यों को नमस्कार हो, उपाचार्यों को नमस्कार हो और सो० में सर्वसाधुओं का नमस्कार हो ॥ १ ॥

रामो जिष्णोण, रामो श्रोहिजिष्णोण, रामो पर-
मोहिजिष्णोण, रामो मन्व्योहिजिष्णोण, रामो अमृतो-
हिजिष्णोण, रामो गोदृबुद्धोण, रामो श्रीशुद्धोण
रामो पादाणुसारीण, रामो सभिष्णसोदागणं, रामो
सयबुद्धोण, रामो पत्तेयबुद्धोण, रामो बोहियबुद्धोण,
रामो उज्जुमदोणं, रामो विजलमदोणं, रामो दमपुत्रीण,
रामो चउदसपुत्रीण, रामो अट्ट गमहाणिमित्तकुपलाण,
रामो विठव्वइद्धिपत्ताण, रामो विज्जाहगण, रामो
चारणाणं रामो पण्णासमणाण, रामो आगासगामीण
रामो आसीविसाण, रामो दिद्धिविसाण, रामो उग्गतवाण
रामो दित्ततवाण, रामो तत्ततवाण, रामो महातवाण,
रामो घोरतवाण, रामो घोरगुणाण, रामो घोरपरवक-
माण, रामो घोरगुणवभयारीण, रामो आमोसहिपत्ताण,
रामो वेत्तलोसहिपत्ताण, रामो जल्लोसहिपत्ताण, रामो
विप्पोसहिपत्ताण, रामो सव्वोसहिपत्ताण, रामो मण-
वलीण, रामो वचिवलीण, रामो वायवलीण, रामो
खीरमवीण, रामो सप्पिसवीण, रामो महुरसवीण, रामो
अभियमवीण, रामो अक्खीणमहाणसाण, रामो वड्ढमा-
णाण, रामो सिद्धायदणाण रामो भयवदो महदि महा

वीरवद्वुमाणबुद्धरिसीणो चेदि ।

जस्सतिय घम्मपह णियच्छे तस्सतिय वेणइय पउजे ।

काएण वाचा मणसावि णिच्च सक्कारए त सिरपचमेख

जिनोको नमस्कार हो ॥ १ ॥ देशावधि जिनोको नमस्कार

हो ॥ २ ॥ परमावधि जिनोका नमस्कार हो ॥ ३ ॥ सर्वावधिजिनो

को नमस्कार हो ॥ ४ ॥ अनन्तावधि (बेवलज्ञानी) जिनोको

नमस्कार हो ॥ ५ ॥ जैसे कोठे में कोठे के स्वामी द्वारा सुरक्षित

और जुदे जुदे रसे हुए धान्यों का अवस्थान रहता है वसा तरह

चिनकी बुद्धि में अवधारित ग्रन्थ और अर्थों का तप के माहात्म्य

से जदा जुदा अविनष्ट अवस्थान रहता है, वे कोष्ठ के समान बुद्धि

वाले जिन होते हैं उन कोष्ठ-बुद्धि के धारक जिनोको नमस्कार

हो ॥ ६ ॥

जैसे उपजाऊ क्षेत्र में बोया गया एक भी बीज कालादिक

की सहायता पाकर अथवा बीज-प्रद होता है वसा तरह एक पद

के ग्रहण से अनेक पदार्थों की प्रतिपत्ति जिस बुद्धि में हो वह वाज

बुद्धि है । यह वाज-बुद्धि तपके माहात्म्य से चिनके हो वे वाज

बुद्धि जिन होते हैं । उन वाजबुद्धि जिनाको नमस्कार हो ॥ ७ ॥

आदि अतः जहा तथा के एक पद के ग्रहण से समस्त ग्रन्थाथ का

अवधारण जिस बुद्धिमें हो जाय वह पदानुसारि बुद्धि है, यह

पदानुसारि बुद्धि तप के माहात्म्य से जिनके होता है उन पदा नु-

सारि चिनोको नमस्कार हो ॥ ८ ॥

चारह योचन लवे और नव योजन चौडे ध्ववर्ती के स्थन्धावार

के मनुष्य, घोडे, ऊट, हाथा आदि से उत्पन्न अक्षरात्मक और अन-

क्षरात्मक परस्पर विभिन्न भी शब्द समूहक एक साथ प्रतिभास

जिस ऋद्धिके हाने पर होता है वह सन्भिन्न भ्रोत्रा ऋद्धि होता है

वह ऋद्धि तप के प्रभावसे चिन के हावी है ये सन्भिन्न भ्रोत्रा ऋद्धि

वाले होते हैं उन सन्भिन्न-भ्रोत्रा ऋद्धि के धारक जिनोको नमस्का

हो ॥ ६ ॥ वैराग्य का किंचित् कारण देखकर और भगोपदेशकी कोई अपेक्षा न रख कर स्वयं ही जो वैराग्य को प्राप्त होते हैं वे स्वयं-बुद्ध कहलाते हैं । उन स्वयंबुद्ध जिनों को नमस्कार हो ॥ १० ॥ जो परोपदेशके बिना किसी एक निमित्त से वैराग्य को प्राप्त होते हैं, जैसे नीलाचना के विलयसंयुक्तमादिक, उन प्रत्यक्-बुद्ध जिनों को नमस्कार हो ॥ ११ ॥ जो भोगों में आसक्त महासु-भाव अपने शरीर आदिमें अशाश्वत रूप देख कर वैराग्य को प्राप्त होते हैं वे बोधित-बुद्ध कहलाते हैं । परापदेशसे भी जो वैराग्य को प्राप्त होते हैं वे भावबोधित-बुद्ध कहलाते हैं, उ हे नमस्कार हो ॥ १२ ॥ ऋजुमति मन पर्यय ज्ञाती जिनों को नमस्कार हो ॥ १३ ॥ विपुलमति मग पर्यय ज्ञाना जिनको नमस्कार हो ॥ १४ ॥ अमि-दशपुत्रधारक जिनको नमस्कार हो ॥ १५ ॥ उत्पादादि चतुदश पूषधर जिनको नमस्कार हो ॥ १६ ॥ अग, स्वप्न व्यजन, लक्षण, छिन्न भौम स्वप्न, अंतरिक्ष इन आठ निमित्तों को हृदयम रखकर जो जावा क शुभ अशुभ को जानते हैं वे अष्टागनिमित्तों में कुशल होते हैं । अष्टागनिमित्त कुशल जिनों को नमस्कार हो ॥ १७ ॥ त्रिबुवन ऋद्धि-प्राप्त जिनों को नमस्कार हो ॥ १८ ॥ अग, पूष पशु प्राप्त आदि मन्त्र विद्याओंके आधारभूत विद्याधर जिनको नमस्कार हो ॥ १९ ॥ जल, जषा, तनु फल, फूल, बाज, आकाश और श्रेणी पर अतिहृत चलने में कुशल आठ प्रकार के चारणद्विधारा जिनों को नमस्कार हो ॥ २० ॥ जो औत्पत्तिकी, वैनयिक, कमजा और पारिणामिकी इस प्रकार चार प्रकार की प्रतिज्ञाओं के धारक हैं उन प्रज्ञाश्रमण जिनोंको नमस्कार हो ॥ २१ ॥ अनिश्चयमान अथ वा आशा आशिष है । आशिष जिनका विषय अथवा आशीर्विषय श्रमण होते हैं अथवा जिनका आशिष अमृत है व भा आशीर्विषय श्रमण होते हैं । उ-ह नमस्कार हो वे किसानों कहें कि मरजाओ तो वह मर जाये । यदि वे किसानों कहें कि विषय-रहित हो जाओ तो यह

वह जात्र विपरहित हो जाव । अर्थापि वे मुनि उसा करते नहीं
 हैं परन्तु तपक प्रभावस प्राप्त शक्तिका प्रश्नन है ॥ २० ॥ निन
 मुनियों का दृष्टि ही विष रूप होता ह या चिनका दृष्टि ही अमृत
 है वे दृष्टि-विष होते हैं । उन दृष्टि-विष चिनोंको नमस्कार हो २३
 जो पचमी, अष्टमा और चतुदशीमें से किसी भी दिन उपवास
 की प्रतिज्ञा कर लते हैं पश्चात् जो या तान दिन तक आहार न
 मिलन पर भा उन चिनोंका उसा प्रकार निर्वाह करत हैं । ऐस
 साधु उम-तपवाले हाते हैं, उन उमतप चिनोंका नमस्कार हो २४
 चतुथ पशु आदि उपवासोंके करन पर भा चिनक शरारका तज
 बल तप जनिन लविषे माहात्म्यस प्रतिनिन शुक्लपक्षके चन्द्रमा
 का तरह बढता जाता ह, व दाप्त तप चिन हाते हैं उनका
 नमस्कार हा ॥ २५ ॥ जिनक अग्निस सतप्त लोह पर पतित
 जलफणिका समान प्रहण विष द्रव्य चतुर्विध आहारका शापण
 हो जानक कारण नाहार नहीं होता ह, व तप्ततप हात है उ
 तप्त - तप जिनोंका नमस्कार हो ॥ २६ ॥ जा पक्ष भास
 उपवासादिकके अनुष्ठानमें तत्पर है महातप ऋद्धिके धारक हातहै
 अथवा जो अग्निमात्रि आठगुणास उपेत है, जलचारणात्रि आठ
 प्रकारक चारण गुणांस अलकृत है, भुरायमान शरार प्रभा
 वाले है द्विविध अक्षण ऋद्धिस युक्त है, सर्वोपधि मन्त्य है,
 पाणिपात्रमें पतित सब आहारोंका अटल स्वरूपस पलटापेमें
 समय है इन्द्रांसे भा अनन्तगुणे चल बाल है, आशार्विष और
 दृष्टिप्रिष लब्धियोंसे समवित ह, तप्ततप ऋद्धिक धारक है, सब
 विद्याओंके धारक है तथा मति, भुत, अवधि और मन पयय
 ज्ञानांस तीन लोकक व्यापारको जानने बाल है, वे मुनि महातप
 ऋद्धिके धारक होते हैं उनको नमस्कार हो ॥ २७ ॥ जा ऋषिस
 सिंह, शार्ङ्ग आदिस आकुल पर्वतके गहर आदि म प्रचुरतर
 शात, वान, आतप, दश-मशक आदिमें युक्त भयानक श्मशानों
 में नाहर, ध्यान धरते हैं और दुधर अपसर्गोंको सहन

तत्पर हैं, वे घोर-तपके धारक हाते हैं । उन घोर तपके धारक जिनको नमस्कार हो ॥ २८ ॥

अत्यन्त भयंकर रोगस पाडित और महाभयंकर एकान्त स्थानमें रहते भा जो गुनिगण स्वाकृत तपायागों का वृद्धिमें हा सदा तत्पर रहते हैं वे घोरपरम नामक अद्विक धारक हैं । उनको नमस्कार हो ॥ २९ ॥ बहुत कालस जा अस्त्रलिन ब्रह्मवयक धारक हैं और प्रकृष्ट चारित्र-मोहनाय कमरु क्षयोप शमसे जिनक समस्त दु स्वप्न नष्ट हो गय हैं, वे घोर ब्रह्मवय अद्विके धारक हैं उनको नमस्कार है ॥ ३० ॥

कि-हो कि-हा ग्रन्थामें 'अघोर गुण ब्रह्मचारी' ऐसा भी पाठ देखा जाता है उस अपेक्षा उहाँ यह अर्थ किया गया है कि ब्रह्म का अर्थ पांच व्रत, पाच ममिति और तान गुप्ति स्वरूप चारित्र है क्योंकि यह शान्तिका पुष्टिका कारण है । अघोर अर्थात् शा त हैं गुण निनमें वह अघोरगुण हैं अघोर गुण ब्रह्मका आचरण करने वाले अघोर-गुण-ब्रह्मचारी कहलात हैं । जिनके तपके प्रभावसे डमरादि मारि (राग) दुर्भिक्ष, वैर, कलह वध, ब्र-घन, रोध आदिके प्रशमनका शक्ति उत्पन्न हुइ है व अघोर गुण ब्रह्मचारी हैं । उन अघोर गुण ब्रह्मचारा जिनाको नमस्कार हो ॥ ३१ ॥ आम अर्थात् अपक्व आहार वह ही जिनके औष धपनेको प्राप्त है उन आमौषधि प्राप्त जिनोंको नमस्कार हो । ॥३२॥ द्येल नाम निष्टीवन, लार, नासिकामल आदिका है वह द्येल ही जिनका औषधिपनको प्राप्त है वे द्येलौषधि प्राप्त होते हैं उन द्येलौषधिप्राप्त जिनोंका नमस्कार हा ॥ ३३ ॥ सारे शरारके मलको जल (प्रस्वेद-पमाना) कहते हैं वही जिनका औषधिपनेको प्राप्त हो जाता है उन जलौषधिप्राप्त जिनाको नमस्कार हो ॥ ३४ ॥ विष्णुड् नाम ब्रह्मबिन्दु अर्थात् वीर्यका है वह वीर्य हा जिनका औषधिपनेको तपके प्रभावसे प्राप्त हो जाता है उन विष्णुडोषधिप्राप्त जिनोंको नमस्कार हो । विट्टोसदि-

पत्ताण पेसा भा पाठ है उसका अर्थ बिष्टा हा जिनका औषधिरूप को प्राप्त हो गई है उन विष्टीषधि-प्राप्त जिनोको नमस्कार हो ॥ ३५ ॥ सब अर्थात् रस, रुचिर, मास, भेज, अस्थि, मज्जा, शुक्र, पुष्पुस, खराप कालेप, मूत्र, पित्त, आत, उन्चार (पुरीप) नख केश ये सब नितक औषधिरूपको प्राप्त हा गये हैं उन सर्वाषधि-प्राप्त जिनोको नमस्कार हो ॥ ३६ ॥ बारह अर्गामे निर्दिष्ट त्रिकालगोचर अनंत अथपर्यायो व व्यंजन पर्यायो से युक्त छह द्रव्योंका निरंतर चिंतन करने पर भी रसको प्राप्त न होना मनबल है यह मनबल जिनके है उनको मनबला कहते हैं उन मनबला जिनोका नमस्कार हो ॥ ३७ ॥ बारह अर्गोका कइ बार परिपत्तन (पाठ) करके भी जो रसको प्राप्त नहीं होता है, वह वचन वचन-बल है। तपके माहात्म्य से उत्पादित वचन-बल वाले वचन-बला कहलाते हैं उन वचन बली जिनोको नमस्कार हो ॥ ३८ ॥

जो तीनों भुवनोंको हाथकी अंगुलासे उठाकर अन्य स्थानमें रखनेमें समर्थ है उनका कायबला मदी है उन काय बला जिनो को नमस्कार हो ॥ ३९ ॥ क्षीर अर्थात् दूध म्बाव अथवा स्वाद नितक है वे क्षीरम्बावा या क्षीरस्वादा होते हैं। उनके पाणिमें पतित विपादि कुत्सित अशन भा तपके माहात्म्यसे क्षीर रूप परिणत हो जाता है या उसमें क्षीर जैसा स्वाद आने लगता है वे क्षीरम्बावी होते हैं उन क्षीर-म्बावी जिनोको नमस्कार हा ॥ ४० ॥ सर्पिका अथ घृत है। घृतम्बावी या घृतस्वादी जिनोको नमस्कार हा ॥ ४१ ॥ मधुर शब्दसे मधुर रसका ग्रहण होता है, अथवा मधुम्बावी पेसा भा पाठ है, तदनुमार मधु शब्द से गड खाड, शकरा आदिका ग्रहण होता है। क्योंकि मधुर स्वादक प्रति इनके समानता पाई जाती है। जो हाथमें रखे हुए सब आहारको गूड, खाड, शर्कराका स्वाद स्वरूपसे परिण-मन करनेमें समर्थ है वे मधुर-म्बावा मधुरस्वादा अथवा

मधुस्वादा चिन होते हैं उनको नमस्कार हा ॥ ४२ ॥ चिनके हाथको प्राप्त हुआ आहार अमृतके स्वाद स्वस्वस परिणत होता है वे अमृत-स्नावी या अमृत-स्वादो चिन हाते हैं जा कि यहा उपस्थित होत हुए द्वाहार-भोजा होते हैं वन अमृतस्नावा या अमृत-स्वादा चिनोको नमस्कार हा ॥ ४३ ॥ जिनका महानस अक्षीण है वे अक्षीण महानस होते हैं । जिस भाजनसे आहार निकाल कर उन्हें लिया जाता है, वह भोजन चक्रवर्ती क स्क्न्धावारको जिमा देने पर भा वृद्धि विशेषके कारण उस दिन सूर्यास्त तर क्षीण नहीं होता है, ये अक्षीण महानस होते हैं उन्हें नमस्कार हो । अथवा अक्षीण महानस शब्द दशामर्शक है इसलिये उससे वसति-अक्षीणता भा ग्रहण होता है । दोनों हा का अर्थ कहा है कि जिसके मात, घृत या मिगावा हुआ अन्न परोस लेनेके परचा चक्रवर्तिके स्क्न्धावारका देने पर भी समाप्त नहीं होता है, वह अक्षीण महानस अद्धि धारक कहलाता है । जिसके चार हाथ प्रमाण भा गुफामें रहने पर चक्रवर्ती का सै य भा उस गुफामें रह सकता है वह अक्षीणावास अद्धि धारक होता है । उन अक्षीण महानस व अक्षीणावास चिनोको नमस्कार हो ॥ ४४ ॥ सिद्धाके निर्वाणस्थानोको नमस्कार हो ।

अथवा सर्व-सिद्ध इस वचनमे पूर्वमें कहे हुए समस्त जिनों का ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि जिनास पृथक् भूत देश सिद्ध और सब-सिद्ध पाये नहा जाते । सब सिद्धोंके जो आयतन हैं वे सब सिद्धायतन हैं । इससे कृत्रिम व अकृत्रिम जिनगृहों का तथा चिनप्रतिमाओंक निलयाका तथा ईष-प्राग्भार, उर्जयन्त चपा, पावागरादि सब निषेधिकाका ग्रहण हाता है । वन सब जिनायतनोंको नमस्कार हो ॥ ४५ ॥ सहजात त्रिशिष्ट मत्वाणि ज्ञानत्रयके धारक अथवा पूजाके अतिशयको प्राप्त भग-

वान् महावीर, वधमान, बुद्ध और श्रुतिको नमस्कार हा। ये सब अन्तिम तीर्थंकर भगवान्के नाम हैं। क्योंकि श्रुति प्रत्यक्ष-वग या श्रद्धि धारकका नाम है, भगवान महावीर प्रत्यक्षवेदी भी थे और श्रद्धि-धारक भी थे, इसलिए ये श्रुति थे। हेय और उपादेयके विवेकसे सम्पन्नको बुद्ध कहते हैं। भगवान हेयोपा, देयके विवेकसे सम्पन्न होनेसे बुद्ध थे। भगवानके गर्भावतार-रादिके समय इन्द्रनि उनके माता पिताकी बडा भारा पूजा की, रत्नोंका वृष्टि का और अपनी भी श्रद्धि वृद्धि आदि देल कर बाधुननि भगवानका वधमान यह नाम रख दिया। भगवान के जन्माभिषेकके समय भगवानका शरीर छोटा था उसे देखकर इंद्रको आशका उत्पन्न हो गई कि इतने बड़े बडे कलशोंका जल यह शरीर कैसे सहन कर सकगा। उस समय भगवानने इंद्र का आशका दूर करनेके लिए भगवान ने अपनी मामध्य (अनन्त बलीय) स्थापन करनेके लिए अपने पैरके अंगूठेसे सुमेरुका हिजा दिया। इस कारण इंद्रन भगवानका 'वार' यह नाम—धारण दिया। कुमार कालमें आमली क्रीडाके समय खलते हुए मगम देवने अपने विमानकी गतिके रक्षण हो जाने स भय उत्पन्न करनेके लिए महान फटाटोपसे युक्त, भयानक सर्पका रूप धरकर वित्रियासे सारे वृचको घेष्टित कर लिया। भगवान उसमे डर नहीं। वे उस सर्पके मस्तक पर पैर रख कर वृत्तपरमे उतर गये। इस कारण सगम देवने भगवानका 'महावार' यह नाम रख दिया। भगवान जब तप धारण कर वाराणसामें कायोत्सर्गमें स्थित थे, तब इंद्रने उन्हें ध्यानसे विध-रहित करनेके लिए महान उपसर्ग किया। उस उपसर्गको जीत लेनसे इंद्रने उसका नाम महतिमहाधार रखा।

यहा पर 'वेत्ति' इस च से भगवानमें उक्त नामोंका संश्लेष

किया गया है। इति शब्द यहाँ पर प्रकार अथमें आया है। इस प्रकार-बाल इष्ट द्रवताके रूपमें शास्त्रके प्रारंभमें स्तवन करने योग्य हैं। यह चेदिका अर्थ है।

सभा चतुर्विंशति तीर्थंकर स्तुत्य है फिर भी प्रथम यती गणधर देवने भगवान् वर्द्धमान त्रिनेश्वरधी ही स्तुति पया की, इसका उत्तर ऐसा आशका होन पर कहत है।

जिस भगवान्के समीप में धर्मके मार्गमें नियमसे प्राप्त हुआ है उस भगवान्के समीप काय, यचन और मनसे सधकाल विनय प्रयुक्त करता है। विनय हा प्रयुक्त नहीं करता है वि-तु जिस जानुद्वय और करद्वयमें पाँचवा सिर है उसमें सत्कार करता है—नमस्कार करता है ॥ १ ॥

इस प्रकार गणधर-बाल नामक प्रतिक्रमणा-सम्बन्धी सगलदृष्टक समाप्त हुआ।

सुद मे आजस्सतो । इह खलु समणेण भयवदा महदिमहावीरेण महावस्सवेण सव्वण्हुराणा सव्वलोग-दरसिणा सदेवासुरमाणुसस्स लोघस्स आगदिगदिच-वणोववाद वध मोकख इडिड्ठ ठिदि जुदि अणुभाग तक्क वल मणोमाणसिय भूत कय पडिसेविय आदि-कम्म अरहक्कम्म सव्वलोए सव्वजीवे सव्वभावे सव्व सम जाणता पस्सता विहरमाणेण समणाण पचम-हव्वदाणि राईभोयणवेरमणछट्ठाणि मभावणाणि समाउगपदाणि सउत्तरपदाणि सम्म धम्म उवदेसि-दाणि । त जहा—

इं आयुष्मान् मव्यो । इस भरत क्षेत्रमें देव, असुर, और मनुष्या सहित प्राणिगणका १ आगति, २ गति, ३ च्यवनोपपाद, ४ बध ५ मोक्ष, ६ ऋद्धि, ७ स्थिति ८ द्युति ९ अनुभाग १० तर्क, ११ कला, १२ मन, १३ गानसिक, १४ भूत, १५ कृत, १६ प्रतिसेवित, १७ आन्विकर्म १८ अरुहकर्म इनको तीनसौ नेतालीस गज्जुप्रमाण और लोकम सब जीवा, सब भावों और सब पर्यायोंको एक साथ जानत हुए, देखते हुए तथा विहार करत हुए काश्यप-गोत्राय श्रमण भगवान् सर्वज्ञ सर्वदर्शी महतिमहावर अतिम ताथवर देने पच्चीस भावनाओं सहित, मातृका पदों सहित और उत्तर—पदों सहित रात्रि भोजन विरमण है छठा अणुव्रत जिनमें ऐसे पाच महाव्रत—रूप समीचान धर्मोंका उपदेश दिया है, वह मैंन उनकी दिव्यध्वनिसे सुना है ।

उन उक्त विशेषणोंसे विशिष्ट महाव्रतोंका स्वरूप जैसा भगवान् ने क्रममे कहा है वैसा हा प्रथकार प्रतिपादन करते हैं

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमण, विदिण्ण महव्वदे मुसावादादो वेरमण, तिदिण्ण महव्वदे अदिण्ण-दाणादो वेरमण, चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमण पचमे महव्वदे पग्गिहादो वेरमण, छट्ठे अणुव्वदे राईभोयणादो वेरमण चेदि ।

१—अथस्थानसे यहां आना, २ यहांसे अन्यत्र जाना ३ च्युत होना, ४ जन्म लेना ५ धर्मोंका बध, ६ धर्मोंका मोक्ष ७ चक्रवर्ती तथा सौधर्मादिदेवाका ऋद्धि ८ आयुस्थिति, ९ द्युति, १० धर्मोंका फल देनेका सामर्थ्य ११ तर्कशास्त्र, १२ बहत्तर-कला या गणितविद्या १३ परकाय चित्त १४ मनका चेष्टा १५ पूर्व अनुभूत, १६ पूर्वकृत १७ पुन सेवित १८ धर्मभूमिके अनु-प्रवेशम प्रथमतः प्रवृत्त अस्ति, मसि, कृष्यादिक कर्म १९ अकृत्रिम श्रेय समुद्रादिका प्रकट कर्म ।

प्रथम महाव्रतम प्राणोक् प्रतिपात (व्यपरोपण) स विर-
मण, दूसरे महाव्रतमें मृषावादसे विरमण, तासरे महाव्रतमें
अदत्ताणास विरमण चौथे महाव्रतमें मैथनस विरमण और
पांचवें महाव्रतमें परिग्रहसे विरमण तथा छे अगुव्रतमें राशि
भोजनसे विरमण करना चाहिए ।

उनमेंसे भगवान् द्वाग उपनिष्ट पहले महाव्रतमें अनुष्ठाना
मुनिके लिए सावन्धस विरति लिखात हूण कहते हैं—

तस्य पदमे महुव्वदे मत्व भते । पाणादिषाद
पच्चक्खामि जावज्जीव तिविहरण मणसा वचिया
काएण से एड्ढिदिया वा वेइ दिया वा, तेइ दिया वा,
चउरिदिया वा, पच्चिदिया वा, पुड्विकाइए वा वाउ-
ओइए वा तेउकाइए वा वणप्फदिकाइए वा तसकाइए
वा अडाइए वा पोदाइए वा जराइए वा रसाइए वा
ससेदिमे वा सम्मुच्छिमे वा उव्वेदिमे वा उव्वदिमे
वा तसे वा थावरे वा वादरे वा सुहुमे वा पाणे वा भूदे
वा जीवे वा सत्ते वा पज्जत्ते वा अपज्जत्त वा अवि-
चउरासीदिजोणिपगुहमदसहस्सेसु, णेय सय पाणादि-
वादिज्ज णो अण्णेहि पाणे अदिवादावेज्ज अण्णेहि पाणे
अदिवादिज्जतो वि ण समणुमणत्तज तस्म भते ।
अइचार पडिक्कमामि णिदामि गरहामि अप्पाणं
वोस्सरामि पुड्विचण भते । ज पि मए रागस्म वा
दासस्म वा मोहस्स वा वसगदेण सय पाणे अदिवादा-
विदे अण्णेहि पाणे अदिवादाविदे अण्णेहि पाणे अदि-
वादिज्जते वि ममए मण्णिदे त पि इमस्स णिग्गथस्स

पावयणस्त अणुत्तरम्स वैवन्निमम्स वैयतिपण्णत्तस्त
 घम्मस्त अहिमातवत्तणस्स, सच्चवत्तिट्टियम्स विणयमूलस्स
 गमावत्तस्त अट्टारसमीलगहम्मपरिमाडि स्स चत्तरासी-
 दिगुणमय-महस्सविट्ठियस्स अत्रव-भच्चरगुत्तस्स नियति-
 लक्खणस्स परिचायपत्तस्स उवगमपहाणस्स गतिमग्ग-
 देसयस्स मुत्तिमग्गपयामयस्स सिद्धिमग्गरज्जवगाणस्स,
 से बोहेण वा माणेण वा माग्ग वा सोहेण वा अण्णा-
 सेण वा अदमणेण वा अविग्गण वा असममेण वा असम
 सेण वा अण्हिगमणेण वा अभिमसिदाण्ण वा अयो
 हिदाण्ण वा रागेण वा दासेण वा मोहेण वा हस्सेण
 वा भएण वा पदोसेण वा पमादण वा पम्मेण वा
 पिवासेण वा सज्जेण वा गारवण वा अणादरेण वा
 वेण वि वारणेण जादेण वा मालसदाए मम्मभारि-
 गदाए मम्मगुम्गदाए मम्मदुच्चरिदाए मम्मपुरववट्ट-
 दाए तिगारवगुरगदाए अत्रवहुमुद्ददाए अविदिदपरमट्ट-
 दाए त सब्ब पुब्बं दुच्चरियं गरिहामि आगमेगिच्च,
 अपच्चविसयं पच्चवग्गाभि, अणातोचिय आनोचेमि,
 अग्गिदियं णिदामि, अगरहियं गरहामि, अपट्ठिवकत्त
 पट्ठिवग्गमामि, विराहण बोस्सराभि आगहण अत्तभुट्ठे मि,
 अण्णाण बोस्सराभि सण्णाणं अत्तभुट्ठे मि, कुदसण
 बोस्सराभि मम्मदसण अत्तभुट्ठे मि, बुधग्गिय बोस्सराभि
 सुपरियं अत्तभुट्ठे मि, कुत्तव बोस्सराभि सुत्तव अत्तभुट्ठे मि

अकरणिज्ज वोस्सरामि करणिज्ज अब्भुट्ठे मि, अकिरिय
 वोस्सरामि किरिय अब्भुट्ठे मि, पाणादिवाद वोस्सरामि
 अभयदाण अब्भुट्ठे सि, मास वोस्सरामि सच्च अब्भु-
 ट्ठे मि, अदत्तादाण वोस्सरामि दिण्णक्कप्पणिज्ज अब्भु
 ट्ठे मि, जबभे वोस्सरामि वभचरिय अब्भुट्ठे मि, परिग्गह
 वोस्सरामि अपरिग्गह अब्भुट्ठे मि, राईभोयण वोस्स-
 रामि दिवाभोयणमेगभत्त पच्चुप्पण फासुग अब्भुट्ठे मि,
 अट्टरुद्धञ्जाण वोस्सरामि धम्ममुत्तञ्जाण अब्भुट्ठे मि,
 किण्हणीलकाउलेस्स वोस्सरामि तेउपम्मसुक्कलेस्स
 अब्भुट्ठे मि, आग्ग वोस्सरामि अणारभ अब्भुट्ठे मि अस-
 जम वास्सरामि सजम अब्भुट्ठे मि, सग्गथ वास्सरामि,
 णिग्गथ अब्भुट्ठे मि, सचेल वास्सरामि अचेल अब्भुट्ठे मि,
 अलाच्च वोस्सरामि लोच्च अब्भुट्ठे मि, ण्हाण वोस्सरामि
 अण्हाण अब्भुट्ठे मि अखिदिसयण वोस्सरामि खिदिसयण
 अब्भुट्ठे मि, दत्तवण वोस्सरामि अदत्तवण अब्भुट्ठे मि
 अट्ठिदिभोयण वोस्सरामि ठिदिभोयणमेकभन्न अब्भु-
 ट्ठे मि अपाणिपत्त वोस्सरामि पाणिपत्त अब्भुट्ठे मि,
 कोह वोस्सरामि खति अब्भुट्ठे मि माण वोस्सरामि मद्दव
 अब्भुट्ठे मि, माय वोस्सरामि अज्जय अब्भुट्ठे मि, लोह-
 वोस्सरामि सतोस अब्भुट्ठे मि, अत्तव वोस्सरामि दुवा-
 दसविह्वनवोकम्म अब्भुट्ठे मि, मिच्छत्त परिवज्जामि
 सम्मत्त उवसपज्जामि, असील परिवज्जामि सुसील

उदमपञ्जामि, ससत्त्वं परिवञ्जामि शिंशरत्न उदस-
 पञ्जामि, अविगय परिवञ्जामि त्रिणय उदमपञ्जामि,
 असाचार परिवञ्जामि आचार उदमपञ्जामि, उम्भग
 परिवञ्जामि जिगमग उदसपञ्जामि अत्यति परि-
 वञ्जामि इति उदसपञ्जामि अमुक्ति पञ्चिञ्जामि,
 गुप्त उदसपञ्जामि, अमुक्ति परिवञ्जामि मुमुक्ति
 उदसपञ्जामि अममाहि परिवञ्जामि तुममाहि उद-
 सपञ्जामि, ममति परिवञ्जामि गिममति उदमप-
 ञ्जामि, अभाविय भावमि, भाविय ग भावेमि, इम
 गिगमय पदप्रयण अगन्तर ववन्विय पडिपुण्ण सोगाइय
 सामाइय समुद्ध सन्लघट्टाण मरुत्तघन्ताण मिद्धिमग
 सेद्धिमग गतिमग मुत्तिमग पमुत्तिमग मानत्तमग
 पमाव्वमग गिद्वाराणमग गिञ्जाणमग मव्वदुव्व-
 परिहाणिमग मुचरियपरिणिगारणमग जत्थ ठिया
 जीवा मिञ्जति वुञ्जति मुचनि परिणिद्वारायति मव्व-
 दुव्वखाणमत ररेति त मद्दहामि त पन्नियामि त राचेमि
 त फामेमि, इदा उत्तर अण्णु गरिय ग भूद ग भव
 ण भविस्साद, णाणेण वा दमणेण वा चरित्तेण वा
 मुत्तेण वा मीलेण वा गुण्ण वा तवेण वा शियमेण
 वा वदण वा विहारण वा आलएण वा अञ्जवेण वा
 साहवण वा अण्णुण वा वीरिण्ण वा ममणेमि
 सजदोमि ७५२ उत्तरे उवधिणियडिमाण

मायामोक्ष-मूरण-मिच्छाणाण मिच्छादसण-मिच्छा-
 चरित्त च पडिविरदोमि, सम्मणाण-सम्मदसण-सम्म-
 चरित्त च रावेमि, ज जिण्वरेहि पण्णत्तो जो मए
 देवसिय-राइय पविसियचाउम्मा।सयसवच्छरिय इरिया-
 वहिकेसलोचाइचारस्स सधारादिचारस्स पयादिचारस्स
 सव्वादिचारस्स उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोवेमि ।
 पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमण उवट्ठावण-
 मडले महत्थे महागुण महाणभावे महाजसे महापुरि-
 साणुचिन्ने अरहतमक्खिय सिद्धसक्खिय साहुसक्खिय
 अप्पसक्खिय परसक्खिय देवतासक्खिय उत्तमट्ठमिह
 इद मे महव्वद सुव्वद दढव्वद होदु, णित्थारम पारय
 तारय धाराहिय चावि ते मे भवतु ।

प्रथम महाव्रत सर्वेषा व्रतधारिणा सम्यक्त्वपूर्वक
 दृढव्रत सुव्रत समाहृतं ते मे भवतु ॥ ३ ॥

एषां अग्रहताण एषां सिद्धाण एषां आइरीयाण ।
 एषां उवज्झायाण एषां लोए सव्वसाहण ॥ ३ ॥

उक्त प्रकारके पांचमहाव्रतोंमें इ भगवन् ! सम स्थूल और
 सूक्ष्म प्राणानिपातका जायन पर्यन्त तान प्रकार मन, वचन और
 कायसे परि याग करता हूँ ।

उस प्रथम महाव्रत-सम्बन्धी जो प्राणोंके व्यपरोपण का
 त्याग है वह कि।में धरना चाक्री ? यह कहत हैं—एकेन्द्रिय
 दोइन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय और पांच इन्द्रिय तथा

पृथिवी कायिक, जल कारिक, अग्नि कायिक, वायुकायिक, वनस्पति कायिक और व्रत कायिक, अंडाविक, पाठाविक, जराविक रसाविक, मस्त्रेदिम, सम्मूच्छिदम, चन्द्रेदिम, और उपपादिम व्रत और रघावर, भाद्र और मूरम, प्राण, मूल, जाव, और सख, पपांल और अपपांल तथा थौरासा साख पाणि प्रमुख जीव इन सब जीवोंमें श्वयं प्राणोंका अतिपात (पात) न कर, न अश्वय स प्राणोंका अतिपात करावे और न श्वयं प्राणोंका अतिपात करत हुए अश्वयोंकी अनुमोदना कर ।

हे भगवन् ! इस प्रथम महाव्रतमावस्था अतिपातका प्रतिक्रमण (निराकरण) करता हूँ । अपनी निम्ना करता हूँ, गर्ह करता हूँ । हे भगवन् पूर्व (अतात) कालन वरार्थित अति पातका त्याग करता हूँ । आर्मी मंत्रे राग, द्वेष, और मादृष्ट वरार्थित हाकर श्वयं प्राणोंका अतिपात किया है, दूसरोंस प्राणोंका अतिपात कगया है और श्वयं प्राणोंका अतिपात करते हुए अश्वयोंका अनुमादना का है उस सबका त्याग करता हूँ । यह आ निमन्च रूप है, पावन है, अथवा प्रवचनमें प्रतिपादित है, इमम निम्न और कई उत्कृष्ट नहीं है, केंवमिप्रखात है, अहिंसा सहणका पारक है, मरवस अभिष्ठित है, विनयका मूल है, उमासे बलिष्ठ है, अतरह हजार शालोंस परिमदित है, थौरासी साख गुणोंस असकृत है, नव प्रकारके मद्यवयस सुरक्षित है, विषदोंकी व्यावृत्तिस सहित है, बाष्पाभ्यन्तर परिमरक त्यागका फल है, आधादिकके त्यागका प्रधान कारण है, परम सुमाक मार्गका अधान इष्ट और अतिष्टमें सममादका अवदेराक है, मुक्ति अधान कर्माका एक देश निजराके उपायका प्रकाराक है सिद्धि अधान सम्पूर्ण कर्माका निजरा या अनन्त अनुपयका प्रातिका माग यथावदात चारित्रका परम प्रहर्ष है, इसे इस निर्धन्ध धर्मका माय मान, माया, सोम, अवीर्य (शक्तिके अभाव) अर्धयम,

ग्रहण, अविचार, अधोध, राग, द्वेष, मोह, हास्य, भय, प्रद्व, प्रमाद, क्रम, विषयोका अतिगृद्धि, लज्जा, गारव, आलस्यता, कर्माके बोध, प्रदेशोंकी बहलता, कर्माकी शक्तिका बाहुल्य, कर्माकी दुरचारित्रता, कर्माकी अत्यन्त तीव्रता, तीन'गो'र्वोंकी उत्कृष्टता, अरपभ्रतता' (सकल शास्त्रोंमें अप्रवाणता) परमार्थके ज्ञानका अभाव इन सब कारणोंसे पूर्व' दुरचरित्रकी गुरु-साक्षीसे गहरी करता है प्रतिब्रमणसे निराकरण करता है। आगामी' अप्रत्यक्षित (अत्यन्त) दुरचरित्रका प्रत्याख्यान द्वारा से निराकरण करता है। क्योंकि आगामी दुरचरित्रका 'निराकरण प्रतिब्रमणमें नहीं होता। इसका कारण यह है कि कृत गोषोंके निराकरण करनेमें ही प्रतिब्रमणका सामर्थ्य है। इसलिये भार्वाक्षोंके कारण रागद्वेष आदिकी उत्पत्तिना निराकरण प्रत्याख्यानसे होता है अनालोचित की आलोचना करता है। अनिदितकार्नि दा करता है, अगर्भित वा गहरी करता है अप्रतिष्ठा' प्रतिब्रमण करता है, निराधना' अर्थात् रत्नत्रयके विषय मं मन, धन और कायसे की गई साजसज्जुतिकी त्यागता है। रत्नत्रयकी आराधना अर्थात् रत्नत्रयके विषयम मन धन और कायसे निरवध वृत्तिका अनुष्ठान करता है, मिथ्या मति श्रुत अवधि स्वरूप अज्ञानका त्याग करता है। मति श्रुत अवधि मन पर्यय केवल, स्वरूप सम्यग्ज्ञानका अनुष्ठान करता है। विपराताभिनिवेश स्वरूप कुदर्शनका त्याग करता है। तत्त्वार्थ-अज्ञान लक्षण सम्यग्दर्शनका अनुष्ठान करता है। मिथ्यास्वप्न चारित्रिका त्याग करता है। सामायिकादि सम्यक्स्वप्न चारित्रिका अनुष्ठान' करता है। 'पंचाग्नि-माधनादि कुतपका त्याग करता है। बाह्याभ्यन्तर अनशनादि सुतपसा अनुष्ठान करता है। अन्नतादि अकृत्यका त्याग करता है। पालन करने योग्य अहिंसादि व्रतका अनुष्ठान करता है। प्राणोंके व्यपरा-पर्यका त्याग करता है। अभयदानका अनुष्ठान करता है।

गृहप्रादका त्याग करता हूँ। सत्यका अनुष्ठान करता हूँ।
 अदनादान (चोरी) का त्याग करता हूँ। दिये हुए याग्य
 (अग्नौय) का अनुष्ठान करता हूँ। अन्नदान (दुष्कान) का
 त्याग करता हूँ। अन्नचयका अनुष्ठान करता हूँ। परिग्रहका
 त्याग करता हूँ। अपरिग्रहका अनुष्ठान करता हूँ। रात्रि
 भोजनका त्याग करता हूँ। यथाकाल प्राप्त प्राप्त एक मुक्त
 त्रिभुज मानवका अनुष्ठान करता हूँ। आर्त रौद्र ध्यानका त्याग
 करता हूँ। धर्म शुक्लध्यानका अनुष्ठान करता हूँ। जीवका
 पाप कर्मसंलित करने वाला कृष्ण, नाल और वापोत्त लेशका
 त्याग करता हूँ। जावका पुण्य कर्मसंलित करने वाला पात,
 पद्म और शुक्ल लेशका अनुष्ठान करता हूँ। असि, मणि,
 कृष्यादि व्यापारका त्याग करता हूँ। असि, कृषि आदि व्या
 पार अभावका अनुष्ठान करता हूँ। असयमका त्याग करता हूँ
 सयमका अनुष्ठान करता हूँ, समर्थका त्याग करता हूँ।
 निग्रन्थका अनुष्ठान करता हूँ। चल अथवा वस्त्रका त्याग
 करता हूँ। उसम विपरात अवेज्ञका अनुष्ठान करता हूँ।
 लाचना अनुष्ठान करता हूँ। स्नानका त्याग करता हूँ। अस्नान
 का अनुष्ठान करता हूँ। अक्षिति शयन अर्थात् लट्वादि शयन
 का त्याग करता हूँ। क्षितिशयनका अनुष्ठान करता हूँ।
 दंतवनका त्याग करता हूँ। अदन्तवनका अनुष्ठान करता हूँ।
 अस्थिति भोजन (बैठकर) भोजन करणका त्याग करता हूँ।
 एक बार स्थिति भोजनका अनुष्ठान करता हूँ। पात्रम भोजन
 करणका त्याग करता हूँ। पाणिपात्रमें भोजनका अनुष्ठान
 करता हूँ। शोधना त्याग करता हूँ। क्षमा धारण करता हूँ।
 मानकषायना त्याग करता हूँ। मार्दव को धारण
 करता हूँ। मायाका त्याग करता हूँ। आनन्द धारण
 करता हूँ। परिग्रहमें गृद्धि स्वरूप लामका त्याग करता हूँ।
 मन्तोष धारण करता हूँ। अतपका त्याग करता हूँ। बारह
 प्रकार तप कर्मका अनुष्ठान करता हूँ। मिथ्यात्वका परित्याग

करता हैं। सम्यक्त्व स्वीकार करता हैं। अतः के विघातक अशीलका परिषेवन करता हैं। अतः परिरक्षक सुराशोक प्राप्त करता हैं। सशक्त्यपनेका परिषेवन करता हैं। निरक्षयका अनुष्ठान करता हैं। अविनयका परिषेवन करता हैं। विनयको प्राप्त हैं। अनाचारका परिषेवन करता हैं। आचारको स्वाकार करता ह। एकान्त वादियों द्वारा उपकल्पित उन्मार्ग का परिषेवन करता ह। स्वर्गापवगके कारण चित्त मार्गको स्वाकार करता ह। अज्ञान्तिका परिषेवन करता ह। ज्ञान्ति धारण करता ह। अगुप्तिका परिषेवन करता ह। रत्नत्रयका मरक्षण करने वाला गुप्ति स्वाकार करता ह। अमुक्तिका परिषेवन करता ह। एक देश या अवशसे कर्मोंका निवृत्त करन वाला सुमुक्तिका स्वाकार करता ह। धर्मध्यान और शुक्लध्यानका समाधि कहते हैं, उसक अभावको असमाधि कहते हैं, उस असमाधि परित्याग करता ह। सुसमाधिको धारण करता ह। शरीरादिमें समत्वका त्याग करता ह। निममत्त्व धारण करता ह। अनादि संसारमें परिभ्रमण करत हुए मैंने जिनका कभी भा भावन अभ्यास नहीं किया है उसका भावन अभ्यास करता ह। अनादि संसारमें जिन मिथ्यादर्शन आदि का सर्वदा भावन अभ्यास करता रहा ह। उस मिथ्यात्वका भावन अभ्यास मन्द करता ह। इस निर्मन्थलिंगका अद्धान करता ह। इसको प्राप्त होता ह। इसमें उचि करता ह इसका स्पश करता ह। यह निर्मन्थलिंग मोक्षमार्गके रूपसे आगममें प्रतिपादित किया है। इस निर्मन्थसे ऊँचा अन्य कोई लिंग नहीं है जो मोक्षका माग हो। यह निर्मन्थलिंग केवल प्रणीत है या केवली-सम्यन्धी है। अयोग केवलामें यह निर्मन्थलिंग सम्पूर्ण जन्मके क्षयका हेतु होनेसे परिपूर्ण है। परिपूर्ण रत्नत्रय रूप निकायमें उत्पन्न हुआ है इसलिए नैकायिक है। अथवा एक प्रकार नहीं किन्तु अद्वितीय है। एकत्व या परम उदासीनता

या मय सावन् योक्ता क्यातृत्तिका मयवर्द्ध । उभय भा
 हा या वह निरुद्धा ध्या नन हा ममामाविष्ट पदत है, अतः या
 निमन्त्र लिग पदव्यया परम उदाहरणता या मयमावन् योगम
 प्यावति रूप है । मयुद्ध है अथात् निरुद्धा (निरुद्ध) है
 अथवा आभाषादि धार्यरक्षणाम विमुद्ध है । माया विषया
 श्रीर निरुद्धा ३ : १ १ शब्दोक्त कीदृश ताथोक इत मय शब्दो
 कानारा करन वाभा है । मिद्धि अथ ग क्यातादभ्रस्थि अथवा
 पुद्धि तप लदिर आदि अद्विभा प्राप्तिहा मग है । प्रति मय
 अमंठ्यात गुण भंगिरूप कम निरुद्धाका कारण है अथवा उर
 शम अंति श्रीर अरर भलिते क्यातात्तिका कारण है । उभय
 समाका माग है मयसंगक परिश्यागका कारण है अहम कदरथा
 रूप एक रगम कमक सयका कारण है मिद्धावस्था रूप मय
 नेशम कमक सयका माग है । मयुद्धातिष्ठ परिश्याग रूप मय
 से निरुद्धा उपाय है । मयमाया अभाष या परम गुणता
 माग है । शाररिष्य, भागितर अर आगन्तुक् मय मय गुणा
 की दानिधा माग है । मयमायिद्यात् विमुद्ध पाररुद्ध पारर
 पुररुद्ध परिश्यागुद्धा माग है । मयमाय वह निरुद्ध लिग
 अरने पाररुद्धा मयि भयम या द्विनागात् भवाम माय प्राण
 ररुद्धा मय है । मय मयमाय वह निरुद्ध (दिग्भर) निरुद्ध
 है । निमम मिया मुक्तिव चहाना भौव मिद्धा अथात् मयमा
 पल्लमदा श्रीर लक्ष्मि अथि यावा प्राण परन है तावात् ररुद्धा
 क रथारुग् मयरुद्धा जानत है, अर्थात् निरुद्ध निरुद्ध हा मय
 हा तावात् ररुद्धा मय निमका कारण है मयि मुक्ति प्रादि
 लक्ष्मिधाका मय मय है । मय कर्माने विमुद्ध दान है । इमामे
 मुक्ती अथवा मय-मय दान है । शाररिष्य, भागितर प्राणि
 अथिल टुवाका अन्त (विनारा) करन है । इम मय प्रकार
 निमन्त्र निमन्त्र उरुद्ध मायका माय अन्त्य लिग
 मयमाय

अतः कालम् ह्यस्मात् १

फलम सभावना है और न आग आत फलम हागा । किवा
 फलम किमा गुण विज्ञपरा लका सममे उत्कृष्ट चाइ लिंग गडा
 है । ज्ञान, दर्शन, चारित्र मूर्त शाल गुण, तप नियम, व्रत
 विहार (आचरण) आलय (निरर्थक श्राधय) आनय और
 लाघय इमम और न्त प्रवाराम अन्य किमा प्रवारम इम
 निप्रत्य लिंगम उत्कृष्ट अन्त लिंग नन्त है न भूत फलम था
 और न भविष्यफलम हागा । इम प्रकारक निप्र ५ लिंगम
 स्थित ह्या में श्रमण हाता है प्राणी द्वय समय म तत्पर समय
 हाता ह । विषयाम उपरत (त्याग) हाता ह । और किसी भा
 विषयम राग द्वेष अभावम उपगा त हाता ह । उपरि धर्मति
 (वचना) माया (कुम्बिता) मृषाम रहित हाता हुआ मिथ्या
 ज्ञान मिथ्यादर्शन और मिथ्याचारित्रम प्रतिधर्मत हाता ह ।
 सम्यग्ज्ञान सम्यग्दर्शन और सम्यग्चारित्रम स्ति करता ह ।
 महाथ, महागुण, महानुभाव, महायश महापुरुषात्पुत्राण
 मम प्रथम महाप्रत लक्षण प्रतागण हाते पर श्रमण हाता हू ।
 नि । म उत्कृष्ट तीर्थकरत्त प्रणीत आगमम प्रातर्पणित प्राणति
 पातमे त्रिमण्डिरूप यमेत महान्त अरहत साक्षि, मि
 साक्षि साधुसाक्षि आत्मसाक्षि परमाक्षि और प्रता
 साक्षि (इन सबका साक्षात् कर्क मर द्वारा प्रहणिया
 गया व महान्त गुप्त अखण्डत हाय त्वात्परूप दुस्तर दुग
 मे निस्तारक समार समुत्तम पन्न बाल तीर्थाया पालक अथवा
 समार समुत्तरे पार प्रापक हात्म पारग समार रूप महाशुभम
 उत्तारक और अन्त चतुष्टयी प्राति रूप साक्षरा आराधन
 साधन हाव । इम प्रकार क प्रथम महान्तरे आरोपण पर
 लन पर सम्पूर्ण अतिशयो (लया) वा विशुद्धि लिंग त्रैमिक
 साक्षि, पाक्षि, चातुर्मासिक, मायत्मारक, म परदारकाल नियम
 मे वा चाइ अतिचार लगा है उम सब की विशुद्धि प्रतिब्रमण
 करता है । तथा इयापथ त्वय कश लोच द्रव्य माग रूप द्रव्य

सर्वं नृ-शोक मन्मथम विमम वा नाऽऽथातचार न्तने हृथा
 है नम मरकी विशुद्धि के लिए प्रतिप्रमण प्रिया जाता है ।

पत्नी महाप्रत मत्र व्रतयोग नागिणोऽस्य सम्यक्प्रपूज्य न्तम
 अक्षर्य अक्षर्य न्तरूप समाकृत तुम्हारे मर फाय ।

आहावर विदिए महद्वदे मन्त्र भते । मुमावाद
 पच्चवस्वामि जावज्जीव तिविहण मगसा वचिया
 वाएण से कोहण वा मागण वा माएण वा लोहण
 वा रागेण वा दौमण वा मोहण वा हास्सण वा
 भएण वा पदासेण वा पमादण वा पिम्मेण वा
 पिवासेण वा लज्जेण वा गार्व्वेण वा अणादरेण वा
 वेण्वि कारणेण जादेण वा णम मय मोस भासेज्ज
 ग अण्णहि मोस भासाविज्ज अण्णहि मास भामिज्जत
 पि ण समणुमण्णिज्ज तस्स भते । अइचार पडिक्क-
 मामि गिदामि गरहामि अप्पाण, चाम्सरामि पुड्विचण
 भते । ज पि मए रागस्स वा दानस्स वा मोहस्स
 वा वसगदेण मय मोम भामिय अण्णोहि मोस भासा-
 विय अण्णहि मास भासिज्जत पि समणुमण्णिद
 इमम्म गिग्गथस्स पयणु म अणत्तरस्स वेवलियस्स
 वेवलिपणत्तस्स धम्मस्स अहिमालक्खणस्स मच्चहि
 ट्ठियस्स विणयमलस्स ममावलस्स अट्ठारससील
 महस्सपग्गिडियम्म चउरामीदिगूणसयसहस्स
 सियस्स नम्म चिय

उत्पन्न शेषमे न स्वयं अमत्य बोले, न अन्यमे असत्य पुनाये और अन्य स्वयं अमत्य बालता हा ता उतर्ही अनुमोदना न करे। हे भगवन् ! हम द्वितीय महाव्रत सम्बन्धी अनिचार का प्रतिग्रमण (निराकरण, विशुद्धि) करता हूँ। स्व-साही पूवक, अपनी निन्हा करता हूँ, पर (गुवादि) की माही पूवक अपनी गहा करता हूँ और हे भगवन् ! पूवकाल में उपार्जित अति चार का भी त्याग करता हूँ। जा भी मैं राग, दोष और मोह के बरा टाकर स्वयं अमत्य भाषण किया ह, अन्यमे अमत्य भाषण कराया है और स्वयं अमत्य भाषण करत हुए पर की अनुमोदना भी है उस मय का परित्याग करता हूँ।

जा निषत्य रूप ह, यह परम पावन ह, ज्ञान धैराय्य म युक्त है महापुरुषा द्वारा कृत आगम में पेश गया है अनुत्तर है, वेदनाम सम्बन्धित, वेदनी प्रक्षाल्य, अहिंसा लक्षण बाला है, मत्यम अधिष्ठित, वित्तका मूल ह, क्षमा से उपचिन्त ह, अठारह हजार गाला म परिमण्डित है, गौराभी लाय गुणा म अलङ्कृत है नरप्रकार प्रक्षय म मुग्धित है, नियति अयात् विषया की व्यापृत्तिम ललित है, चापाभ्यन्तर परिमह व त्याग का फल है, माधात्रि का अभाव विमका प्रभात कारण है, परम क्षमाके मार्ग अगात् इष्टाणिम सम भावका उपदेशक है, मुक्ति अर्थात् पत्र त्श कम निवरा व मार्ग का प्रकाशक ह, मित्रि अर्थात् परि पूर्ण वर्ग निवरा या अनन्त अनुष्ठय की प्राप्ति का उपाय है, यथा स्वान चारित्र का पयत्रमान है णम इम (निर्मय) सत्य धमका प्राथ मान, माया लाभ अज्ञान अज्ञान, अथाय अर्मपम, धमय विषयमें अश्रद्धा अप्रतिग्रहण, अविचार अयोव, राग, द्वेष, मोह हास्य, भय, प्रद्व य, प्रमाद, प्रम विषयों का अतिगृहि, लज्जा गान्य आलस्य, अयिचक, कमभार, कर्मप्रवेश का बाह्य, कमशक्ति का बाहुल्य, कर्माही दुरारिप्रता, कर्माकी अन्यन्त तोत्रता, तीनों गारया की उच्छ्रुता, अल्पभतता, पारमा

परिचागकनस्त उवसमपहाणस्त खतिमग्गदेमगस्त
 पुत्तिमग्गपयामयस्त मिद्धमग्गपज्जवमाहग्गस्त सम्म-
 णाण-सम्मदसण सम्मचरित्त च राचेमि ज जिणवरोहि
 पण्णत्तो इत्थ जो मए देवसिय राइय पक्खिय-चउमा-
 सिय-सउच्चरियइरियावहिकेसलोचाइचारस्त पथादि-
 चारस्त सव्वातिचारस्म उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्त च
 नेवमि, विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमण
 उवट्ठाणमडले महत्थे महाग्गणे महाणुभावे महाजसे
 महापुरिसाणुविण्णे अ हतसक्खिय सिद्धसक्खिय
 साहुसक्खिय अप्पमक्खिय परसक्खिय देवनामक्खिय
 उत्तमट्ठम्मि इद मे महव्वद सुव्वद दढव्वद हादु, णित्था-
 रय पारय तारय आराहिय चावि ते मे भवतु ।

द्वितीय महाव्रत सर्वेषा व्रतधारिणा सम्यक्त्व-
 पूर्वक दृढव्रत मुव्रत समारुह तं म भवन्तु ॥ ३ ॥

एमो अरहताण गमा सिद्धाण गमा आइरीयाण ।

एमो उज्जभायाण गमा लाए सव्वसाहूण ॥ ३ ॥

हे भगवन् अतन्तर प्रथम महाव्रत म भिक्षि द्वितीय महाव्रत
 म स्थूल और सूक्ष्म सब मृपा प्राण का जीवन पर्यन्त तीन प्रकार
 मन व्रत और काय म न्याग करता हँ । इस मृपाप्राण विगति
 लक्षण चाल द्वितीय महाव्रत म ज्ञाति शरक प्राणस, मानमे,
 मायामे लाभमे, रागमे द्वेष से, मोहम, हास्यम, भयमे,
 प्रद्वेष स, प्रमादमे, प्रेममे, पिपासामे, लज्जामे, गारवमे, अना-
 दरस और ग्त कारणों के अतिरिक्त अन्य किसी कारण से

उत्पन्न नोपसे न स्वयं असत्य बाले, न अन्यसे असत्य युलाये और अन्य स्वयं असत्य बोलना हो तो उसकी अनुमोदना न करे। हे भगवन् ! इम द्वितीय महाव्रत सम्बन्धी अतिचार का प्रतिब्रमण (निराकरण, विगृही) करता हूँ। स्व साक्षी पूजक, अपनी निष्ठा करता हूँ, पर (गुणादि) की साक्षी पूजक अपनी गहा करता हूँ और हे भगवन् ! पूजकाल में उपासित अति चार का भी त्याग करता हूँ। जा भी मैं न राग, दोष और मोह के बश होकर स्वयं असत्य भाषण किया है, अन्यसे असत्य भाषण कराया है और स्वयं असत्य भाषण करते हुए पर की अनुमोदना की है उम सब का परित्याग करता हूँ।

जो निष्प्रय रूप है, वह परम पावन है, ज्ञान चौराग्य से युक्त है महापुरुषा द्वारा कथित आगम में कहा गया है, अनुत्तर है, केवलासे सम्बन्धित, केवली प्रणाल, अर्हिसा लक्षण वाला है, मत्स्यस अधिष्ठित, विन्यक्ता मूल है जमा से उपचित है, अठारह हजार शाला से परिमदित है, चौरासी लाख गुणा म अलकृत है, नयप्रकार प्रसन्नय से मुरक्षित है, नियति अर्थात् विषया की व्यापृत्तिम लक्षित है, वाग्नाभ्यन्तर परिमद क त्याग का फल है, क्रोधान्त्रि का अभाव तिमका प्रधान कारण है, परम जमाके माग अत्रात इष्टानिष्टम मम भावना उपन्शक है, मुक्ति अर्थात् ण्व नेश कम निन्तरा के माग का प्रपाराक है, सिद्धि अर्थात् परि पूर्ण कम निन्तरा या अनन्त चतुष्टय की प्राप्ति का उपाय है, यथा स्यात् चारित्र का पयमान है, एमे इम (निष्प्रय) सत्य धर्मका प्राथ, मान, माया, लाभ, अज्ञान, अदर्शन, अर्थात्, अमंयम, धमने विषयमें अत्रदान, अप्रतिग्रहण, अविचार, अचोच, राग, द्वेष, माह हान्य, भय, प्रद्वेष, प्रमात्, प्रेम विषया का अतिगृही, लज्जा गारय, आलस्य अविबक कर्मभार, कर्मप्रदेशो का बाहुन्य, कमशक्ति का बाहुन्य, कर्माकी दुरगिरिता, कर्माकी अत्यन्त तीव्रता, ताना गारवा की छत्कटता, अल्पश्रतता, पागम-

धिक् क्षा का अभाव इन सब उक्त कारणों से पूरु टुश्रिगि
 की गुरुमाक्षा पूरुव गहा करता ह आर प्रतिक्रमण द्वारा निरा
 करण करता ह, प्रत्युत्पन्न टुश्रिगि' ना भी प्रतिक्रमण द्वारा
 निराकरण करता हूँ। तथा आगामी अन्यस्म टुश्रिगिका प्रत्या
 ख्यान द्वारा निराकरण करता हूँ। अनालाचिन का आलाचना
 करना ह। अनिन्ति की निन्दा करता हूँ। अगहित की गहा
 करता हूँ। अप्रतिक्रात का प्रतिक्रमण करता ह। रत्नत्रय के
 विषयम मन, वचन, वाय कृत मार्ग्य विरति रूप विराधना 'सो
 त्यागता ह। रत्नत्रय के विषयम निरव्य भव वचन वाय की
 वृत्ति रूप आराधन का अनुष्ठा करता ह। अज्ञान का त्याग
 करता ह। सम्यग्ज्ञान का अनुष्ठा करता ह। उन्शान सो
 त्यागता ह। मि त्या चारित्र का व्युत्सन्न करता ह। सम्यग्चा
 रित्र का अनुपालन करता हूँ। कुतप का त्याग करता ह। सुतप
 का अनुष्ठा करता हूँ। अकरणीय का त्याग करता हूँ। करणाय
 का अनुष्ठा करता हूँ। अमरण (अनुष्ठान) का त्याग करता हूँ।
 करण (मानुष्ठान) का अनुष्ठा करता हूँ।
 प्राण-व्यपरोषण का त्याग करता हूँ। अभयान का अनु
 ष्ठा करता ह। मृषा (अमत्य) का त्याग करता हूँ। मत्य का
 अनुष्ठा करता हूँ। अदत्त का त्याग करता ह। मत्य का
 योग्य वत्त का अनुष्ठान करता हूँ। अत्रल का त्याग करता ह।
 ब्रह्मचय का अनुष्ठान करता ह। परिग्रह का त्याग करता ह।
 अपरिग्रह का अनुष्ठा करता हूँ। रात्रि भावन का त्याग करता
 हूँ। यथाकाल प्राप्त, प्रासुफ, दिवाभाजन एव भुक्त का अनुष्ठान
 करता हूँ। चारा आर्त और रौद्र ध्याता का त्याग करता ह।
 चारों वम ध्याता और चारा शुक्लध्यानों का अनुष्ठान करता
 हूँ। कृष्ण, नील और कापोत ध्याता का अनुष्ठान करता ह।
 त्याग करता हूँ। पीत, पद्म और शुक्ल इन तीनों शुभ लेश्याधारा
 का त्याग करता हूँ। आरभ का त्याग करता ह। अनारभका

अनुष्ठान करता हूँ । असयम का त्याग करता हूँ । सयमरा अनुष्ठान करता हूँ । मप्रथका त्याग करता हूँ । विप्रथका अनुष्ठान करता हूँ । चेल (धरत्र) का त्याग करता हूँ । अचेलरा अनुष्ठान करता हूँ । अलाच का त्याग करता हूँ । लोचका अनुष्ठान करता हूँ । स्नान का त्याग करता हूँ । अस्नान का अनुष्ठान करता हूँ । अनिनिशयन का त्याग करता हूँ । त्तिनिशयनका अनुष्ठान करता हूँ । दन्तत्रनका त्याग करता हूँ । अन्तत्रका अनुष्ठान करता हूँ । अस्थिति भोजनका त्याग करता हूँ । एव्यार स्थिति भोजनका अनुष्ठान करता हूँ । पात्रम भाना करन का त्याग करता हूँ । पाणिपात्र म भानन करनेका अनुष्ठान करता हूँ । मोघका त्याग करता हूँ । जमा धारण करता हूँ । माता त्याग करता हूँ । मात्व धारण करता हूँ । माया का त्याग करता हूँ, आर्नव धारण करता हूँ । लाभका त्याग करता हूँ, शौच मन्तोष धारण करता हूँ, कुतप का त्याग करता हूँ । सुतप का अनुष्ठान करता हूँ । मिथ्यात्व का त्याग करता हूँ । मम्यक्त्व र्गिकार करता हूँ । कुशील का त्याग करता हूँ । मुशाल का पालन करता हूँ । जल्याका परित्रन करता हूँ । नि शन्य का अपाता हूँ । अविन्य का परित्रन करता हूँ । विनय का पान करता हूँ । अनाचार का परित्रन करता हूँ । आचार का पालन करता हूँ । उमार्ग का परित्रन करता हूँ । समाग का स्वीकार करता हूँ । अशान्ति का परित्रन करता हूँ । शान्ति धारण करता हूँ । अगुप्ति का परित्रन करता हूँ । गुप्ति का स्वागत करता हूँ । अमुक्ति का परित्रन करता हूँ । मुक्ति का स्वागत करता हूँ । जममाधिना त्याग करता हूँ । सुममाधि धारण करता हूँ । ममत्त्र का त्यागता हूँ । निममत्त्व धारण करता हूँ । अभावित चित्तकी भावना नहा का, एम सम्यग्शान्ति की भावना करता हूँ । चित्त मि ज्यान्शानादिक की भावना भाता रहा हूँ उन्का भावना का त्याग करता हूँ । यह वक्ष्यमाण विशेषण से विशिष्ट

धिज्ञान का अभाव इन सब उक्त कारणों से पत्र टूटने की गुरुमाहा पूजक गद्दा करता है और प्रतिक्रमण द्वारा निराकरण करता है, प्रत्युत्पन्न दरचरित्र या भी प्रतिक्रमण द्वारा निराकरण करता है। तथा आगामी अत्यन्त दुश्चरित्रका प्रत्याख्यान द्वारा निराकरण करता है। अनालाचिन की आलाचना करता है। अनिन्दित की निन्दा करता है। अगदित की गद्दा करता है। अप्रतिष्ठात का प्रतिक्रमण करता है। २-त्रय के विषयम मन, वचन, काय कृत मार्ग विरति रूप विराधना से त्यागता है। स्त्राय के विषयम निरव्यय भाषण काय की वृत्ति रूप आराधन का अनुष्ठान करता है। अज्ञान का त्याग करता है। सम्यग्ज्ञान का अनुष्ठान करता है। कुदशन का त्यागता है। मिथ्या चाग्रि का व्यत्सर्जन करता है। सम्यग्चाग्रि का अनुपालन करता है। मृतप का त्याग करता है। मृतप का अनुष्ठान करता है। अकरणीय का त्याग करता है। करणीय का अनुष्ठान करता है। अस्मरण (अनुष्ठान) का त्याग करता है। करण (सानुष्ठान) का अनुष्ठान करता है।

प्राण-व्यपगोपण का त्याग करता है। अभयज्ञान का अनुष्ठान करता है। मृपा (अमत्य) का त्याग करता है। मन्य का अनुष्ठान करता है। अदत्त का प्राप्ति का त्याग करता है। योग्य वृत्त का अनुष्ठान करता है। अन्न का त्याग करता है। अन्नचय का अनुष्ठान करता है। परिमह का त्याग करता है। परिमह का अनुष्ठान करता है। रात्रि भावन का त्याग करता है। यथाशाल प्राप्त, प्रामुख, विद्याभोजन पर भुक्त का अनुष्ठान करता है। चारा आत और गौड ध्याना का त्याग करता है। चारों यम ध्याना और चारा शुक्लध्यानों का अनुष्ठान करता है। कृष्ण नाल और वापोत न तात अशुभ लभ्यार्था का त्याग करता है। पीत पद्म और शुक्ल इन तीनों शुभ लेश्याआता करता है। आरभ का त्याग करता है। अनाश्रय

अनुष्ठान करता हूँ । असयम का त्याग करता हूँ । मयमसा अनुष्ठान करता हूँ । संप्रथम का त्याग करता हूँ । निर्प्रथम का अनुष्ठान करता हूँ । चल (धरत) का त्याग करता हूँ । अचल का अनुष्ठान करता हूँ । अलाप का त्याग करता हूँ । लोचन अनुष्ठान करता हूँ । स्नान का त्याग करता हूँ । अस्नान का अनुष्ठान करता हूँ । अक्षिशयन का त्याग करता हूँ । क्षितिशयन का अनुष्ठान करता हूँ । अन्तवन का त्याग करता हूँ । अन्तवत् का अनुष्ठान करता हूँ । अस्थिति भोजन का त्याग करता हूँ । अस्थिर स्थिति भोजन का अनुष्ठान करता हूँ । पात्रमें भोजन करने का त्याग करता हूँ । पाणिपात्र में भोजन करने का अनुष्ठान करता हूँ । प्राय का त्याग करता हूँ । क्षमा धारण करता हूँ । मान का त्याग करता हूँ । मान्य धारण करता हूँ । माया का त्याग करता हूँ । आर्ष धारण करता हूँ । लाभ का त्याग करता हूँ । शौच मन्ताप धारण करता हूँ । कुतप का त्याग करता हूँ । मुतप का अनुष्ठान करता हूँ । मिथ्यात्व का त्याग करता हूँ । मम्यत्त्व स्मरण करता हूँ । कुशील का त्याग करता हूँ । मशाल का पालन करता हूँ । जन्म का परिवर्तन करता हूँ । निश्चल का अपगतता हूँ । अविनय का परिवर्तन करता हूँ । विनय का पालन करता हूँ । अनाचार का परिवर्तन करता हूँ । आचार का पालन करता हूँ । अभाग का परिवर्तन करता हूँ । सभाग का स्वीकार करता हूँ । अशक्ति का परिवर्तन करता हूँ । शक्ति धारण करता हूँ । अगुण्टि का परिवर्तन करता हूँ । गुण्टि का स्वागत करता हूँ । अमुक्ति का परिवर्तन करता हूँ । मुक्ति का स्वागत करता हूँ । जममाधि का त्याग करता हूँ । मुममाधि धारण करता हूँ । ममत्त्व का त्यागना हूँ । निममत्त्व धारण करता हूँ । अभावित विनाशी भावना नष्ट का, एव सम्यग्दर्शनादिक की भावना करना हूँ । चित्त मिथ्यादर्शनादिक की भावना भाता हूँ । यह धर्यमाण

निर्मथ लिंग प्रमनन अर्थात् दीक्षामहण रूप है अथवा आगम म मातृ का मार्गचर रूपमे प्रतिपान्ति है अर्थात् आगमम यह कहा गया है कि यह निर्मथ लिंग मातृ प्राप्ति का उपाय है । इस निर्मथ लिंग म उत्कृष्ट अन्य वाड लिंग नहीं है, अत अतु त्तर है । केवली द्वारा प्रणत है या कपला से सम्बन्ध रखता है । परिपूर्ण है, क्योंकि अयोग कपलीम यह निःशेष समाप्त क्षयका नेतु होत से सम्पूर्ण है । परिपूर्ण रत्नत्रयनिर्माय म उत्पन्न हुआ है इस लिंग नैकायिक है । परम ज्ञानीनता या मत्रसावद्य व्याप्ति रूप है । निरतिचार है अथवा आलोचनादि प्रायश्चित्तों स विशुद्ध अत मशुद्ध है, शल्पत्रय स पीडित जीवाक उन शल्यो का नाशक है । पूर्वोक्त सिद्धिका भाग है । पूर्वोक्त श्रेणियोंका भाग है, उत्तम क्षमा का कारण है । मुक्ति अर्थात् मयसग के परित्याग का कारण है । अहन्तावस्था रूप मातृ और मिद्वारस्था रूप प्रमातृ का उपाय है । ममार मे निवृत्तन का मार्ग है । निर्माण अर्थात् संसारापरम या परमदुःख का मार्ग है । मत्र दुःखी परिहाति का मार्ग है । सुचरित्त धारक पुरुषा के परिनिवाण का मार्ग है । जिस निर्मथ लिंग म सिद्ध मुक्ति के चाहन वाले पाव स्वात्मापलभ और लब्धि आदि श्रद्धिया ने प्राप्त करत हैं । ज्ञानादि तत्त्वा का स्वरूप यथावत् जानते हैं सब पर्याप्त विमुक्त हात हैं, सुखी अथवा क्लृप्त्य हात हैं, सब दुःखोंका अन्त करत हैं, पूर्वोक्त विशेषण मे विशिष्ट उम निर्मथ लिंगका मे श्रद्धा करता है, जानता हूँ, चिन्तित करता हूँ और अनुष्ठान करता हूँ । इस उक्त प्रकार निर्मथ लिंग से उत्कृष्ट मोक्षका साधन अन्य लिंग वतमान कालमे नहीं है अर्थात् काल मे भी इस से उत्कृष्ट फल नहा हुआ है । समापवर्ती वर्तमान कालमे भी नहीं है और आगे अनन्त कालमे भी नहा होगा ।

तात्पर्य है किसी कालमे किसी भी गुणविशेषका लेकर अन्यलिंग निर्मथ लिंग से उत्कृष्ट नहा है । उसी गुण विशेष को दिखाने

हुए फल हैं—ज्ञान, शक्ति, चाग्नि सूत्र, आगम अठारह हजार शक्ति, योगी लाय गुण तब नियम प्रत विहार आनन्द आनन्द लाय ये मय गुण मता विषय विगम ममता हैं। इसलिये इनम और एक प्रकार म अथ किसी प्रकार से इस निर्मय विग से उद्वृत्त अथ विग - हो है न पटो हुआ है और न प्राग हागा। इस प्रकार-याव निर्मय विग न स्थित हुआ से अमरु तपस्यो हाता ह प्राणियम और इन्द्रियमय ने तपस्य मया हाता ह विरयो म उपरत हाता ह। धिमी भी विषयम रागद्वेषमे रति उपशान्त हाता ह। उपरि निवृत्ति माया और मृगया - प्र करता हुआ मिथ्याज्ञान मिथ्यादशा और मिथ्याचाग्निम विरत हाता ह। सम्भ्रमा, मन्त्रज्ञान और मन्त्रचाग्नि ने रति परता ह। विममे महान मोक्ष लक्षण अथ प्राप्त हाता है विमम महान प्रज्ञा ज्ञानादिगुण होत हैं विमम महान दुर्गति म गम तथा अभाव हाता ह य मसार का उद्वृत्त हाता है। ना नुवन म पूजा का रूप यज्ञ भाग माहात्म्य भयंकर हाता है ना महान महापुरुष तपस्वर आदि द्वारा अतुष्टित हैं, म प्रसार प्रथम महाप्रकाराण क हात पर जो कि भीस्वर तथा द्वारा प्रतिपादित हैं मया य प्राणानि पालम विरमण रूप महाप्रत म अद्वैत की मासा म मिदवा मासी म मापुआकी मासीम, आम मासी मे पर-सा म और मय यथाओं की मासीमे सुप्रत अथह प्रत हाये तथा निम्नारक पाक तारक और आगार हाय।

पहला महानत मय प्रतगरी प्राणिया म मन्त्ररचपूरुत्तम प्रतरूप हृद, अथह प्रत रूप समारूढ तुमम मरे म हाय। म प्रसार के प्रथम महाप्रकार आरापण करन पर मय अनिसारों की विवृत्ति विग तैवमिष, चाग्नि पालिष पातुनाम पा और मायस्मरिष इस प्रकार फालके नियमम तो याद अतिगार हुआ है म मय का विगुदपय तथा श्योषय, कशलाय, मार्ग इत्यादि

द्रव्यो वे सम्प्रधम णिम से जा वा' अतिवाग् हुथा है उस मन्
की प्रियुदयथ प्रतिब्रमण करता ।

आधावर तदिये महव्वदे मव्य भने । अदत्तादाण
पच्चक्खामि जावज्जीव तिविहृग मणमा वविया
काएण से दसे वा गामे वा गगर वा खड्ड वा वव्वडे वा
मडवे वा मडले वा पट्टण वा दाणमुहे वा घोसे वा आसणे
वा महाए वा सवाह वा मण्णिवसे वा त्तिण वा वट्ठ वा
वियडि वा मणि वा नेत्ते वा गले वा जले वा थले वा
पहे वा उप्पह वा रण्ण वा अरण्ण वा एट्ठ वा पमुट्ठ
वा पडिद वा अपडिद वा सुण्हिद वा दुण्हिद वा
अप्प वा बहू वा अणुय वा यूल वा सच्चित्त वा अवित्त
वा मज्झज्ज वा वहित्त्य वा अवि दत्ततरसोहणमित्त
पि एव सय अदत्त गेण्हिज्जा गणे अण्णेहि अदत्त
गेण्हानिज्ज अण्णेहि अदत्त गण्हिज्जत पि गण समणुम-
णिज्ज, तस्स भत । अइचार पडिक्कमामि णिदामि
गरहामि अप्पाण वास्सरामि पुट्ठिवचणुभत्ते । ज पि मए
रागस्स वा दोसस्स वा मोहस्स वा वसगदण सय अदत्त
गेण्हिद अण्णेहि अदत्त गण्हविद अण्णहि अदत्त गेण्ण-
ज्जत पि समणुमण्णदो त पि इमस्स गिग्गथस्स
नवयगस्म अणत्तरस्स वेवलिपस्स वेवलिपण्णत्तस्स
अम्मस्म अहिंसालक्खणस्स सच्चाहिट्ठियम्स विगयमू-
त्तस्स समावलस्स अठ्ठारम सीलसहस्सपरिमडियस्स

चउरासीदिगुणसयसहस्रावहूसियसम गवमुप्रभचेरगुत्तस्स
 गियदिलववगस्स परिचागफलम्म उवममपहाणस्स
 खतिमग्गदासयस्स मुत्तिमग्गपयामयम्म मिट्ठिमग्गप-
 ञ्जवसाहग्गस्स सम्मणाण सम्मदसण- सम्मचरित्त च
 रोचेमि, ज जिणवरहि पण्णात्तो इत्थ जा मए देवसिय
 राइयपक्खिय चउमासिय सबच्छरियट्टरियावहिइसला-
 चाइचारस्स सथागादिचारस्स पथादिचारस्स सव्वाइचा-
 रस्स उत्तमट्टस्स सम्मचरित्त रोचेमि । तदिण महव्वदे
 अट्ठादाणा दो वेरमण उवट्टा गमडले महत्थे महागुणे
 महाणुभावे महाजसे महापुरिसाणाचण्णे अरहत-
 सक्खिय सिद्धसक्खिय साहुमक्खिय अप्पमक्खिय
 परमक्खिय देवतासक्खिय उत्तमट्टम्हि इद मे महत्तद
 सुव्वद दढव्वदं हाट्टु, गित्थारय पाग्ग्य ताग्ग्य अराहिय
 चावि ते मे भवन्तु ॥ ३ ॥

तृतीय महाव्रत सर्वेषां व्रतधारिणा सम्यक्त्वपूर्वकं
 दृढव्रतं सुव्रतं समाहृतं ते मे भवन्तु ॥ ३ ॥

गमो अग्रहताण एमो मिट्ठाण गमो आइरियाण ।

गमो उवज्झायाण गमो लोण सव्वसाहूण ॥ ३ ॥

हे भगवन् ! द्वितीय सत्य मन्त्रान्त क अन्तर जन्मे अपर
 तृतीय अचौर्य महाव्रत म स्थूल और सूक्ष्म अन्तर्गतान्तना चीजन
 पयत्त त्रिविध म, वच और कायम प्रत्याख्यान (न्याग) करता
 हू । अन्तर्गतान्त से विरति स्वरूप म तृतीय महाव्रत की प्रति
 की पारितामे सन्निहित—ग्राम, नगर, गण, कुवट, मटप, मडल,

पट्टन, द्राणमुख, घोष, आसन, सभा, सत्राह और मन्त्रिपेश-
 इन जापदसमूह के आश्रयभूत प्रदर्शों में तथा ग्रेत, खलियान,
 जल, मार्ग, उमाग और अरण्य इन स्थानोंमें नष्ट, प्रमुष्ट,
 पतित, अपतित सुनिश्चित, दुर्निश्चित, अप, बहु, सूक्ष्म, स्थूल,
 सचित्त, अचित्त, घर में स्थित, घरमें बाहर स्थित और अन्तान्तर
 शासनमात्र भी तृण, काष्ठ, विट्ति, मणि आदि अल्पमूल्य और
 बहुमूल्यवान् अन्त वस्तु ता स्वयं ग्रहण करे, न अन्यसे ग्रहण
 कराव और न स्वयं अन्त ग्रहण करत हुए अन्त की अनुमोदना
 करे । हे भगवन् ! इस तृतीय महाप्रत के अतिचार का त्यागता
 हू । अपनी निन्दा करता हू, गडा करता हू, और पृथ्वी म
 उपाहित अतिचार का उत्सर्जन करता हू । हे भगवन् ! जा मा
 र्जन रागने डोपने और माहक वशीभूत हानर स्वयं अदत्त वस्तु
 ग्रहण की है अन्यसे अन्त वस्तु ग्रहण कराइ है और अन्य मे
 अदत्त वस्तु ग्रहण करते हुए व अनुमोदना की है उसका भी
 त्याग करता हू । ना निन्दा है, प्रवृत्ता या प्रवचन म प्रतिपा
 दित है, अनुत्तर है, केरली सम्प्रदाय है, केरली प्रणीत है, अहिंसा
 लक्षण वाला है मन्यसे अधिष्ठित है, विनयका मूत है, क्षमा
 बल वाला है, अठारह हजार शील क भेदा से परिमण्डित है,
 चौगमा लाखगुणा से विभूषित है, नव सुमद्रचय से रक्षित है,
 निर्यात यानी विषयाके त्याग मे लक्षित है परित्याग का फल है
 उपशम प्रदान है चार्तिरे माग का उपदेश है मुक्तिरे मार्ग
 का प्रकाशन है सिद्धि मार्गना प्राप्ति का साधन है, तेने इस
 नियन्त्रण वसवा जाय, मोन, माया लाभ—

(शप इमस आगे पटल का तरह है)

जावावर चउरथे महव्रदे सब्ब भते । अवम
 पच्चवग्गामि जावउनीव तिविहरण मणसा वचिया
 ५८ देविएसु वा मणुसिएसु तिरिच्छिएसु वा

अचेयणिएसु वा कटुकम्भेसु वा चित्तकम्भेसु वा पोत्त-
 कम्भेसु वा लेप्पकम्भेसु वा लयकम्भेसु वा मित्ता-
 कम्भेसु वा गिहकम्भेसु वा भित्तिकम्भेसु वा भेदकम्भेसु
 वा मडकम्भेसु वा धादुकम्भेसु वा दतकम्भेसु वा
 हत्थसघट्टणदाए पादसघट्टणदाए पुग्गलसघट्टणदाए
 मणुणामणुणेसु सद्देषु मणुणामणुणेसु रुवेसु मणु-
 णामणुणेसु गधेसु मणुणामणुणेसु रसेसु मणुणा-
 णुणेसु फासेसु सादिदियपरिणामे चक्खिदियपरिणामे
 घाणिदियपरिणामे जिब्भिदियपरिणामे फासिदिय-
 परिणामे णोइ दियपरिणामे अमुत्तेण अमुत्तिदिएण
 णेव सयं अबभ सेविज्ज णो अण्णेहि अबभ
 मेवाविज्ज णो अण्णेहि अबभ सेविज्जत
 पि समणुमण्णिज्ज तम्म भने ! अइचार पडिक्कमामि
 णिदामि गरहामि अप्पाण, वोस्सरामि पुब्बिच्चण मत !
 जपि मए रागस्स वा दोमस्स वा वसगदेण सय अबभ
 सेविय अण्णेहि अबभ सेवाविय अण्णेहि अबभ
 सेविज्जत पि समणुमण्णिद त पि इमस्स णिग्गयस्स
 पवयणस्स अणुत्तरस्स वेवलिपण्णात्तस्स घम्मस्स
 अहिंसालवत्तणस्स सच्चार्गिट्ठियस्स विणयमूलस्स
 खमावलस्स अट्टारमसीलसहस्मपरिमडियस्स चउरासी-
 दिगुणसयसहस्सविहूसियस्स एवसुवभच्चेरुत्तस्म
 १५दि परिचागफलस्स

सतिमग्देसयःस मुत्तिमग्पयासयस्म सिद्धिमग्गज-
 वसाहणस्स । सम्मणाग सम्मदमण-सम्मचरित्त
 च रोचेमि, ज जिणवरेहि पणत्तो इत्थ जो मए
 देवसिए-राइय पविम्ब चउमामिय सबच्चरिय इरिया-
 वहिजेसलोचाइचारस्स सथारादिचारस्स पथादिचारस्स
 सव्वादिचारस्स उत्तमट्टस्स सम्मचरित्त च रोचेमि ।
 चउत्ये महव्वदे अवभादो वैरमण उवट्टावणमडले
 महत्थे । महागुण महाणुभावे महाजम महापुरिसाणु-
 चिण्ण अरहतमक्खिय सिद्धसक्खिय साट्टसक्खिय
 अप्पसक्खिय परसक्खिय देवतासक्खिय उत्तमट्टम्हि
 इद मे महव्वद सुव्वद दिढव्वद होट्टु णिच्चारय पारय
 तारय आरहिय चावि ते मे भवतु ॥ ३ ॥

चतुर्थं महाव्रत सर्वेषां प्रतधारिणा सम्यक्त्वपूर्वकं
 दृढव्रत मुग्रत समारूढं ते मे भवतु ॥ ३ ॥

एगो अरहताण एगो सिद्धाण एगो आइरियाण ।
 एगो उरज्झायाण गगो लोए सव्वसाहूण ॥ ३ ॥

हे भगवन् ! कृताय महाव्रतक अनन्तर बोधे मन्त्रतम
 संघ चेतन और अचता अमल (कुर्णिल) या प्रत्याग्या परता
 ४ । उम चतुर्थ महाव्रत के विनाश क वाग्ण देवा, मानुषी और
 तिरश्चा न्न चेतन स्त्रियो के अग उपागाम तथा वाष्ट निर्मित,
 उम्त्र निर्मित, लेप अर्था (पुत्तलिषान्ति) मृत्तिका निर्मित लयन
 पम भित्तिपर निर्मित, केंची आन्ति से वस्त्र आन्तिको कतर कर
 गजदन्त पर उक्तेर कर निर्मित देवी आदि क अचेतन

रूपान्त्रि स हाया वा सपपण, पैरना मघर्षण शरीर के अन्य अयया वा सपपण हान पर श्रोत्र इन्द्रिय के त्रिपय मनोह और अमनाह र्ना आन्त्रि रूपाम श्रोत्र इन्द्रिय सम्बन्धी विवृत परिणाम चतुन्द्रिय के त्रिपय मनोह अमनाह र्ना क रूपा म चतुन्द्रिय सम्बन्धी विवृत परिणाम नामिरा इन्द्रियका विपय मनाह अमनाह स्त्रिया क गध म नामिका इन्द्रिय सम्बन्धी विवृत परिणाम रमना इन्द्रिय क विपय समीय अमनीय स्त्रियों क वदन र्नान्त्रि में निष्ठा इन्द्रिय सम्बन्धा विवृत परिणाम, स्पर्शन इन्द्रिय क त्रिपय मनाह अमनाह र्ना स्त्रियों के स्पर्श म स्पर्शन इन्द्रिय सम्बन्धा विवृत परिणाम और अनियन विपय ना इन्द्रिय सम्बन्धी विवृत परिणाम हानपर न स्वय अत्रह मेवन कर, न अन्यम अत्रह मेवन कराव और न अन्य द्वारा स्वय अत्रह मेवन करते हुए की अनुमाना कर ।

हे भगवन ! म चतुर महाव्रत क अतिचार का निराकरण करना । निष्ठा करता हू । और अपना गद्दा करता हू । पुरा तन (भूत कालीन) अतिचार का ध्युत्मानन करता हू । हे भगवन ! जा भा मैं न राग द्वेष और मोहक वशीभूत हा कर स्वय अत्रह मेवन लिया हू अच से अत्रह मयन कराया है अन्य स अत्रह सयन करत हुए की अनुमाना का ह । मना भी त्यागता ह ।

७५ विशपणोंम निशिष्ट निग्रथ धर्मका बोध आन्त्रि—
(आगना शव त्रिपय पहलव समान है ।)

आधावर पचम महव्वदे सव्वदे सव्व भते । दुविह परिग्गह पच्चक्खामि तिविहेण भगसा वचिया काएण । मो परिग्गहो दुविहो अ भितरो वाहिरो वेदि । तत्थ अविभतर परिग्गह—“मिच्छत्तवेयराया तह्व हस्तादिया

य छद्दासा । चत्तारि तह कसाया चउदस अद्भतर
 गंधा ॥ १ ॥" तत्थ वाहिर परिग्गह, से हिरण्ण वा
 सुवण्ण वा धण वा खेत्त वा खल वा वत्थु वा पवत्थु वा
 कोस वा कुठार वा पुर वा अतउरं वा वल वा वाहण
 वा सयड वा जाण वा जनाण वा जुग वा गद्दिय वा रह
 वा सदन वा सिविय वा दासोदासगोमहिंसगवेडय मणि-
 मोत्तियसग्गसिप्पिपवालय मणिभाजण वा सुवण्णभाजण
 वा रजतभाजण वा कसभाजण वा लोहभाजण वा
 तवभाजण वा अडज वा वाडज रोमज वक्कज वा
 वम्मज वा अप्प वा बहु वा अणु वा थूल वा मच्चिन्त वा
 अच्चिन्त वा अमुत्थ वा वद्धित्थ वा अवि वालग्गकोट्टिमिच्चिपि
 एव सय असमणपाउग्ग परिग्गह गिण्हिज्जणा अण्णेहि
 जसमणपाउग्ग परिग्गह गेण्हाविज्ज णो अण्णेहि
 असमणपाउग्ग परिग्गह गिण्हिज्जतपि समणुमणिज्ज
 तस्स भते । अड्चार षडिक्कमामि णिदामि गरहामि
 अप्पाण, वोस्मरामि पुब्बिचण भते । ज पि मए
 रागस्स वा दोसस्स वा मोहस्स वा वसगदेण सयं
 असमणपाउग्ग परिग्गह गिण्हिज्ज, अण्णेहि
 असमणपाउग्ग परिग्गह गेण्हाविय, अण्णेहि
 असमणपाउग्ग परिग्गह गेण्हिज्जत पि समणुमणिज्जद

७ पि इमस्स गिग्गधस्स पवयणस्स अणुत्तरस्स देवलि-

यति प्रतिमन्त्र

यस्त वैलिपण्यस्तस्य धम्मस्त अहिमालवण्य
सच्चाहिद्वियस्त विगयमूलस्त खमावलस्त अट्टार
गीलसहस्तपरिमट्टियस्त चउरासीगुणसयसहस्तवि
सियस्त एवसुप्रभचेरगुणस्त गियदिलवस्तगस्त
परिचागफलस्त उवसमपहाणस्त सतिमग्गदेसयस्त
मुत्तिमग्गपयामयस्त सिद्धिमग्गपज्जवसाहणस्त
मम्मणाण-सम्मदसरासम्मचरित्त च रोचेमि, ज

जिगावरहि पण्यतो इत्य जा मए देवसिय राड्य-
पविगय-चउमासिय सवच्छगिय टगियावहियेसलाचाद-
चारस्त सथागदचारस्त पथादचारस्त सवरादचारस्त
उत्तामट्टस्त मम्मचरित्त राचमि । पचम महव्वद परि-
गहादो वेरमण उवट्टावगमट्टल महत्थे महागुण महा-
गुभाव महापुरिसाणुचिण्ण अरहतसविराय सिद्ध-
मविगय माट्टसक्खिय अप्पमक्खिय परसविगय
देवतामक्खिय उत्तामट्टम्हि उद म महव्वद नुव्वद
दिट्टव्वद होदु, गित्थारय पारय तारय आराहिय चात्ति

ते म भवतु ॥ ३ ॥

पचम महाप्रत मव्वेपा व्रतधारिणा
व्रत ममान्ठ त मे भवतु ॥ ३ ॥

एमो अरहताण

एमो

एमा
लोए ५८

चतुर्थ महाग्रन्थे अन्तर अन्य पंचम महाग्रन्थ म हे भगवन् ।
 सब द्विविध परिग्रह का त्रिविध मन, यचन और कायमे प्रत्या-
 ख्यान (त्याग) परता ह । यह परिग्रह ले प्रवार का आभ्य-
 न्तर और बाह्य । उनमें मिथ्यात्व तीन वेदराग, छह हास्यान्विक
 दोष, ओर चार कषाय ये चोह आभ्यन्तर परिग्रह हैं । तथा
 द्विविध परिग्रह म ये बाह्य परिग्रह हैं द्विरण्य सुवर्ण गवादि धन,
 ग्राही आदि वान्य मंस्य का उत्पत्ति स्नान क्षत्र, खलियान वास्तु
 प्रवास्तु कोश (भाडागार) कुठार, पुर अत पुर, हस्ती अश्व,
 रथ, पदाति यह चतुरंग सेन्य बल हस्ती अश्व आदि वाहन,
 शकट (रेलगाड़ी) यात्र (पालकी) मुग्ध, जपा ~~...~~ रथ,

आधावरे हृद्दे इणुव्वदे सव भते । राईभोयण
 पच्चवग्गामि जावज्जीव निविहण मणसा वचिया
 काएण, से असण वा पाण वा खादिय वा मादिय
 वा कड्डय वा वसाय वा आमिने वा सहुर वा लवण वा
 अत्तवण वा सच्चि वा अचित्त वा त मन्ना चउत्तवह
 आहार णेव सय रत्ति भुजिज्ज गो अण्णाहिं रत्ति भुजा-
 विज्ज एण अण्णाहि रत्ति भुजिज्जत पि समणुमणिज्ज,
 तस्म भते । अदचार पडिक्कमामि णि, दामि गग्गामि
 शप्पाण, वाससरामि पुंविचण भते । ज पि मण
 रागस्स वा दामस्स वा मोहस्स वा वसगदेण चउत्तवहो
 आहारो मय रत्ति भुत्तो अण्णेहिं रत्ति भुजाविदो
 अण्णेहिं रत्ति भुजिज्जतो वि समणुमणिदा, त पि इमस्स
 णि गग्गस्स पवयणस्स अणुत्तरस्स वेवलियस्स केवनि,
 पण्णत्तस्स धम्मस्स अहिमालवण म मच्चाहिठिठयस्स
 विण्णयमूत्रस्स खमावलस्स अट्टारमसीलसहम्मपरिमडि-
 यस्स चउरासीदिगुणसयसहम्मनिहमियस्स गावसुव-
 भचेरगुणस्स शियदित्तपण्णस्स परिचागफलस्स
 उपसमपहाणस्स खतिमग्गदेमयस्स मुत्तिमग्गपयाभयस्स
 मिद्धमग्गपज्जवमाहणस्स सम्मणाय मम्मदसण-

सम्मचरिच च रोचेमि ज जिणवरेहिं य

जो मए देवासिग्गइय पविसय-च-मा

डरियावदि यारस्स सवारा

दिचारम्म सव्वाइवारस्स उरामट्टस्स सम्मचरित्ता च
 रोचेमि, छट्ठे अणुव्वदे राईभोयणादो वेरमण उवट्ठा-
 वणमडले महत्थे महागुणे महाणुभावे महाजसे महा-
 पुरिसाणुचिण्ण अरहतमक्खिय साहुसक्खिय पर-
 सक्खिय देवतासक्खिय उत्तमट्टम्हि इद मे अणुव्वद
 सुव्वद दिढव्वद होदु णित्थारय पारय तारय आरा-
 हिय चावि ते मे भवतु ॥ ३ ॥

पण्ड अणुव्वद सर्वेषा व्रतधारिणा सम्पक्त्व-
 पूर्वकं दृढव्रतं समाकूढं ते मे भवतु ॥ ३ ॥

णमो अग्रहताण णमो सिद्धाण णमो आइरीयाण ।

णमो उवज्जभायाण णमो लोए सव्व साहूण ॥३॥

छठ अणुव्रतमें हे भगवन् ! सब रात्रिभोजन का त्रिप्रिध मन
 वचन काय म प्रत्याग्यान करता ह । उस रात्रिभोजन त्रिमण
 नामर छठे अणुव्रत की चतिर कारण अशन, पान त्याग,
 स्वाद्य, कटुत्र कषाय आमिल मधुर, लरण, अलरण, सचित्त
 और अचित्त इस सम्पूण उरुविध आहार का मैं
 नदा खाऊ गा न अचना रात्रिम त्रिलान
 में खाते हुए का भा अनुमादन करुगा

हे भगवन् ! रात्रिभाजन त्याग

धारका प्रतिश्रमण करता ह

करता ह । जो भी मैंने ।।

आहार रात्रिम स्वय त्याया

और अन्य स स्वय रात्रि म

। भी ११५१०।

चूलिका

चूलियतु पवकखामि भावणा पचविंसदी ।

पच पच अणुणादा एक्केक्कम्हि महव्वदे ॥ १ ॥

मणगुत्ता वचिगुत्तो इरिया-कायसयदो ।

एसणासमिदिसजुत्तो पढम वदमस्सिदो ॥ २ ॥

अकोहगो अलोहो य भयहस्सविवज्जिदो ।

अणुवीचिभासबुसलो विन्थिय वदमस्सिदो ॥ ३ ॥

अदेहण भावण चाचि उग्गह या परिग्गहे ।

सतुट्ठो भत्तपाणेषु तिदिय वदमस्सिदो ॥ ४ ॥

इत्थिवहा इत्थिससग्गहासखेढपलोयणे ।

ग्गियमम्मि ट्ठिदो गियतो य चउत्थ वदमस्सिदो

सचित्ताचित्तदब्बेषु वज्ज्जभतरेसु य ।

परिग्गहादो विरदो पचम वदमस्सिदो ॥ ३ ॥

धिदिमती समाजुत्तो भाणजागपरिट्ठिदो ।

परोसहाणठर देतो उत्तम वदमस्सिदो ॥ ७ ॥

जा सारो सव्वसारसु सो सारो एस गोयम ।

सार भाणपि णामेण सव्व बुद्धे हि देसिद ॥ ८ ॥

इच्चेदाणि पचमहव्वयाणि राईभोयणादो वेरम-
णउट्ठ्याणि मभावणाणि समाउग्गपदाणि सउत्तर-

पदाणि सम्म धम्म अणुपालइत्ता समणा भयवता
णिग्गयादोओण सिज्जकति वुज्जकति मुच्चति परि-

उचति

आणमत करेति परिविज्जाणति

उक्त और अनुक्त अर्थ का चिन्तन करना चुलिका है। उमरा अब कहता है। उममें पञ्चम भावना है। जा कि एक एक महाव्रत में पाच पाच स्वीकार का गड़ है ॥१॥

मनसे गुप्त, वचनसे गुप्त, गमन करते समय काय से प्राणिया की पीडा व परिहार में तत्पर तथा गपणा समितिसे मयुक्त हाता हू। अन्यत्र भावना वही गड़ है यहा उन भावनाओंमें महित व्यक्ति कहा गया है। जाकि अभिन्न होनेमें भावना ही है। ज्याकि भावनाओं से युक्त व्यक्ति के हा अहिमा व्रत निर्मल हाता है ॥२॥

क्रोधसे रहित, लोभसे रहित, भयसे वचन हास्य में वचन और आगमानुकूल बोलने में कुशल होउ। ये पाच सत्य महाव्रत की भावनाएँ हैं। इनसे युक्त के मयसहाव्रत निर्मल होता है ॥३॥

वृत्ताय अचोय व्रत को आश्रित से पाच भावनाओं में तत्पर होता हूँ। वे भावनाएँ ये हैं। अदहन अथवा कमजश जो मेंन देहका उपानन किया है, गड़ ही मेरे धन है, अथ परिग्रह नहीं है। ऐसी भावना भाता है। यहा प्रपोदराणि इत्यादि वाक्य सध का लोप होकर अनेहवन के स्थान में अनेह वन गया है। देहमें ही अशुचित्व अनित्यत्व आदि भावना है उमको भी भाता हूँ। परिग्रह में अग्रग्रह अर्थात् निरतिरी भावना भाता हूँ। भक्त, पान, आदि चतुर्विध आहार में म तुष्ट अयाग गृहि रहित होता हूँ। इन भावनाओं का भाने वाले व नीमरा महाव्रत निर्मल होता है ॥४॥

मैथुन से विरति लक्षण चतुर्थ ब्रह्मव्रत को म आश्रित हुआ है मैं स्त्री वया, स्त्रीसर्ग, स्त्रियोंके साथ हास्य विनोत् स्त्रिया के साथ व्रीडन, और उनके मुखानि अगोका गगभावमे अत्रलोवन इन सब ब्रह्मचर्यके विधातको में चू कि नियममें स्थित हूँ इमलिण निवृत्त होता हूँ। इन भावनाओंमें चतुर्थ व्रत निर्मल होना है ॥५॥

परिग्रह में विरति लक्षण पचम व्रताश्रित में, ऐसी पास नथा

वस्त्र आपरण आदि पाच द्रव्यमें ओर ज्ञानावरणादि आध्यन्तर
द्रव्यमें तथा गृह क्षेत्र प्रादि अथ सब परिमहमे विरत हाता हैं ।
एव प्रकार की पाच भावनाया का भावना ताल के परिमह त्रिरति
गत निर्मल टहरना है । (ये पाच व्रत प्रतिज्ञारूप हैं । क्वाकि
अभिर्मा ३ पूर्वक पियो हुआ निगम व्रत हाता है ऐसा कहा गया
है) ॥६॥

उत्तम व्रत (प्रतिज्ञा) आश्रित वही हाता है जा वृत्तिमान्, सानुष्ट
इम लाक ओर परलाकरी आनाज्ञा म रहित है, उत्तम क्षमा-युक्त
ह ध्यानयोग म मय आर से स्थित है ओर परीपहा का सहन
करता है ॥७॥

जगन्तपती सब वस्तुआ म सार व्रत हैं उनम सार ह गोतम ।
ध्यान है क्वाकि 'मार ध्यान इम नामम सब वुनों (सबज्ञा)
न ध्यानसे मार कहा है । इस प्रकार भावनाआ सहित,
अष्ट प्रवचनमातृकाआ सहित ओर उच्चर पदों सहित राजिभावन
म निगमण पष्ट य पाच महान हैं । जा मय्यरु धम हैं एतका
अनुपालन कर श्रमण निग्रंथत्वपन स सिद्ध स्वात्मापलब्धि की
प्राप्त हात हैं, हयोपालय विवेक मे सम्पन्न बुद्ध हाते हैं, मुक्त हाते
ह समारमे पार हात हैं मत्र दुखाका अत करने हैं और परि
निर्माण का प्राप्त हाते हैं ।

त जहा—

पाणादिवाद चहि मोमग च अदत्तमेहुणपरिग्गह च ।
वदाणि सम्म अणुपालइत्ता णिव्वाणमग्ग विरदा उव्वेति
जाणि काणि वि सल्लाणि गरहिदाणि जिणसासणे ।
ताणि सब्बाणि वोसरित्ता णिसल्लो विहरदे सया मुणी ॥

उत्पण्णाणुत्पण्णा माया अणुपुब्ब सो णिहतव्वा ।

पडिक्कमण

॥३॥

अवभुट्टिदुकरणादाए अवभुट्टिदुक्कडगिराकरणादाए ।
 भव भावपडिक्कमण सेसा पुण दव्वदो भणिदा ॥४॥
 एसो पडिक्कमणविही पण्णत्तो जिणवरेहिं सव्वेहिं ।
 सजमतवदिदाए णिग्गथाए महरिसीए ॥ ५ ॥
 अवल्लरपयत्थीण मत्ताहीए च ज भवे एत्थ ।
 त खमउ णाणदेवय । देउ समाहिं च वोहिं च ॥६॥
 काळए णमाक्कार अरहताए तहेव सिद्धाए ।
 आइरिय-उवज्झायाए लोयम्मि य सव्वमाहए ॥७॥

प्राणातिपात (हिंसा), मृषा, अदत्तमङ्गल, मैथुन और परि-
 ग्रह इन पापोंका त्याग कर और इनसे विपरीत प्रथा का अनु-
 पालन कर विरत मुनि त्रिपाणु के मार्ग का प्राप्त हान हैं ॥१॥

जिन शासन में जो कोई भी मिथ्यात्वादि व मोघान्ति शल्य
 गर्हित कहे गये हैं उन सबको त्याग कर नि शय होते हुए मुनि
 मंत्रकाल विहार करते हैं ॥ ॥

मन, वचन और नायनों कुटिलता का नाम माया है । उत्पन्न
 विद्या अनुत्पन्न उभय प्रकार की मायाका मुनिजन नमश आलो-
 चना, प्रतिब्रमण, निन्दा और गडगता कारण से इनन (नाश)
 करें । तात्पर्य वा जो माया जब जत्र उत्पन्न हो तब तब उस उस
 माया का उक्त कारणसे निनाश किया जाय ॥३॥

जिन कालम माया उत्पन्न हो जमी कालमें उसका आलोचना
 आदि द्वारा इनन करना चाहिए । यह भाव प्रतिब्रमण कहा गया
 है । क्योंकि भावका अर्थात् माया परिणति का ही निराकरण
 होता है, इसलिए भाव प्रतिब्रमण है । अत्रशिष्ट शब्दोच्चारण
 मात्र न्य न्यप्रतिब्रमण है ॥४॥

पण्यत्ता अरहत्तहि भयवतेहि तित्थयरेहि आरियग्घि
 तिलोगणहेहि तिलोगवुद्धेहि तिलोगदरसीहिं त सद्-
 हामि ते पत्तियामि ते गेचेमि ते फासेमि, ते मद्दहतस्स
 त पत्तयतम्म ते राचयतस्स ते फासयतस्स जो मए
 देवसिओ राईआ पयियया सज्जउरिओ अदिककमो
 वदिककमो अइचारो अगाचारो आभोगो अणाभोगो
 अषाते सज्जओ पओवाले वा परिहाविदो अत्यापा-
 रिद मिच्छाभोलद वा मेलिद अण्णहादिण्ण अण्ण
 हापडिच्छद आउसएसु पाडिहीणदाए तस्म मिच्छा
 मे दुवकड ।

शुभो अरहताण ण्णानि पन्नमस्वारपण, अट्टतर, मिदपद,
 आचायपद, उपाध्यायण, साधुपण, चत्तारिभगलं इत्यादि भगल
 पद, चत्तारि लागात्तमा इत्याणि लाकोत्तमपद, चत्तारिभरणं
 पञ्चजामि इत्यादि शरण पद, करेमि भति । सामान्य इत्यादि
 सामान्यपद, अहमजिय च वद इत्यादि उदिशति तार्थपरपद,
 सिडानुद्धूत इत्यादि और जयति भगवार इत्यादि वचनापद,
 पडिस्समामि भते इत्याणि प्रतिश्रमणपण, भ त पञ्चवत्तामि
 इत्यादि प्रत्याख्यानपद, नवमरया प्रमाण पचनमस्वारका उच्चा
 रण लक्षण, तथा अठारह सत्तांसं हत्तीम, पक्कमो आठ इत्याणि
 सत्त्या लक्षण फायोत्सगपद, अमहिय मिहियपद इन सब पणों
 में अत्यादाता होनेपर तथा आचारानि अगण, अगाके अधि
 कारपद, मर्या आदि अगागपद, उत्पाद पूर्वादि पूजा ग, वस्तु
 प्रभृति पूर्वपूर्वा ग, प्रवीणक प्राभृत, प्राभृतभाभृत, पूर्वकृत पडा
 वश्यवादि धर्म अथवा शुभ और अशुभ मन वचा और वायव्ये

अविष्कार और उनमान में एक पटावदक पर इन उक्त मंत्र में उत्पन्न दाप का प्रतिब्रमण करने की इच्छा करता है। तथा जा की अत्पामानता, दशा की अत्पामानता, चारित्रकी अत्पामानता तथा अत्पामानता और वीर की अत्पामानता सम्बन्धी दापका प्रतिब्रमण करता है। तथा अनन्य कार्य करों के गुणोंका ध्यान करने वाले स्तत्रामें एक तीर्थकर के गुण उणा करने वाली स्तुतियां चरित पुराण प्रतिब्रमण अर्थात् यज्ञों में उणा नुयाणां अन्वियोगामें और वृत्तिवेदनादि चौरास अर्थात् योगद्वारों में अन्वियोग, पन्धान, स्वरहीन, अर्थहीन और प्रयत्न दाप का प्रतिब्रमण करने की इच्छा करता है। अहन्त, भगवान् तीर्थकर, त्रिलोकनायक जो तीर्थदि पन्थ आगमम प्रतिपादन विद्ये हैं उनका श्रद्धा करता है, प्राप्त करता है, मंत्र करता है पिरसास करता है। उनका श्रान करने वाल, प्राप्त करने वाल श्रान वाल विश्वास करने वाल जा मर ईश्वरमिक, गरिभ, पाणिन चातुर्मासिक, मवत्सरिक अतिक्रम व्यतिक्रम, अन्वियोग अन्वियोग आभोग अन्वियोग शेष लगा, अन्वियोगमें म्वायाय श्रिया, श्राध्याय कालमें श्राध्याय नहीं किया मद्रमा किया, विना विचार कर्त्ती जल्दी उच्छ्राय किया, मिथ्या अन्वियोगमात्रक माथ मिलाया, अन्य अन्वियोगका अन्य अन्वियोगक माथ जोड़ कर पन्थ, उच्चश्रुति-युक्तका नीच श्रुति से और नीचश्रुति युक्त पाठका उच्चश्रुतिसे पढा, अन्यथा कहा, अन्वियोग प्रहम विचार या ती मुक्त, आवश्यका में परिहीनता की इन सब शेषोंसे उत्पन्न मरा दुष्टत्व मित्या होय।

अह पडिवादाए विदिए तदिए चउत्थीए पचमीए
 छट्ठीए सत्तमीए अट्ठमीए एणमीए दसमीए एयारसीए
 वारसीए ८ ५०६वीए गुणमासीए ५

दिवमाण पण्णरसगईण, छउण्ह मासाण अट्टण्ह
 पक्खाण वीसुत्तरसय दिवसाण वीसुत्तरसय राईण,
 वारसण्ह मासाण चउवीसण्ह पक्खाण तिण्ह छावाट्टि-
 सयदिवसाण तिण्ह छावाट्टिसयरईण, पचवरिसादा
 परदा अन्मितरदो वा दोण्ह अट्टरइसकिलेपरिणामाण
 तिण्ह अप्सत्यसकिलेसपरिणामाण तिण्ह दडाण
 तिण्ह लेस्साण तिण्ह गुत्तीण तिण्ह गारवाण तिण्ह
 सल्लाण चउण्ह सण्णाण चउण्ह कसायाण चउण्ह
 उवसग्गाण पचण्ह महव्वयाण पचण्ह इदियाण पञ्चण्ह
 समिदीण पञ्चण्ह चरिन्नाण छण्ह आवासयाण सत्तण्ह
 भयाण सत्तविहसमाराण अट्टण्ह मयाण अट्टण्ह सुद्धीण
 अट्टण्ह कम्माण अट्टण्ह पवयणमाउयाण एवण्ह
 उभचेरगुत्तीण एवण्ह एोकसायाण दसविहमुडाण
 दसविहममणधम्माण दसविहधम्मज्जाणाण वारसा
 सजमाण वारसण्ह तवाण वारसण्ह अगाण तेरसा
 किरियाण चउदसण्ह पुव्वाण्ह पण्णरसण्ह पमाया,
 मोलसण्ह कसायाण पण्णवीसाए किरियासु पण्णवीसाए
 भावणासु वावीसाए परिसहेसु अट्टारसीलसहस्सेसु
 चउरासीदिगुणसयसहस्ससु मूलगुणसु उत्तरगुणसु
 अदिवग्गम्मो वदिवग्गम्मो अइचारो अणाचारो आभोगो
 अणाभागो तस्स भते । अइचार पडिक्कमामि
 पडिक्कत वदो वा कारिदो वा वीरतो दा समणुम-

णिणद तस्म भने । अइवार पडिक्कमामि णिणदामि
 गरहामि अप्पाण वोस्सरामि जाव अरहताण भय-
 वनाण एमाक्कार करमि पज्जुवास करेमि ताव वाय
 पाउक्कम्म द्रुच्चगिय वोस्सगमि ।

गमा अग्हनाण एमो सिद्धाण एमो आइरियाण ।

एमा उवज्जभायाण एमा लोए मद्धमाहूण ॥ १ ॥

प्रतिपदा द्वितीया तृतीया चतुर्थी, पंचमा, षष्ठी, सप्तमा,
 अष्टमा, नवमा, दशमा एकादशा द्वादशा त्रयादशा, चतुर्दशी
 और पूर्णिमा इन प्रत्येक तिथिों में एक पक्ष के पंद्रह दिन और पंद्रह
 रात्रि, आरमासके आठ पक्ष एक मौसम दिन और एकमास
 रात्रि तथा एक वर्ष के बारह मास, चौधोस पक्ष, तीनमौ छया
 मठ दिन और नामौ छयामठ रात्रिन तथा युगप्रतिक्रमणा के
 पात्र घण में ग्रे और भीतर पूर्वोक्त आत्तरीद्रव्यात रूप मस्लश
 परिणाम, माया निया और निजान रूप अप्रशस्त संकलेश
 परिणाम अप्रशस्त मन वचन और वाय नामक तीन दृष्ट, कृष्ण,
 नील और वाय त तान अशुभलक्ष्या, तीन गुणित तात्र गारव,
 तान शल्य, चार महा, चारकपाय, चार उपसग, पाच प्रत्यय,
 पात्र इन्द्रिय, पाच समिति पांच चारित्र, छह आवश्यक, मात भय,
 मत्त विप्र संमार, आठ मद, आठ शुधि आठ कम, आठ प्रप
 चा मातृवा तत्र प्रसवय गुणित नत्र नामपाय दश मुष्ट, दश
 श्रमण धम दशधनध्यान, बारह मसम बारह तप, बारह अंग,
 तरह त्रिया, चौदह, पूर्व, पंद्रह प्रमाद सालह कपाय, पंचाम
 क्रिया, पंचाम भावना, बास परीपह, अठारह हजार शानि,
 चौगामी लाख गुण, मूलगुण और उत्तर गुण य किन्ने हा आच
 रण पत्र ह जो नामन योग्य हैं आर नितन ही आचरण ज्ये हैं ना
 पालन योग्य हैं, जागन योग्य वा पालन द्विया और पालन योग्य

या पालन तर्हि विना, एतत् कथं विनिरूप्य चौर विराय स्वस्य
 आचरणमथ प्रतिपद्य (मन्त्रं गुणान् जी ह्यति) त्यजित्तम
 (विषय मैषन ह्य आभ्यासा) अतिशय (या या एतदस्य गच्छन्)
 अनाहार (प्रतयेग) आनन (पूजा म हार मन्त्रपर) अनेनाम
 मे अति प्रत्य रूप म अनुष्ठान परता) अति य अन्तः शिवा
 आदिष्व वरा विमाणा प्रत्य न ह । पा । इत प्रचार दिव पर
 अनुष्ठान करतो ये दाप लग । ह भगवत ' इम अन्वियार (नव)
 या प्रतिपद्य करता ह । अनी तिन्या परता हू मया फरत हू
 वूर फा वा दाइता हू । तय तर अगवन्ता अत न दो तयमार
 परता हू पणुपामन काण हू अथ तर पारकर स्वस्य अति
 दुर्भास्ति रूप पाय म मनच्ये त्नागता हू ।

पठम ताव मुद्र म आउभ्यता ! इत् मनु ममगाता
 अयवता मर्ताम प्रावारेण महावस्त्राण मद्यष्टगाग्नेष
 मभ्रलोयदरमिणा गावयाण गावियाण सुद्वयाण
 सुद्धीमाण वारगण पचाणुवदाणि विणिग गुणव्य-
 दाणि चत्तारि निवगावदाणि चारउक्ति मिहत्वयम्म
 मम्म उवदमियाणि । तत्त्व टमाणि पचाणुवदाणि
 पठमे अणुवदे थलयट पाणादिनाशश वेरमण,
 विदिण् अणुवदे थूलयडे मुनायादान् वेरमण, तदिण
 अणुवदे थलयड जदत्तादाणादो वेरमण, चउत्थे अणु-
 वदे थूलयट मगरमनामपरत्तरगमणवेरमण वरम
 य पुशु सव्यदो विरदा, पत्रमे अणुवदे थूलयट इच्छा-
 तदपरिमाण चेदि, ट्चेदाणि पत्र अणुवदाणि ।

हे आगुप्मानो ! तैः (गौतम) महाशय्येण वा सां मय्य
 मय्येति भ्रमणं मयवान् महाशय्येण मे शय्येण धारयन्, तुल्य
 और ही लक्षात्मा क कारण स पाँच अणुगत तान गुण प्रत और
 चार शिखाप्रत य शारु प्रचार गृह्येण धम मन्ता ह । उतम य
 पाँच अणुप्रत ह—पहल अणुप्रतर्म स्थूल प्राणान्तगतन विरमण
 ह, तूमरे अणुप्रत मे स्थूल मृपायार म विरमण है तापर अणु
 प्रत मे स्थूल अदसादान मे विरमण है और अणुप्रत म शरदार
 मन्तोप ह तथा परदार गतन स विरमण ह और पाचये अणुप्रत
 मे स्थूल शरदार परिमाण है ये पाच अणुप्रत हैं ।

तस्य इमाणि निष्णिण गुणत्रयाणि, तत्र पठमे
 गुणत्रय निमिविदिनि पञ्चकलाण विदिण गुणवन्दे
 विविधवस्तुयदहादी वेरमण, तदिण गुणत्रये भोगो-
 पमाणापरिसन्यागं चेदि, इच्छेदाणि निष्णिण
 गुणव्यदाणि ।

उतमे य तान गुणप्रत हैं उनमे पहला गुणप्रत दिना और
 विदिनाका प्रत्यार ना है, दूसरे गुणप्रत म शिखि अथदहा म
 विरमण ह और तामर गुणप्रत म भाग और उपभाग वस्तुआ
 का परिसन्यान है य तीन गुणप्रत हैं ।

तस्य इमाणि चत्वारि सिक्खावशाणि, तस्य पठमे
 सामाह्य विदिण पौसहोवासय, तदिण अतिथिसविभागी
 चउत्थे सिक्खावदे पच्छिमसल्लेहणाभरण, तदिण
 अन्धोवस्साण चेदि ।

उनमे ये चार शिखात्रत हैं उनमे पहल म सामायिर दूसरे म
 प्रायथापनामे, तामर म अतिथि सविभाग और चौथे शिखाप्रत

म अन्तिम सल्लसता-पूर्वक मरण और तीमरा अभ्रावशा
का है ।

से अभिमदजीवाजीव -उवलद्धपुण्यापाय आसव-
बधसवरणिज्जर-भोवसमहिबुसले धम्माणुरायरत्तो पि
माणुरागरत्तो अट्टिमज्जाणुरायरत्तो मुच्छिदट्टे गिहिदट्टे
विहिदट्टे पालिदट्टे सेविदट्टे इणमेव णिग्गथपावयणे
अणुत्तरे सेअट्टे सेवणुट्टे ।

णिम्सकियणिक्कसिय णिव्विदिगिद्धी य अमूढदिट्ठी य
उवगूहण ट्ठिदिक्कण वच्छल्लपहावणा य वे अट्ट ॥१॥

नि शक्ति, निष्प्राप्ति, निवाचकित्सा, अमूर्च्छा, उपगृहण,
स्थिति करण, आत्मल्य और प्रभायना ये सम्यक्त्व के आठ
अंग हैं ।

सव्वेदाणि पचाणुव्वदाणि तिणिण गुणव्वदाणि
चत्तारि सिक्खावदाणि वारसविह गिहत्थधम्ममणुपा-
लइत्ता ।

दसग वय सामाइय पोसह सच्चि राद्भत्ते य ।

वभारभ पग्गिह अणुमणमुद्धिट्ट देसविरदो य ।१।

सब ये पाच अणुव्रत तीन गुणव्रत, और चार शिक्षाव्रत
मिलकर बारह प्रकार गृहस्थ धर्मका अनुपालन कर दर्शन, मत,
सामायिक, प्रापथ, सच्चि विरमण, रात्रिभक्त विरमण, ब्रह्मचर्य,
आरभ निवृत्ति, परिग्रह विरति, अनुमत्तित्याग और उद्दिष्टत्याग
ये देशव्रत क ग्यारह स्था हैं ।

महुमसमज्जजूआ वेमादित्रिवज्जणासीलो ।

पचाणुव्वयजुत्तो सत्तेहि सिक्खावएहि सपुण्णो २

मधु माम, मय, जूआ बेग्या-मन इन का त्यागा पाप
अगुनत्तो मे और मात शीला न परिपुण श्रावण हाता है ।

जो एदाइ वदाइ धरइ सावया सवियाओ वा
खुहुय खुट्टियाओ व अट्टुट्ट भवणवासिधवाणितर-
जाइसियमाहम्मोभाणदेवोओ वदिकरमित्तउवरिम-
अण्णादरमहडिठयामु दवेसु उववज्जति ।

जा श्रावण श्राविका जुल्लक और जुल्लिना इन घटा का
धारण करत हैं व दश भवनवासा, आठ वाण व्यन्तर, पाच
ज्यातिपी और सौ धम इशान स्वर्ग की दायगा का यतिक्रम
कर उपरिम अन्यतर महर्षिक देनाम उत्पन्न हात हैं ।

त जहा- सोहम्मोसाणसणवकुमारमाहिदवभवभु-
त्तरलातववापिट्टसुकक महासुककसतारसहस्सारआणतपा-
णतआरणअच्चतकप्पमु उववज्जति,

यहा बतात हैं -सौ धर्म इशान कल्प सनखुमार-भट्ट
मञ्ज नन्नात्तर लात्तव कापिट्ट क-प, शुक्र महाशुक्र कल्प, सतार
सहस्सार, आणत, प्राणत, आरण और अच्युत कल्प म उपन्ते हैं ।

अडयवरसत्थधरा कडयज्जदवद्धनठडकयसोहा ।

भासुरवरवोहिधरा देवा य महडडिया हाति ॥ ॥

उक्कस्सेण दोतिण्णभवगहणाणि जहण्णे
मत्तट्टुभवगहणाणि तदो समणुसुत्तादो सुदेवत्त सुदेव-
त्तादो सुमाणुसत्त तदो साडहत्था पच्छा णिग्गथा
होळ्ळण सिज्जभक्ति वुज्जभक्ति मुचति परिणिव्वाणयति
सव्वदुक्खाणमन करेति । जाव अरहताण भयवताण

एगमोकार करमि पञ्जुवास करेमि तात्र काय पावकम्म
दुच्चरिय वोस्सरामि ।

तेमे त्थेपमन हात्के धारक महदिक नेय होत हँ । ना
ग्वर्षपन म दो तीन भय ग्रहण करत हँ । जघन्य स सात आठ
भय ग्रहण करत हँ । पश्चात् वे सुमनुष्यत्व से सुदेवत्व और सुद
रत्व म सुमनुष्यत्व को उसस साइहत्थ पश्चात् विमंथ मुनि
हाकर सिद्ध, हात हँ, बुद्ध हात हँ, मुक्त हाते हँ और परिनिवाण
म प्राप्त हात हँ, सब दुखाका अन्त करत हँ । मैं जब तत्र
अहन्त भगवाना भा नमस्कार करता हूँ पयुपामन करता हूँ तब
तत्र पापापार्थक दुश्चरित्र कायना व्युत्सवन करता हू ।

(अन्तर साधव “थोस्सामि” इत्यादि ददक
पठित्वा सूरिणा महिता ‘वदसमिदि दयरोधो’ इत्या-
दिक चाधोत्य धीरस्तुति कुर्यु)

(अन्तर माधु “थोस्सामि” इत्यादि ददक पठन्त आचार्य
क साथ वदसमित्थिराधा इत्यादि पदकर धीर स्तुति करें)

वीरभक्तिः

सर्वातिचार्यिशुद्ध्यर्थं पाक्षिकप्रतिभ्रमणत्रियाया
पूर्वाचायानुक्रमेण सकलकमक्षयाथ भावपूजापठना-
स्तवसमेत निष्ठितररगवीरभक्तियायात्सर्गं करोम्यहम्-

अनुचाय, एगमा अग्रहताण इत्यादि पठन्त पठित्वा कायोत्सर्गं
यथोक्तानुच्छवासान् ३०० कृथा ‘थोस्सामि’ इत्यादि पठित्वा
पठित्वा ‘चद्रमं चद्रमराचिर्गार’ इत्यादि स्वयमुक्त्वा ‘था सथाण

करान्तिं इत्यादि चारभक्तिं नारातिना पटिया वरममि
दिदियरा मे इत्यादिषु पठ्यु । न्याया—)

(इस प्रकार उच्चारण कर 'गुमा शरह नाम' इत्यादि दृढप
पठकर यथात् २०० उच्चारणस प्रमाण शशात्सग करके 'धाम्मा
मि' इत्यादि षड्क पठे । फिर चद्रप्रभ चद्रमरीचिगौर इत्यादि
रत्रय पठकर 'य सयाणि' पराचराणि इत्यादि अचरनिना युक्त
वार भक्ति पठकर घटममिदिदियराधा इत्यादि पठे)

चद्रप्रभ चद्रमरीचिगौर चद्र द्वितीय जगता र वातम् ।
वदेभिवद्य महतामृषोद्र जिन जितस्वातकपायबध १
यस्याङ्गलदमीपरिवपभिन तमस्तमाररिव रश्मिभिनम्
ननाश बाह्य बहु मानस च ध्यानपदापातिशयन भिन्न २
स्वपक्षसौस्वित्यमदावलिप्ता प्राक्महनादविमदा बभूवु
प्रवादिनो यस्य मदार्द्रगडा गजा यथा कसरिणा निनाद
य सबलोके परमेष्ठताया पद बभूवु द्रुतकमतजा ।
अनतधामाक्षरविश्वचक्षु समतदु तक्षयशासनश्च ४
स चद्रमा भव्यकुमुद्वतीना विपन्नदोषाभ्रकलङ्कलेष ।
न्याकाशवाह्यायमयूतमाल पूयात्पवित्रो भगवानमोमे

चद्रमारी फिरणोंके समान शुक्ल जगता तलपर माना द्विताय
कमतीय चद्रमा, महान इन्द्रादि द्वारा अभिवन्द्य श्रियया क
स्वामी, जिनने अपने आध्यन्तर क्रोधादि कपाय बाध नीत लिया
हैं तेने अष्टमर्तयिष्य चद्रप्रभजिनको वन्दना करता हैं ॥१॥

जिन प्रकार सूर्यकी फिरणों से अंधकार छिन्न भित छात्र
गश को प्राप्त होजाता है उसी प्रकार भगवान् चद्रप्रभ क
शरारकी प्रकृष्ट गति क मटल से बाण अंधकार और ध्या

रूप दीपक के अतिशय (प्रकाश) से ज्ञानावरण के उन्मूलन से नय
अनन्य प्रवारना आभ्यन्तर अज्ञानाधवार - ए दुःखा ॥ ॥

अपन पक्ष की भ्रष्टता के मद्दम तुर तुर द्रुण प्रकाश (अथ
मती) भगवान् चन्द्रप्रभ के यत्न; रूप सिद्ध तादात्म्य रहित हा
गय। निम्न प्रकार कि मद्द के भरन से आद्र पपाल-पाल दार्पा
सिद्ध की गचना से मद्द रहित होना है।

निम्न सम्पूर्ण प्राणियाँ ही माह से दुःखा पर प्रयुक्त
(चागत) पराने से निमित्तभूत अद्भुत तन था। निम्न अ
न्तगम यत्नज्ञान विशयम अविश्वर चतुथा, जिन्हा ही
गामन माह देने वाला था एमे जा चन्द्रप्रभ भगवान् मयलाय
से परमात्म पक्षा प्राप्त हुए थे।

अश्विन रूपी कुमुदना पर प्रतुलित करने वाला न मा
आत्मा के अनन्त ज्ञानादि स्वरूप के प्रच्छादन अमानादि दोष
रूप मय और पक्ष रूप उपलेष अध्याय आशरण से रहित यस्तु
क स्वरूप की प्रतिपादन करने वाली दिव्यध्वनि का गना रूप
निर्गण के समुदाय से मुख्य एमे से कमफल से विशुद्ध भगवान्
चन्द्रप्रभ मरा मत कममल से विशुद्ध करें ॥१॥

य सवाणि चराचराणि त्रिष्विद्वद्रव्याणि तेषां गुणान्,

पयायानपि भूतभाविभवत सर्वान् सदा सबदा ।

जानीते युगपत्प्रतिक्षणमत सर्वान् इत्युच्यते ।

सबज्ञाय जिनेन्दुराय महते वीराय तस्म नमः १
वीर सबसुरासुरेन्द्रमहितो वीर बुधा सश्रिता ,

वीरणाभिहत स्ववमनिचयो वीराय भक्त्या नमः ।

वीरात्तीथमिदं प्रवृत्तमतुल वीरस्य वीर तपो,

वीरे श्री द्युति-वाति वीरिण घृतयो हे वीर ! भद्र स्वयि

ये वीरमादौ प्रणमति तित्य,

ध्यानस्थिता समययोगयुक्ताः ।

ने वीतशोका हि भवन्ति लाभे,

ससारदुर्गं विषम तरन्ति ॥ ३ ॥

व्रतसमुद्रमूल समयस्व-धव-धो,

यमनियमपथाभिर्वाधित शीलशाख ।

समिनिकन्धुभारो गुप्तिगुप्तप्रबालो,

गुणकुसुमसुगन्धि सत्तपश्चित्रपत्र ॥ ४ ॥

शिवसुखपन्नदायी यो दयाध्याययौघ

शुभजनपथिकाना खेदनोदे समर्थ ।

दुस्तिरत्रिजताप प्रापयन्तभाव

स भवविभवहर्षे नोऽस्तु चारित्र्यदृक्ष ५

चारित्र्य भवजिनश्चरित प्रोक्त च सर्वशिष्येभ्य ।

प्रणमामि पचभेद पचमचारित्र्यलाभाय ॥ ६ ॥

धम सबसुखाकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिचवते,

धर्मैणव समाप्यन्ते शिवसुख धर्माय तस्म नम ।

धमानास्त्यपर सुहृद्भवभृता धमस्य मूल दया,

धर्मं चित्तमह दधे प्रतिदिन ह धम । मा पालय

धम्मो मगलमुद्दिट्ट अहिमा समयो तवो ।

देवा वि तस्स पणमति जस्स धम्मे सया मग्गो ८

अञ्चलिका

इच्छामि नते । पडिक्कमणादिचारमालोचेउ,

सम्म-णागाम-णा मम्मच्चरिता-नव-वीरियाचाने-

यम-नियम—सजमतीरामूलुत्तरगुणैसु सव्वमच्चार
 सावज्जजोग पडिविरदामि अससेज्ज लोगज्जभवसा
 गठाणाणि अप्पमत्थजागमण्णाणादिक्कसायगारव
 विग्यासु मणवयणवायकरणदुप्पणिहाणि परिचि-
 त्तियाणि कण्हणीलवाउलेस्साओ विक्कहापलिकु चिएण
 उम्मगहस्सरदि—अरदिसोयभयदुमद्धयेयणाविज्जभज-
 भाईआणि अट्टरुद्धसकिलेसपरिणामाणि परिणामि
 दाणि अणिहदक्कचरणमणवयणवायकरण अविस्स-
 त्तवहुलयरारणेण अपडिपुण्णण वा सक्कतरावय
 सघायपडिवत्तिएण अच्चावारिद मिच्छामेदि
 आमेलिद अण्णहादिण्ण अण्णहा पडिच्छद आवसएसु
 परिहीणदाए कदा वा कारिदो वा वीरता वा समणु-
 मणि १ तस्स मिच्छा मे दुक्कड ।

वदसमिदिदियरोधो लोचो आवसयमचेलमण्हाण ।
 सिदिसयणमदतवण ठिदिभोयणमेयभत्त च ॥१॥
 एदे खलु मूलगुणा समणाण जिणवरेहि पण्णात्ता ।
 एत्थ पमादक्कदादो अइयारादो णियत्तोह ॥२॥
 छेत्तावट्ठारण होदु मज्झ ।

इसका अर्थ देवसिद्ध २ श्रावक प्रतिश्रमण म आ चुका ह
 नहीं है ।

शांतिचतुविंशति—स्तुति.—

सर्वातिचारविशुद्ध्यर्थं पाक्षिकप्रतिश्रमणत्रियाया

पूर्वाचार्यानुक्रमेण सरलकमक्षयार्थं भावपूजावदना-
 म्भवमेत शान्तिचतुर्विंशतितीर्थकरभक्तिवायोत्सर्ग
 कराम्यह (इत्युच्चाय एमाश्चरहताण 'इत्यादि दृढर पठित्या
 रायमुत्सृज्य थोस्मामि इत्यादिद्वयमधीत्य शान्तिरातना
 त्रिंशत् रक्षा इत्यादिका च विंशतितीर्थना च चउवीमं
 त्तिचकरे इत्यादिसा सात्रलिका 'उदमनि विद्यराधा' इत्यादिकं
 रममूर्य मयता पठयु । तथा—

सन्निवारणशुभार्थं इत्यादि प्रतिना का पूजया चरणा
 दर "एमाश्चरहताण" इत्यादि दृढर पठकर मत्तास उच्छ्वास
 प्रमाण वायोत्सर्ग परे 'थोस्मामि' इत्यादि दृढर पठकर
 त्रिंशत् रक्षा इत्यादि शान्ति कीतना और अचलिका-युक्त चतु
 र्विंशति तीर्थकर कीतना और "वस्मिदिन्द्रियराधा" इत्यादि पाठ
 मूरि और मयत पठे ।

विधाय रक्षा परत प्रजाना राजा चिर योऽप्रतिमप्रताप
 व्यात्पुरस्तात्स्वत एव शान्तिमुनिर्दयामूर्तिरिवाघशान्ति
 चक्रेण य शत्रुभयकरेण जित्वा नृप सर्वेनरेन्द्रचक्रम् ।
 ममाधिचक्रेण पुनर्जिगाय महोदयो दुजयमोहचक्रम् २
 राजश्रिया राजसु राजसिंहो रराज या राजसु भोगतत्र
 आर्हं त्यत्रक्ष्म्या पुनरात्मतत्रा देवासुरोत्तरसभे रराज ३
 यस्मिन्नभूद्राग्नि राजचक्र मुनी दयादीधितिघमचक्रम्
 पूज्ये मुहु प्राजलिदेवचक्र ध्य ना मुषे ध्वसिबृतातचक्रम
 स्वदोषशायायहितारमशाति शान्तिघाता शरण गताना
 भूया द्रववलेकभयोपशात्यै शान्तिजिना मे भगवाञ्छरण्य

शान्ति-कीर्तना—

अनुपम पराक्रम वाले जो भगवान् शान्तिनाथ प्रथम पट्ट
सड के अधिपति होकर निरकाल तत्र शत्रुओं से प्रजा की सरक्षा
करके पश्चात् वे दयामूर्ति शान्ति नाथ निखिलाय साक्षात्कारा
मुनि होकर परोपदेश क विना स्वय ही अपने और प्रजाके पाप
की शान्ति करत हुए ॥१॥

जा राजा शान्तिनाथ गृहस्थाश्रमस्थान शत्रुओं की भय उपनाम
वाले चक्रसे सब राजाओं के समूहको जातकर, मुनि अवस्था में
गभावतारादि कल्याणकों के धारक वे धर्मध्यान और शुभलध्यान
रूप समाधि चक्रके द्वारा दुजय माह मैयको जीतते हुए ॥२॥

जा राजसिंह शान्तिनाथ राथाश्रमस्थाने राजाओं के उत्तम
भोगों से लीन हुए राज्यलक्ष्मी से सुशाभित होत हुए । फिर
अहन्त अवस्थाम आत्मस्वरूपमें लीन होकर स्वय और अमुरो
का समवशरणवर्ती उत्तर मभामें आठ प्रातिहाय और समग्र
शरण रूप बाहु लक्ष्मी से और अनन्त ज्ञानादि रूप आभ्यन्तर
लक्ष्मी से सुशाभित हुए ॥३॥

जिन शान्तिनाथ के राजा होने पर सामन अन्य राजाओं का
चक्र (समूह) हाथोंकी अजुली जाड़े हुए खड़ा रहा और सब
कार्य साक्षात्कारी मुनि होने पर दया रूप किरणों वाला धम
चक्र आगे आगे चलता था, स्वय अहन्त पद की प्राप्ति होनेपर
देवाका चक्र हाथ जाड़ हुए बार बार शिर भुका कर खड़ा
रहता था और स्वय व्युपरतिक्रिया निश्चित नामक शुभलध्यान
की प्राप्ति होने पर अविशिष्ट चार अधातिया धर्मचक्रका ध्वस
हागया था ॥४॥

जिहोंने अपनी आत्मा में स्थित रागादि भावा की शान्ति
करके अपनी शान्ति की, ऐस समार-समुद्रसे पार होनेके लए
जो प्राप्त हुए भय जीवाका शान्ति के करने वाल, वे धर्म

स्य अग्न्या क त्रना भगवान शरण भूत शान्तिर्नित्यं मर मर
क्लम और भय को अग्निके विष हारें ।

चउवीमे नित्यंरे उसहाइमोर्गपिद्रम वदे ।

सुश्रामि गुग्गुगुहरसिद्धे मिन्मा गमनामि १
ये नाकेऽष्टमहन्त्र वपगघरा जयाएवातगता

ये सम्यग्भवजालहेतुमयनाश्च द्राक्नजोऽधिवा ।
य माध्विन्द्रमुग्धरोगगणनर्गिनप्रणुत्वाचिता-
स्तान् देवान् धृपभादिवीरचरमान् भवत्या नमत्याम्यहम
नाभेय देवपूज्य जिनवग्मजिन सर्वलोक्प्रदीप

सर्वेण शमवाप्त्य मुनिगणवृषभ नदन देवदेवम ।
कमारिध्न सुवृद्धि वरकमलनिभ पद्मपुष्पाभिगात्र

क्षान दान सुपाद्वं मन्त्रलशशिनिभ चन्द्रनामानमीह
विख्यात पुष्पदत्त भवभयमघन शीतल नीकनाथ

श्रेयास शीलबोध प्रवरनगुरु वासुपूज्य सुपूज्यम्
मुक्त दान्द्रियाश्च विमलमृषिपति सिद्धसैन्य मुनीन्द्र,
धर्म सद्धमकेतु शमदमनिलय स्तौमि शान्ति शरण्यम्
बुधु सिद्धालयस्य श्रमणपतिमर त्यक्तभोगेषु चक्र,
मल्लि विख्यातगोत्र स्वचरणनुत्त मुद्रत सौम्यराशिम्,
दनेन्द्रार्च्यं नमीम हृत्कुलतिलक नेमिचन्द्र भवान
पार्श्वं नागद्रवन्त्य शरणमहमिन्ना वर्धमान च भवया ५

अञ्चलिका

इच्छामि मन । चउवीमनित्ययरभक्तिवाउस्मगो

कथो तस्सालोचेउ, पचमहावन्लाणसपण्णाण अट्टम-
 हागाणि हेरमहिदाण चउतीभातिसयविसेससजुत्ताण
 वत्तोसदेविदमणिमउडमत्ययमहिणाण प्रलदव दामुदेव-
 चक्रुहर रिसिमुणिजइअणगारोवग्ढाण थुडमहस्सणि-
 नयाण उमहाइवीरपच्छिममगलमहापुरिमाण णिच्छ-
 वाल अचेमि पूजेमि वदाभि णमसामि दुक्कक्कओ
 कम्मकत्तओ बोहिलाहा सुग्गमणं समाहिमरण
 जिणगुणमपत्ति होउ मज्झ ।

वदसमिदिदिघरोधो लोचो अवासयमचेलमण्हाण ।

खिदिसयणमदतवण्ण ठिदिभोयणमेयभत्ता च ॥१॥

एत्थ मलमुणा ममगाण जिगवरहि पणत्ता ।

एत्थ पमादक्कदो अइचारादो गियत्तो ह ॥२॥

छेदोवट्ठावण होदु मज्झ ।

सना अर्थ पूर म चा कहा गया है वहा ए अत नहा
 लिखा ।

चारित्रालोचनामहिता वृत्ताचार्यभक्ति —

मवातचारत्रिशुद्धपथ चारित्रालोचनाचार्यभक्ति-
 कायोत्सर्गं करोम्यहम् —

(अत्रापि एवमा अरहंताण इत्यादि दृष्ट्वा पाठत्वा)
 फायोत्सर्ग त्रिधाय ' धास्मान ' इत्यादि द्रष्टक पठन् ।)

मवातचार का विशुद्ध के लिए चारित्र आलाचना युक्त
 आचार्य भक्ति में करता हूँ इस प्रकार यहा पर भी "एवमाअरहं

ताणं" इत्यादि दृढक पदपर सत्ताइम उच्छ्रान्तम प्रमाण कायो
त्मग का विधान पर 'थाग्मामि इत्यादि दृढक पद फिर भक्ति
पदें ।

गिद्धगुणस्तुतिनिरतानुद्धूतरपाग्निजालबहुनविशेषान् ।
गुप्तभिरभिसपूणा मुक्तियुत् सयवचनलक्षितभावान्
मुनिमाहा म्यविशेषाज्जिनशासतमत्प्रदीपभासुरमूर्त्तान् ।
मिद्धि प्रपित्सुमनसा बद्धरजोविपुलमूलघातनकुशलान
गुणमग्निविरचितवपुष पडद्रव्यविनिश्चितस्य वातृसतत
रहितप्रमादचर्या दशनशुद्धान् गणम्य सतुष्टिकरान् ३
मोहच्छिदुग्रतपस प्रशस्तपरिगुद्धहृत्प्रशोभनव्यवहारान्
प्रासुवनिलयाननघानाशाविद्यसिन्धेतसो हतकुपथान ४
यारितविलसमुण्डान्वर्जितवहृदडपिडमडलनिक्तरान् ।
मकलपरोपहृजयिन क्रियाभिरनिश प्रमादत परिरहितान
अचलान् व्यपतनिद्रान स्थानयुता वष्टदुष्टलेश्याहीनान्
विधिनानाश्रितवासानलिप्नदेहा विनिर्गतैन्द्रियकरिण
अतुलानुत्कुटिकामा विविवनचित्तानव्वडितस्वाध्यायान् ।
दम्भिणभावसमग्रान् व्यपगतमदरागलोभशठमात्सर्यान् ७
भिन्नातरौद्रपक्षान् सभावितधमशुक्लनिमलहृदयान् ।
नित्य निन्दकृगतीन पुण्यान् गण्योत्थान् विलीनगारव-
चर्यान् तरुमूलयोगयुक्तानवकाशातापयोगरागसपाथान्
बहुजनहितकरचयातभयाननघामहानुभावविधानान् ९
ईदृशगुणसपन्ना युष्मान् भक्त्या विशालया स्थिरयोगान्
विधि ११।१६ सुकुलोक्तहस्तकमलशोभितशिरसा

अभिनीमि सकलकल्पप्रभवोदयजन्मजरामरणवधनमुक्तान्

शिवमचलमनघमक्षयमव्याहृतमृत्तिमौख्यमस्त्विति मन्त्र

ना सिद्धोक्त गुणान्वय करने में रात दिन अक्षयित रहते हैं
निन्दान काधादि रूप आदि के समूह के अन्तानुवायादि भेदा
वा भस्म कर लिया है वा तीव्र गुणितमे परिपूर्ण हैं, वा मुनिमे
मन्त्राद्य रावने घाल हैं चित्तके आत्म-परिणाम सत्य वचन म
प्रनुरचित हैं ॥५॥

जा मुनियों के ज्ञानतिशय रूप माहात्म्य का विवर्धित करने
वाल हैं निःशामन वा उग्रान करने के लिए शीपक के समान
चित्तकी शरीर मृत्ति स्फुरायमान है चित्तनामः मृत्ति के प्राप्त
करने में लगा हुआ है। जा ज्ञानायरगुणादि पन्नाके आत्मरूप के
प्रप्रदापाणि प्रचुर पागणा वा घाल करने में कुशल हैं ॥६॥

चिन्ता शरीर मन्त्राद्य आदि गुण रूप मणिया में रखा
हूँ, वा चापाणि पट्ट रूप के ज्ञान के निरन्तर आधार हैं
चिन्ता चर्या विरथा रूप प्रपन्न प्रपन्नो म गहित है, चिन्ता मन्त्र
गद्शन शवा आदि तथा म रन्ति निमल है, वा च विध मय को
मन्तुष्ट करने वाले हैं ॥७॥

चिन्ता रूप तप अयधि आदि ज्ञाना वा कारण हानेम
अज्ञान का नाशक है चिन्ता व्यवहार लाभार्थिक में गहित धमा
नुमय हृदयमे रूप पारम्य है वा पापा में गहित हैं, चिन्ता
चित्त इह लोक और परलोक मन्त्र की आशा का विधर्मक है
और चिन्तन मिथ्याशन आदि कुम गों का हान पर दिया
है ॥८॥

चिन्तन प्रशस्त मत वच, काय पाय इन्द्रिया, हाथ और
पैर इन दश प्रशस्त मुंडा का धारण किया अथा चिन्तके य
दश मुंड प्रशस्त हैं, चिन्त मुनि —समुदाय म अधिय प्रायश्चित्त
लने वाल मुनि हैं और अधिक प्रायश्चित्त युक्त पाहार ग्रहण

करवाने मुनि हैं उनमें जो वर्तित हैं, विशिष्ट आचरणों द्वारा जो सब परिषदा का चतन काल हैं और जो निरन्तर प्रिय्यादि प द्रष्ट प्रमादी से मन्था रहित हैं ॥५॥

जो किसी भा कारण से परापद व्यभिपात हात पर गतानु प्राप्त से प्रियनिव नश हात हैं निद्रा म व्यपत हैं उध्वपायात्मग से युक्त हैं दु ख पायी हात से कष्ट रूप और कुगति म गमन का कारण हातम दृष्ट रूप एमा कृष्णादि तीन अशुभ लरयाओं म हीन हैं आगमात्त विधात्ते अनुमार पत्रों का वसन्ति आदि अनेक निरामा का जो आश्रय महण प्रिय रूप हैं तपक माहात्म्य म चिनरा न्ह निमल ह अथवा चिनरा न्ह मया ग मत्त युक्त ह आर इत्थिय रूप हाथिया का चिनन यशम कर लिया है ॥६॥

चिनर महश पाद नहा है उत्तुत्क आसनस ध्यान करन हैं चिनरा वित्त ह्यापादय क प्रिये म मपन्न ह म्याध्याय चिनरा अखडित ह अथात् जा बराबर म्याध्याय करन हैं, जो प्रशस्त भाया स पारपूण ह और मद राग लोभ शठता, मात्सय स रहित हैं ॥७॥

चिदान आत्त और रौद्रध्यान क पना जो विनारा कर दिया है धमध्यान और शुक्लध्यान का निमल हृदयम अनुभव प्रिया ह, तर्कान्ति प्रगतिना का मन्क लिए नाग कर लिया ह, जो अत्यन्त पुण्य रूप है चिनक र्थाङ्ग—प्रियाप आत्त का प्राप्ति अन्यन्त श्लाघनाय है और रसाभवात्तान्ति अष्टबिया का प्रगुत्त मवथा नष्ट है ॥८॥

जो क्या कालम वृत्तमूलयाग म युक्त है, शातनात्म अन्ध्राव वाश याग से और मात्तकृत् म आनापन याग म अनुराग सहित हैं, चिनरा क्या गहनता हा कित करन वाला ह, जो मात्त भग म वर्तित है चिन्तिपाप है पण्य माहात्म्य क

तो आचार्य इस प्रकार क गुणा से सम्पन्न हैं, जिनके मन, उचन और वाय याग परीपड आत्तिसे अनुभित हैं, सम्पूर्ण गुणा स युक्त हानेके कारण जो अनवरत प्रधान रहत हैं, अशुभ कर्मों उत्पन्न म उत्पन्न जम, जरा और मरण इन सब लोपा क बंधन, म मुक्त हैं तेम आप आचार्या को म बडी भारा भक्ति से त्रिधि पयक मुक्तामृत हस्ता से शोभित शिरसे सत्ता नमस्कार करता हैं। इससे मरे प्रशस्त हीनाधिक भाव स रक्षित निर्दोष, अल्प निर्वाध मुक्ति सम्बन्धी सुख मन्तत प्राप्त होय ॥१० ॥१॥

लघुचारित्रलाच ॥—

इच्छामि भते । चरित्त यारा तरसविहो परिहा-
विदो, पचमहव्वदाणि, पच समिदीओ, तिगुत्तीओ
चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे पाग्गादिवादादो वेरमण,
स पुढाविकाइया जीवा अससेज्जासखे जा, आउकाइया
जीवा अससेज्जासखेज्जा, तेउकाइया जीवा असखे-
ज्जासखेज्जा वाउवाइया जीवा अससेज्जासखेज्जा,
वरापफदिवाइया जीवा अणता, हग्गिया वीया अ कुर
छिण्णा भिण्णा, तेसि उदावण परिदावण विराहण
उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणु-
मण्णदो तत्स मिच्छा म दुक्कड ।

ह भगवन् । पच महाप्रत पाय समिति और तीन गुप्ति
रस प्रकार तेरह प्रकार का चारित्र-आचार हैं उसका मैंने खडन
रिया, तत्सम्बन्धी दोषों को प्रकट करना चाहता हूँ । गुरु पढत
हैं—हे शिष्य ! प्रकट कर । इस प्रकार गुरु की आज्ञा होने पर शिष्य
तेरह प्रकार चारित्र मे सनात लप प्रकट करता है—उस तरह
प्रकारके चारित्रमें जा पढला महाप्रत है वह प्राणों के व्यतिपात्से

विरमण रूप है। उसमें ई-प्रथिरी प्रायिक अमग्याता मग्यात जाय अ-गयिक अमग्यातामग्यात जाय, तेनगयिक अमग्यातामग्यात जाय वायुकायिक अमग्यातामग्यात जाय और अ-गति प्रायिक अ-ग्यातामग्यात जाय हरित, यौन अकुर ददे भट, उा प्रथिरी प्रायिक अ-ग्यातामग्यात जाय के पाच प्रकारक अ-ग्यातामग्यात जाय उत्ताप परित्तापन विराधन और उभघात मैन प्रिया हा नूमरे म ग्याता हा और अपन आप वरत हुए नूमरे रा अचदा माता हा, म उत्तापनादि स ग्यातामग्यात हुआ दुष्टन मर मिथ्या हा ॥

तेइदिया जीवा जसमेज्जासमेज्जा, कुविस मिमी-सग-खुल्लय पराडय असल-गिदु-जात सबुक्क मिपि-पुलवि नाइया तेहि उदावण परित्तावण विराहण उवघात कदा वा कारिदा वा कोरता वा समणुमण्णिणो तस्म मिच्छा म दुक्कड ।

अपान और मना व न इन्द्रिया चित्तें ई उह न इन्द्रिय तीर कहते हैं। व मग्या न अमग्यातामग्यात हैं। वे हैं-दुष्टि कृमि शय्य बुल्लय वराअ अक्ष रिष्ट बाल मग्घुअ मीप पन्नावि इत्यादि प्रकारक। उनरा उत्तापन परित्तापन विराधन और उपघात मैन स्वय प्रिया ह अथ स फराया है स्वय वरत हुए अन्य वा अनुमात्ता की ह। उम अक द्दीन्द्रियादि वीयाता उत्तापना प्राप्ति स लगा मेर टुट्टन मिथ्या हावे निष्फल हावे।

तेइदिया जीवा जसमेज्जासमेज्जा, कुयु द्दहिय विडिय वाभिद-गाअव-मवकुण विपीलियाइया,

उदावण परिदा

वा कारता ।

उपनादा कदा

हादा नम्म मिच्छा

स्पर्शन, रसना और घ्राण य तीन इन्द्रिया जिनके हैं उह तीन इन्द्रिय जाय कहत हैं जा कि असरयातासरयात प्रमाण हैं, व हैं कुथु दहिन विच्छू, गाम्भिर, गाजू, मत्कुण, पिपीलिका इत्यादि प्रकार । उनका उत्तापन, परितापन, विराधन और उपघात में स्वय किया है, अन्यमें कराया है और स्वय करत हुए अन्य की अनुमात्ना की है । उस उत्तापनादि मन्त्रधी मेरा दुकृत मिथ्या होय ।

चउरिदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा, दसमसय-मखिलपयग-कीड भमर-महुयर गामच्छिआइया, तेसि उदावण परिदावण विराहण उवघादा कदो वा कारिदो वा कोरतो वा समणुमणिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ।

स्पर्शन रसना, घ्राण और चक्षु ये चार इन्द्रिया निचे होता हैं उह चार इन्द्रिय नाव रहत हैं, जा कि असरयातासरयात प्रमाण हैं । वे हैं-डास, मच्छर मक्खी, पतंग कीट, भौरा मधुकर, गामक्षिका इत्यादि प्रकार । उनका उत्तापन परितापन विराधन और उपघात में स्वय किया है, औरों में कराया है और स्वय करते हुए औरों की अनुमात्ना की है । उस उत्तापनादिक से उपाजित दुष्टमेरा मिथ्या है ।

पचिदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा, अ डाइया-पादाइया-जराइया-रसाइया-ससेदिमा-सम्मुच्छिभा-उव्भेदिमा-उववादिमा अवि चउरासीदिजोरिणपमुहस-दसहस्सेसु एदसि उदावण परिदावण विराहण उवघादो कदो वा कारिदो वा कोरतो वा समणुमणिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ।

स्वसन, रमना, प्राण, नेत्र और कर्ण ये पांच इंद्रियां नितके होता है वे पंचेन्द्रिय जीव होने हैं। जा कि संन्या में प्रमग्याता सन्यात प्रमाण हैं। वे हैं—अढायिक, पीतायिक, चराइक, रमा यक, मरुपेन्मि सम्भूर्च्छिम, उपवात्मि इत्यादि प्रकार। इनका उत्तापन परित्तापन विरायन और उपघात मने रख किया है दूसरे स फराया है और रख करत हुन दूसरे का अनुमानना पी है उम उस उत्तापनादि से उपावित हथा मरा दुष्टन मिथ्या होवे।

इच्छामि भते । काधोसगो वओ तस्सालोचेड,
सम्मणागमम्मदसणासम्मचारित्तजुत्ताण पचयिन्ना-
चाराण आइरियाण आयारादिसुदणाणोइम्म-
उवज्झयाण तिरयणगुणपालणारयाण इम्म-
सिण्चकाल भ चेमि पूजेमि वदामि एमम्म-
कलओ वम्मकखओ वोहिलोदां सु । इगमण इम्म-
जिणगुणसपत्ति होउ मज्झ ।

वदसमिदिदियरोधो लोवा अवासयमने

खिदिसयगमदतवण ठिदिभोयगमे

एदे सलु मूलगुणा समणाण जिणग

एत्य पमादकदादो अइचारादा

छेदोवट्टावण होहु मज्झ ।

हे भगवन् ! मैंने कायोत्तमं किया

आलोचना करना चाहता हूँ। सम्भ

संन्यक्चारित्र से युक्त

आचारादि

के पालन में रत सर्व साधुओंकी पुष्पादि द्रव्यासे अर्चा करता हूँ, चतुर्मुखमण्डपमें चतुर्मुख महामह आदि पूजा करता हूँ, उनके गुणों की प्रशंसात्मक वन्दना करता हूँ और दो हस्त, दो पैर और शिर एव पचाग से भूमिपतनात्मक नमस्कार करता हूँ।

बृहदालोचना सहित आचार्य मध्यम भक्ति—

सर्वातिचारविशुद्धयर्थं बृहदालोचनाचायभक्ति-
कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(इत्युच्चार्य “एमा अरहताण इत्यादि दृढकं पठित्वा कायात्सर्गं “धोस्सामि इत्यादि दृढकमधाय “देसकुलजाइसुद्धा” इत्यादिका मध्याचायनुति “इन्द्रामि भते । पक्खियम्मि” आलोचेउ पण्णरसण्णं त्विसाण्ण इत्यादिबृहदालोचना च ससूरय सोधव पठेयु)

सर्व अतिचार की विशुद्धि के लिए बृहत् आलोचना आर आचाय भक्ति सम्बन्धी कायात्सर्ग में करता हूँ—

(इस प्रकार उच्चारण कर ‘एमा अरहताण’ इत्यादि दृढक पढ़कर सत्ताइस उच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग कर “धोस्सामि”, इत्यादि दृढक पढ़ कर “देसकुलजाइसुद्धा” इत्यादि मध्यमा चाय नुति और हे भगवन् ! पश्चिम में आलाचना चाहता हूँ पन्द्रह दिन इत्यादि बृहत् आलाचना आचाय सहित साधुजन पढ़ें ।)

देसकुलजाइसुद्धा विसुद्धमणवयणवायसजुत्ता ।
“तुम्ह पायपयोहमिह मगलमत्थु मे रिणच्च ॥१॥
सगपरसमयविदण्हू आगमहेदूहि चावि जाणित्ता ॥”

सुममंथा जिणवयणे विणये संताणुखेण ॥२॥
 बालगुरुवुड्ढसेहे गिलाणधेरे ५ खमणसजुत्ता ।

वट्टावयगा अण्णे दुस्मीले चावि जाणित्ता ॥३॥

वयममिदिगुत्तिजुत्ता मुत्तिपह ठाविया पुणो अण्णे ।

अज्झावयगुणणिलये साहुगुणेणावि सजुत्ता ॥४॥

उत्तमसमाए पुढवी पमणभावेण अञ्छजलसरिसा ।

कम्मिघणददहणादो धगणी वाळ मसगादो ॥५॥

गयणमिव णिरवनेवा अकखोहा सायख्व मुणिवसहा ।

एरिमगुणणिलयाण पाय पणमामि सुद्धमणो ६

मसारवाणणे पुण वभममाणेहि भव्वजीवेहि ।

णिब्बाणस्स हु मगो लद्धो तुम्ह पसाणण ॥७॥

अविमुद्धलेस्सरहिया विमुद्धलेस्साहि परिणदा सुद्धा ।

रुद्धे पुण चत्ता धम्मे सुक्के य सजुत्ता ॥८॥

उग्गहहावायाधारणगुणसपदाहि सजुत्ता ।

सुत्तत्थभावणाए भावियमाणहि वदामि ॥ ९ ॥

तुम्ह गुणगणसथुदि अजाणमाणेण जा मया वुत्तो ।

देउ मम बोहिलाह गुरुभत्तिजुदत्थओ णिच्च १०

जो आय १२श, पितृवंश कुल और मातृवश जानि इन नीनों
 स शुद्ध हैं तथा विशुद्ध मन, विशुद्ध ध्यान और विशुद्ध काय में
 संयुक्त हैं ऐसे आचार्य का चरण स्पर्श मेरे लिए नित्य मंगल
 रूप है ॥१॥

जा आगम और हेतुआसे चांदादि पन्थों को जानकर
 स्वमत और परमत का विचार करने वाले हैं, जिन वचन में

प्रतिपादित अर्थ के समर्थन में और मन्वानुरूपसे विनय कराने में अन्धी तरह समर्थ हैं ॥२॥

जो साधु धाल हैं, बड़े हैं, धूटे हैं, शिक्त हैं, ग्लान हैं, स्वविर हैं, तपस्वी हैं, तथा दुःखाल हैं, उन सब का उस रूप जानना मजा सम्भाग में प्रयताने वाले हैं ॥३॥

जा श्रुत, समिति और गुणित सयुक्त हैं और अथ वना को गुणित के सार्ग में स्थापक है, उपाध्याय के पञ्चस गुणा के निनय हैं तथा साधुआ के अट्टाइम गुणा से भी सयुक्त है ॥४॥

आशय वमा में युक्त हैं इस लिए प्रथ्याके समान हैं, निर्मल भाव वाले हैं इसलिये स्वच्छ चलने मट्टरा हैं, कर्म रूप इन्धन का दहन करने वाले हैं इसलिये अग्नि के समान हैं निरपरिमही हैं इमनिये वायु जैसे हैं ॥५॥

आकाश के समान निरूपलेप है (इसलिये आकाश मरीखे में) के गुणिया में श्रेष्ठ आचाय मागर के समान लोभ रहित हैं। इस प्रकार के गुणों के निलय (स्थान) आचार्यों के चरणा को शुद्ध मजा हीपर प्रणाम करता है ॥६॥

भय वन में बार बार भ्रमण करने वाले भय जीवाने आपक प्रसाद से निर्वाण का मार्ग पाया है ॥७॥

जो कृष्णादि अशुभ लेश्याआ में रहित हैं जो पीतारि, शुभ लेश्याओं से परिणत हैं अत एव शुद्ध हैं। ससार के फारण रीति और आर्त्ता ध्याना में त्यस्त है तथा भाव के हेतु धर्मध्यान और शुक्लध्यान में लीन हैं ॥८॥

जा श्रुतार्थ भावना के आविर्भावक अरुमह, इहा, अवाय और धारणा गुण रूप भवदा से सयुक्त हैं उन आचार्यों की वन्दना करता है ॥९॥

हे भगवन् आचार्य ! आपके गुणों की स्तुति मुझे अज्ञात मान (अज्ञ) ने जो की है वह गुरु भक्ति से युक्त स्तुति मुझे प्रति दिन मोधिलाभ देवे ॥१०॥

शुद्धालोचना—

इच्छामि भते । पक्षिम्यम् आलोचेत्, पण्णर-
सण्ह दिवसाण पण्णरसण्ह राईण अग्निभतरदो पच्चविहो
आयारो णाणायारो दसणायारो तवायारो वीरियायारो
चरित्तायारो चेदि ।

हे भगवन् ! पञ्चम में या दिन गणना से पन्द्रह दिन और
पन्द्रह रात्रि के भीतर ज्ञानाचार, दर्शनाचार, तप आचार, वीर्या
चार और चारित्राचार इस प्रकार पाच प्रकार के आचार में
मेरे जो अतिचार समब हुआ है उसकी आलोचना करना
चाहता हूँ ।

इच्छामि भते । चउमासिम्मि आलोचेत्, चउण्ह
मासाण अट्ठण्ह पक्खाण्ह वासुत्तरसयदिवसाण वीसुत्त-
रसयरईण अग्निभतरदो पच्चविहो आयारो णाणायारो
दसणायारो तवायारो वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।

हे भगवन् आचार्य ! इन चार महीना : म या आठ पक्ष,
एक-सौ बीस दिन और, एक सौ बीस रात्रि के भीतर ज्ञानाचार,
दर्शनाचार, तप आचार, वीर्याचार और चारित्राचार इसप्रकार
पाच प्रकार के आचार में जो अतिचार (दाप) समब हुआ है
उसको आलोचना करता हूँ ।

इच्छामि भते । सवच्छरिय आलोचेत्, वारसण्ह
मासाण चठवीसण्ह पक्खाण तिण्णद्धावट्टिसयदि-
वसाण तिण्णद्धावट्टिसयरईण अग्निभतरदो पच्चविहो
आयारो णाणायारो दसणायारो तवायारो

हे भगवन् आचार्य ! सांवत्सारिक या माम, पक्ष, त्रि रात्रि गणना की अपक्षा बारह मांस, चौथोस पक्ष, तीन सौ छयासठ दिन और तीन सौ छयासठ रात्रि मे आभ्यंतर ज्ञानाचार, दर्श ज्ञाचार, तप आचार, धार्याचार और चारित्र्याचार इस प्रकार पांच प्रकार के आचारम जो मेरे अतिचार मभय हुआ है, उनकी आलोचना करता हूँ ।

तत्थ एणायारो वाले विणए उवहाणे बहुमाणे तहेव एण्हवणे, वजग अस्य तदुभये चेदि । तत्थ एणायारो अट्टविहो परिहाविदो से अवसरहीण वा सरहीण वा वंजणहीण वा पदहीण वा अत्थहीण वा गयहीण वा थएसु वा अट्टकयाणेषु वा अणियोगेषु वा अणियोगदारेसु वा अकाले सज्भाओ पदो वा वारिदो वा कीरतो वा समणमणिएदो काले वा परिहाविदो अस्थावारिद वा मिच्छामेलिद वा आमेलिद वा मेलिद वा अण्णहादिण्ण अण्णहापडिच्छद धावासएसु पारहाणदाए तस्स मिच्छ मे दुक्कड ॥१॥

उन पांच प्रकार के आचारों में पहला जो ज्ञानाचार है वह आठ प्रकार का है पाल, विनय, उपधान, यहमान, अनिहव, व्यजन शुद्ध, अर्थ शुद्ध और उभय शुद्ध । उसका परिहापन किया, खडन किया । स्तयना, स्तुतियों, अर्थोत्थानों, अनुयोग, और अनुयोग द्वारों में स्वरहीन, ध्वनिहीन, पदहीन, अर्थ हान, ग्रन्थहीन पठन पाठन आदि परके उक्त आठ प्रकारके ज्ञानाचार का परिहापन किया, अस्वाध्याय काल में आगम का स्वाध्याय किया, कराया, स्वयं करते हुए को अच्छा माना, स्वाध्याय कालमें स्वाध्याय नहीं किया, बिना विचारों भतका जल्दी जल्दी

चञ्चारणु विया, किमी की किमी अविद्यमान के साथ पदन्द्रे-
रहित मिलाया, शास्त्र के किमा अर्थ 'अवयव' को किमी अन्य
अवयवमे जोड़ कर पना, उच्चोचार—युक्त पाठ को नीच स्वर
वाले पाठ के साथ और नाचपनि-युक्त पाठ को उच्चपनि युक्त
पाठ के साथ जोड़कर पना अन्यथा कदा, अन्यथा प्रहण किया
अर्थान् अथवा सुना छह आवश्यकता की परिहीनता करके
अर्थान् उनका उनके कालानुसार अनुष्ठान न करके परिहोपन
किया, अष्टविध ज्ञानाचारका परिहापन ? परित्याग किया । उस
ज्ञानाचार-परिहापन मन्व-गी मेरा दुष्टत मिथ्या है ॥१॥

दमगायारो अट्टविहो-शिस्सन्धिय शिक्कसिय
शिक्कविदिगिच्छा अमूठदिद्वीय, उवगूहण ठिदिक्करण
वच्छन पहावगा चेदि ।

अट्टविहो परिहाविदो सकाए कखाए विदिगिच्छाए
अण्णदिद्विपसमगादाए परपाखडपसमगादाए अणायद-
गासेवगादाए अवच्छन्नदाए अप्पहावगादाए तस्म
मिच्छा मे दुवक्क ॥२॥

शानाचार नि शक्ति, निशक्ति निर्विभक्तिमत्य, अमूठ
दृष्टिक्व उपगूहन, स्थितीकरण, धामत्य और प्रभावना इम
प्रकार आठ प्रकारका है । उमका शका, पांसा, विरिपिस्ता,
अयदृष्टि प्रशमा, परपाखड प्रशसा अनायतन सेरा, अवा
स्मत्य और अप्रभावना न करके जा मैंन उमका परिहापन किया
है । उम शानाचार-परिहापन मन्व-गी मेरा दुष्टत मिथ्या
है ॥१॥

तवयारा वारराविहो, अदमतगे छविहो बाहिरो
अविहो चेदि, तत्थ बाहिरो अणसण

हे भगवन् आचार्य ! सायत्मारव या माम, पक्ष, त्रि रात्रि गणना को अपेक्षा बारह मास चौधौस पक्ष, तीन सौ छपामठ दिन और तीन-भौ छपामठ रात्रि के आभ्यन्तर ज्ञानाचार, श्रान्नाचार, तप आचार, गार्गाचार और चारित्र्याचार इस प्रकार पांच प्रकार के आचारम को मेरे अतिचार मभव हुआ है, उसकी आलोचना करता हूँ ।

तत्थ एणायारो काले विणए उवहाणे बहुमाणे तहेव णिण्हवणे, वजग अत्थ तदुभये चेदि । तत्थ एणायारो अट्टविहो परिहाविदो से अक्खरहीण वा सरहीण वा वजणहीण वा पदहीण वा अत्थहीण वा गथहीण वा थएसु वा अट्टक्वाणेषु वा अणयोगेसु वा अणियोगदारेसु वा अकाले सज्जाओ कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणमण्णदो काले वा परिहाविदो अत्थाकारिद वा मिच्छामेलिद वा आमेलिद वा मेलिद वा अण्णहादिण्ण अण्णहापविच्छद आवासएसु परिहाणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्खड ॥१॥

उन पांच प्रकार के आचारों में पहला जो ज्ञानाचार है वह आठ प्रकार का है काल, विनय, उपधान, बहुमान, अनिहव, व्यजन शुद्ध, अर्थ शुद्ध और उभय शुद्ध । उसका परिहापन किया, खडन किया । स्तवनों, स्तुतियां, अथोप्यानों, अनुयोग, और अनुयोग द्वारों में स्वरहीन, ध्यंन हीन, पदहीन, अथ दान मन्थ-हीन पठन पाठन आदि करके उक्त आठ प्रकारके ज्ञानाचार का परिहापन किया, अस्वाध्याय काल में, आगम का स्वाध्याय किया, कराया, स्वयं करते, हुए को अच्छा माना, स्वाध्याय कालमें स्वाध्याय नहीं किया, बिना विचारों अतकी जल्दी जल्दी

चन्चारण किया किमी को किमी अधिकमान के साथ पदच्छद-
 रहित मिलाया, गारप्र के किमा अन्य 'अवयव' को किमी अन्य
 अवयवमे जोड़ कर पत्ता, उच्चोचार—युक्त पाठ को नीच स्तर
 वाले पाठ के साथ योग नाच'बनि-युक्त पाठ को उच्चध्वनि युक्त
 पाठ के साथ जोड़कर पत्ता अन्यथा फटा, अन्यथा महण किया
 अधोत् अथवा सुना छद् आक्यस्य की परिहोनता करके
 अधोत् उनका उनके कालानुसार अनुष्ठान न करके परिहोपन
 किया, अष्टविंश ज्ञानाचारका परिहापन ? परित्याग किया । उस
 ज्ञानाचार-परिहापन सम्बन्धी मेरा दुष्कृत मिथ्या है ॥१॥

दसगायारा अष्टविहो-णिसम्भिय णिकवस्विय
 णिविदिगिच्छा भ्रमूढदिट्टीय, उयगूहण ठिदिक्करण
 वच्छन पहावणा चेदि ।

अष्टविहा परिहाविदो सकाए क्वाए विदिगिच्छाए
 अणदिट्टिपसमणदाए परपाखडपसमणदाए अणायद-
 णसेवणदाए अवच्छन्नदाए अप्पहावणदाए तम्म
 मिच्छा मे दुक्क ॥२॥

शोनाचार नि शक्ति, नि शक्ति निर्विकल्मत्व, अमू
 दृष्टिक्व, उपगूहन, रितीकरण, वात्मल्य और प्रभावना इम
 प्रकार आठ प्रकारका है । जमका शंका वाधा, विकिरिता,
 अयद्यपि प्रशमा, परपाखंड प्रशसा अनायतन सेवा, अवा
 समल्य और अप्रभावना न करके जो मैंत उमरा परिहापन किया
 है । उम शोनाचार-परिहापन सम्बन्धी मेरा दुष्कृत मिथ्या
 है ॥३॥

तवयारी वारसविहो, भ्रमभरणे स्वविहो वाहिरी
 अष्टविहो । चेदि, तस्य वाहिरी अणसण आमोदरियं

वित्तिपरिसखा रसपरिच्छाओ सरीरपरिच्छाओ विवि-
त्तसयणासण चे, तस्य अद्वभतरो पायच्छित्त त्रिणामो
वेज्जावच्च सज्जमाओ भाण विउस्तगो चेदि । अद्वभ-
तर वाहिर वारसविह तवोकम्म एण कद णिसण्णेण
पडिक्कत तस्स मिच्छा मे दुक्कड ।

तप आचार चारु प्रकार का है । छह प्रकार का आभ्यंतर
तप आचार और छह प्रकारका प्रायतप आचार । उसमें से बाह्य
तप आचार अनशन, अन्नमौर्त्य, वृत्ति परित्याग, रस परि-
त्याग, शरीर परित्याग, और विविक्त शय्यासन इस प्रकार छह
प्रकार का है । और आभ्यंतर तप आचार प्रायश्चित्त, विनय,
वैयापृत्य स्वाध्याय ध्यान और युत्सर्ग इस प्रकार छह प्रकार
का है । यह दोनों प्रकार का वाह्याभ्यन्तर तप नहीं किया ।
परीषद आदि से पीड़ित हुएर द्वाइ निया उस चारु प्रकार के
तप आचार के परिहापन सम्बन्धी मरा दुष्टत मिथ्या हो ॥३॥

वीरियायारो पचविहो परिहापिदो वग्वीरियप-
रिक्कमेण जहुत्तमाणेण बलेण वीरिणेण परिक्कमेण
णिगूहिंय तवोकम्म एण कय णिसण्णेण पडिक्कतं
तस्स मिच्छा मे दुक्कड ॥४॥

पाच प्रकार के वीर्योपार का परिहापन किया । वरवीय
पराक्रम से यथोक्तमात्रसे, शारीरिक बलसे आत्मशक्ति में एव
परिक्रम से तपस्चरण किया जाता है । उक्त पाच प्रकार के
वीर्यापार का प्रकट करने वाले मुक्ति द्वारा जब तप किया
जाता है तब पाच प्रकार का वीर्योपार अनुष्ठित (पालित) होता
और जब परिषद आदिसे पीड़ित होकर उस प्रकार से तपका
जाता है किन्तु परीषद आदि से पीड़ित

होकर तप करना छोड़ दिया जाता है, तब तप करने में सामर्थ्य के होते हुए भी वह धीरे-धीरे निगूहित होता है, अप्रकट होनाता है। इस प्रकार पाच प्रकार का धीर्याचार परिहासित होता है। इम-लिए धीर्याहापन सम्बन्धी मेरा दुष्कृत मिथ्या हो ॥५॥

इच्छामि भते । चरित्तायारो तेरहविहो परिहा-
विदो पच महव्वदाणि पचसमिदीओ तिगुत्तोओ चेदि ।
तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादाओ वेरमण से पुढ-
विकाइया जीवा असखेज्जासखेज्जा, आउकाइया जीवा
असखेज्जासखेज्जा, तेउकाइया जीवा असखेज्जासखेज्जा
वाउकाइया जीवा असखेज्जासखेज्जा, वणप्फदिकाइया
जीवा अणताणता हरिया, वीया, अ कुरा, छिण्णा,
भिण्णा, एदेसि उदावण परिदावण विराहण उवघाओ
कओ वा कारिओ वा कीरओ वा समणुमण्णिओ तस्स
मिच्छा मे दुक्कड ।

पाच महाव्रत पांच संमिति और तीन गुणित इस प्रकार मिल कर तेरह प्रकार का चारित्राचार होता है वह मुझसे खडित हुआ है। तेरह प्रकार के चारित्राचार में पहला प्राणातिपात से विरमण नामक महाव्रत है। पाच इन्द्रिय प्राण, तीन धर्म प्राण, एक स्वामोच्छ्वास और एक आयुप्राण : इस प्रकार दश प्राण हैं। इन यथासंभव दश प्राणों का धारक एकन्द्रियाणि जीवों के भेद में पाच प्रकार के जीव हैं। उनमें से प्रथम एकन्द्रिय जीवोंका प्ररूपण करत हुए कहत हैं—

अमग्यातामग्यात पृथ्वीकायिक जाव, असप्यातासप्यात जल कायिक जीव, असग्यातासग्यात अग्निनायिक जीव, अस-

बीज और प्रकृति रूप अनन्तान्त घनस्पर्शिकायिक पात्र ग्यावर जीव हैं उनका उत्पादन, परितापन, विराधन और उपघात मैन स्वय किया, अन्यसे कराया और स्वयं करत हुआ अन्य प्रकृति माना गया, उन प्रकृति कायिकाणि मरेन्द्रिय जीवों के उत्पादन आदिसम्बन्धी मेरा दुष्कृत मिथ्या हो ।

वेइदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा कुक्खिक्खि किम्म-सख-खुल्लय-वराडय-अक्खं रिट्ठ गडवाल सवुक्क सिप्पि-पुलविकाइया, तेहि उदावण परिदावण विराहण उवघादा पदो वा कारिदो वा कीरतो वा ममणुमणिणदो तस्स मिच्छ मे दुक्कड ।

आगे ना इन्द्रिय जीवा का निरूपण करते हुए कहते हैं- ना इन्द्रिय जीव असंग्यातासंख्यात हैं । वे हैं-जुक्ति, कृमि, शल, उल्लस, पराण, अक्ष, रिष्ट, गडवाल, मनुष्य, माप मुलुकि, जौह इत्यादि और भी । उन जुक्ति, कृमि, प्रभृति ना इन्द्रिय जीवों का उत्पादन, परितापन, विराधन और उपघात मैन स्वय किया है, अन्यसे कराया है और स्वयं करत हुए अन्य का अतु मोक्षना की है । उन जोइन्द्रिय जीवा के 'उत्पादनादि-सम्बन्धी मेरा दुष्कृत मिथ्या हो ।

११ तेइदिया जीवा असखेज्जासखेज्जा कु धु-देहिय-विद्धिय-गोभिद-गोज्जव-मक्खुण-पिपीलियाइया, तेसि उदावण परिदावण विराहण उवघादो पदो वा कारिदो वा कीरतो वा सणुमणिणदो तस्स मिच्छ मे दुक्कड ।

अब तान, इन्द्रिय जीवों का प्रचार प्रतिपादन कर उनके उप-संख्यावृत्ति का प्रतिपादन करत हुए, कहते हैं-तीन

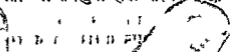
इन्द्रिय जीव अमर्यातामग्यात हैं। ये हैं—कुशु, देहिय, विच्छु, गोमि, गात्री मावड, (खमल) पिपालिका इत्यादि और भा। उन कुशु आदि नेन्द्रिय जीवोंका उत्पादन परितापन विराधन उपपात में स्वय किया है, अन्य में कराया है, और स्वय करते हुए अन्य की अनुमोना की है, नेन्द्रिय जीवोंके उम उत्पादन आदि में उपानित मेरा दुष्टत मिथ्या होवे।

चत्तरिदिया बीजा अससेज्जासखेज्जा दसमसय-पयग कीड-भमर-महुयर गोमच्छिया तसि उदावण परिदावण विराहण उवघादो कदो वा कारिदो व कीरतो वा समणुमण्णदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड।

। अथ चत्तरिन्द्रिय जीवों का प्रकार लिखाकर उनमें उत्पादन आदि से व्यावृत्ति दिखाने हुए कहते हैं। चौन्द्रिय जीव, अर्त ग्यातामग्यात हैं। वे हैं—

डांम, मच्छर, मक्खी, पतंग, कीट भ्रमर मधुमक्खी, गोम कला इत्यादि और भी अनेक। उनका उत्पादन, परितापन, विराधन उपपात में स्वय किया है, अन्यन कराया है, स्वय करते हुए अन्य की अनुमोना की है। चौन्द्रिय जीवोंके उम उत्पादन आदि से उत्पन्न हुआ मेरा दुष्टत मिथ्या होवे।

पचिदिया जीवा अससेज्जासखेज्जा अहाइया-पोदाइया--जराइया--ससेदिमा--सम्मुच्छिमा--उवभेदिमा उववादिमा। अवि चत्तरासोदिजोणीपमुहसदसहस्सेसु, एदेसि उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णदो तस्स मिच्छा मे ३



अथ पंचेन्द्रिय जीवों का प्रकार प्ररूपण कर उनके-उपपा-
तादि से विरति प्ररूपण करत हुए कहते हैं ; पंचेन्द्रिय जीव अस्तं
ख्यातासख्यात हैं । वे हैं—अंदायिक, पोतायिक, जरायिक रसा-
यिक, संख्येन्मि, सम्भूर्द्धिम, उद्भेदिम उपपादिम इत्यादि और भी
अनेक चौरासी लाख योनि प्रमुख पंचेन्द्रिय जीव । उन अंदायि-
कादि पंचेन्द्रिय जीवों का उत्तापन, परितापन, विराधन उपपात
मेंने स्वयं किया, अन्यसे कराया और स्वयं करते अन्यकी अनु-
मोदना की । पंचेन्द्रिय जीवों के उम उत्तापना आदि से उपा-
र्जित हुआ मेरा दुष्कृत मिथ्या होवे ।

वदसमिदिदियरोधो लोचो अवासयमचलमण्हाण ।

खिदिसयणमदतवण ठिदिभोयणमेयभक्त च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा, ममणाण जिणवरोह पणत्ता ।

एत्थ पमादकदादो अइत्तारादो णियतो ह ॥२॥

छेदोवट्टावण होदु मज्झ ।

प्रत, समिति, इन्द्रियनिराध, भालोत्पाटन, आवश्यक, अचे-
लक, स्नान त्याग गितिशयन अदन्तवन, खड़े आहार और
दिनम एक बार भोजन, वे श्रमणा क मूल गुण हैं, जो जिनेश्वरके
द्वारा सब से प्रथम प्रणीत हैं । इन मूलगुणा म प्रमाद-वरा किये
गये अपराध से म निवृत्त होता है । जीवों का निराकरण हो
शुभ प्रती की मेरे उपस्थापना होवे ।

सुल्लफालाचनासद्धिता सुल्लफाचार्यभक्ति —

सवातिचारविशुद्धयर्थं क्षुल्लकालोचनाचार्यभक्ति-
पायोत्सर्गं वरोम्यहम् ।

सब अतिचारा की विशुद्धि के लिए सुल्लभ आलोचना और
सम्बन्धी पायोत्सर्ग में करता हूँ—

(इत्युच्चाय पूर्ववद्दृढकादिवं त्रिधाय "प्राज्ञ प्राप्तसमस्त-
शास्त्रहृदय" इत्यादिर्था "श्रुतजलधोयादि मोक्षमार्गोपदेशका '
इत्येवमतिक्रान्तसमूरय सयता पठेयु)

(इस प्रकार उच्चारण कर पूजयन् दृढादिक पदकर "प्राज्ञ
प्राप्तसमस्तशास्त्रहृदय" इमे आदि लेकर श्रुत जलधि इयादि
मोक्षमार्गोपदेशक पयन्त आचार्य भक्ति आचार्य-भक्ति सन मयत
पठे) यह इम प्रकार—

प्राज्ञ प्राप्तसमस्तशास्त्रहृदय प्रव्यक्तलोकस्थिति,
प्रास्ताश प्रतिभापर प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तर ।

प्राय प्रदनसह प्रभु परमनोहारी परानिन्दया,
ब्रूयाद्धमकथा गणी गुणनिधि प्रस्पष्टमिष्टाक्षर ॥
श्रुतमविकल शुद्धा श्रुति परप्रतिबोधने,

परिणातिरूद्योगो मागप्रवतनसद्विधौ ।
बुधनुनिरनुत्सेको लोकज्ञता मृदुताऽस्पृहा,
यतिपतिगुणा यन्मिन्नये च सोऽस्तु गुरु सताम् ॥
श्रुतजलधिपारगेम्य स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्य ।

सुचरिततपोनिधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्य ३
छत्तीसगुणसमगे पञ्चविहाचारकरणासदग्निसे ।

सिस्ताणुगहकुसले धम्माइरिए सदा बदे ॥ ४ ॥
गुरुभक्तिसंजमेण य तरति ससारसायर धोरं ।

द्विष्णति अट्टकम्म जम्मणमरण ण पावेति ॥५॥
ये नित्य व्रतमत्रहोमनिरता ध्यानाग्निहोत्राकुला,

पट्कर्माभिरतास्तपोधनधना साधुक्रियासाधव ।
 शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्च द्राक्तेजोधिया,
 मोक्षद्वारकपाटपाटनभटा प्रीणतुर्मा साधव ६
 गुरव पातु नो नित्य ज्ञानदशननायका ।

चारित्र्याणवगभीरा मोक्षमार्गोपदेशका ॥ ७ ॥

जा प्राज्ञ बुद्धिमान्, हैं, जिसन सम्पूर्ण ज्ञान का रहस्य प्राप्त किया है, जिसके समस्त लक्ष्मी स्थिति स्पष्ट है, जिसके लौकिक आशा नष्ट हो गई हैं, जो प्रतिभाशाला हैं, फाय भावस रहित उपगम भाव जाला हैं, प्रश्न-वक्ता के प्रश्नस पहले-हा जा ज्ञान उत्तर मात्र रखता है जो प्रश्ना का महत्त्व करने वाला है समर्थ हैं पर मन का हरण करने वाला है, पराङ् मित्ता से रक्षित है, गुण निर्विह जिम्मे वचन स्पष्ट और मधुर हैं, ऐसा गणी आचार्य धर्मकथा करने वाला हाता है । अथवा ऐसा गणी धर्म कथा कह ॥१॥

जिमका धृत (शास्त्र ज्ञान) नि सद्बह परिपूर्ण है, जिमकी मन-ध्वन और कायना प्रवृत्ति शुद्ध निर्दिष्ट है और जो बोध कराने में जिसका परिणति है, जो स मार्ग के प्रवृत्तान का प्रशस्त विप्रिम जिमके भारी उपाग ह जो अपने स बड़ा का जिन्य करने जाला है अहम्भार रहित ह जिममें लायकता है मृदुता (धोमलता) है, जो स्याम रहित है जिममें और भी अन्य अनेक यतिपति के गुण ह यह मन्त्रन पुरुषा से गुरु हाता है ॥ ॥

जो अतन्ममद्रक पाश्चात्मी हैं, स्वमत और परमत के विचार करने में चतुर ह, सचारित्र और अपने विधि हैं गुणों में बड़ हैं, ऐसे गुरुओं को नमस्कार हो ॥३॥
 जो छत्तीस गुणों में परिपूर्ण हैं, पाँच प्रकार के आचार के

करन में सन्दर्शी हैं, शिष्यों का अनुग्रह करने में कुशल हैं, ऐसे धर्माचार्यों को सदा बटना परता है ॥१॥

। जो गुरुभक्ति और मयम से धार ससार-सागर में तिरते हैं वे आठ कर्माका छेदन करते हैं और जन्म मरण का कभी प्राप्त नहीं होते ।

जो नित्य व्रत मंत्र क होम में निरत हैं, ध्यान रूप अग्निमें हवन करने में आतुल हैं, आवश्यकानि षट्-क्रियाओं में रत हैं, तप रूप धनके धनी हैं, साधुओं की क्रिया क साधन परन वाले हैं शाल ही जिनके प्राप्तरण वस्त्र हैं, गुण ही जिनके प्रहरण (शस्त्र) हैं, चन्द्र और सूर्य क तेजमें भी जिनका तन अधिक हैं, मोक्ष के द्वार के कपाटों के उद्घाटन करने में भट हैं, ऐसे साधु आचार्य मेरा मरक्षण करें ॥२॥

चाग्रि रूप समुद्रके समान गभीर, मोक्षमार्ग के उपदेशक ज्ञान और दर्शन के गायक मेरे गुरु आचार्य हमारी नित्य रक्षा करें ॥३॥

आलोचना

इच्छामि भते । आइरियभक्तिकाउत्सङ्गो कओ तस्मालोचेउ, सम्मणाण सम्मदसण-सम्मचारित्तजुत्ताण पचविहाचागण जायरियाण, आयारादिसुदणाणो-वदेसियाण उज्जभायाण, ति यणगुणपालणरयाण सच्चसाहूण णिच्चकाल अचेमि पूजेमि वदामि गुम-
मामि दुक्खवसओ वम्मवसओ वाहिलाहो सुगइमण समाहिरण जिनगुणमपत्ति होउ मज्झ ।

वदसमिदियरोमो लोचो अवासयमचेलमण्हाण ।

खिदिसयणमदततः ठिदिभोयणमेयभक्त च ॥१॥
एद खलु मूलगुणा समग्राण जिग्वरेह पणत्ता ।

एत्वपमादकदादो अइचारादो गियत्ता ह ॥२॥

छेदोचट्टावणं होहु मज्ज ।

ह भगवन् ! आ राय भक्ति मन्त्र धा कायात्सग मेंन क्रिया
ससेको आलोचना करना चाहता हूँ । सम्यग्ज्ञान, मन्त्रदर्शन
और सम्यग्चारित्र म यत् पात्र प्रवार के आचार के पालने वाले
आचार्या वा आचार्या भुतज्ञान व उपश्रय उपाध्याया धी
और तान रत्न रूप गुण व पालन म अनुरक्त मर्त्य माधुओं का
नित्यमाल प्रचा करता है पूजा करता व व्रता करता है और
नमस्कार पगता है, दु ख वी लय हा, क्रम वा चय हा, बाधि
का लाभ हा, मुगति म गमन हा ममादि-पूर्व मरण और
चित्त के वैभवादि गुणा की सम्प्राप्ति मर हो ।

उक्त गता गाथाया वा ग्रथ उपर कट वार प्राचुता है ।

समाधिभक्ति —

सवातिचारियिगुद्ध्यथ सिद्ध-चाग्नि प्रतिफलण-
निष्ठित-वरणधोर शाति तचतुर्विंशतिवार्यं इह-चारित्र्या-
लोचनाचार्ये—वृहटालावाचाय— गुलनरातोचनाचार्य-
भक्ति-कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादिदापत्रिगुद्ध्यर्थं समाधि-
भवनी नायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(अत्युचाय पूर्वयह इनादि, कृत्वा ' गाम्नाभ्यासो निनपति
इत्यादीन्प्रार्थनां ममूरय सायन पठेयु) ।

मय अतिचारों की विशुद्धि के लिए सिद्धभक्ति, चारित्र-भक्ति प्रतिग्रमण भक्ति, निष्ठित-करण धार भक्ति, शान्ति चतुर्विंशति तायकर भक्ति चारित्रालोचना सहित बृहद्गोचार्य-भक्ति बृहद् आलाचना सहित मध्याचाय भक्ति श्रीर सुन्दरकालाभना मन्त्रि तुल्लकाचाय भक्ति करके उनमें हानाधिकरवादि दापो की त्रिशुक्ति लिए, समाधि भक्ति सम्बन्धी जायात्मग में करता है ।

(पेमा पुन्यचारण कर पहल का तरह दृढक आत्रि करक 'शास्त्राभ्यासो जिनपति' इत्यादि दृष्ट प्रार्थना सूत्र सहित माधु पते)

अथेष्टप्रार्थना—प्रथम करण त्रय नम

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुति सगति मवेदायै,

-द्वृत्ताना गुणगणकथा दोषवदे च मोनम ।
मर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे,

मग्गद्यता मम भवभवे यावदेतेऽपवग ॥ १ ॥

तव पादो मम हृदये मम हृदये तव पदद्वये लीन ।

निष्ठनु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्ति ०
अखरपथथहीण मत्ताहीण च ज मए भणिय ।

त खमहु एणादेव ! य मज्जवि दुक्खवक्खय कुणउ ३

इतथा अथ पहले आतुवा है

आलोचना

दृष्टमि भत ! समाहिभक्तिकाउम्मगा वजा
नम्मालोचउ, रयणत्तयपरुवपरमण्णज्जाणलवसगम

